ISSN 2321-4945

UGC CARE Listed Research Journal

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 72 ● अंक : 02, 03 ● मई, जून-2022

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के
अनमोल प्रकाशन

➡ नामघोषा 100.00

➡ दादी की कहानियाँ 60.00

➡ आधुनिक असमीया कविता - समीक्षात्मक अध्ययन 30.00

➡ पूर्वोत्तर भारत के क्रांतिकारी 100.00

➡ हिंदी-असमीया शब्दकोश 340.00

उपर्युक्त पुस्तकों के अलावा समिति की परीक्षा की पाठ्यपुस्तक समेत विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय के हिंदी पाठ्यक्रमों की सभी पुस्तकें समिति में उपलब्ध हैं।

:: संपर्क ::

पुस्तक व्यवस्थापक

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-32

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका

UGC CARE Listed Research Journal

वर्ष : 72 **अंक : 02, 03** **मई, जून-2022**

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया

मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन

हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

दिल्ली-1

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद

प्रभारी साहित्य सचिव

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32
फोन : 9101541395, 9101541380
ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सदस्यता शुल्क :
प्रति अंक : रु.50/- (व्यक्तिगत)
प्रति अंक : रु.100/- (संस्थागत)

अलंकरण : रति कांत कलिता

आवरण पृष्ठ : असम की एक नदी में सुप्रभात का मनोरम दृश्य

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा ग्राफिक्स, गुवाहाटी-781003 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत

कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

गुवाहाटी (असम)

प्रो. आर.एस. सर्राजु

सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय

तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा

कुलसचिव, उच्च शिक्षा शोध संस्थान

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा

टी. नगर, चेन्नई (तमिलनाडु)

प्रो. दीपक प्रकाश त्यागी

हिंदी विभाग

दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय

गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

प्रो. दिलीप कुमार मेधि

प्रोफेसर, हिंदी विभाग

गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन

पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग

कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा

पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग

गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

अनुक्रम

हिंदी विभाग

- संपादकीय — 5
- स्त्री विमर्श की समकालीन चुनौतियाँ — ✍ डॉ. ज्योति कौर — 6
- हरिशंकर परसाई के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना — ✍ डॉ. अखिल चंद्र कलिता — 10
- 1857 की क्रांति में भाग लेने वाली मुस्लिम महिलाएँ एवं उनका योगदान — ✍ डॉ. आशा यादव, ✍ सविता — 15
- स्त्रीभाषा की दृष्टि से 'आवां' उपन्यास का अध्ययन — ✍ उर्मिला भगत — 20
- यशपाल का व्यक्तित्व एवं कृतित्व : एक अध्ययन — ✍ डॉ. पल्लबी दास — 25
- स्त्री चेतना के धरातल पर मन्नू भंडारी की कहानियाँ : एक विश्लेषण — ✍ डॉ. नूरजहान रहमातुल्लाह — 29
- असमीया लोक-गीत का विशिष्ट अंग – लोरी — ✍ करबी भूयाँ — 33
- आचार्य रामचंद्र शुक्ल का हिंदी आलोचना में योगदान — ✍ दीप्ति यादव — 37
- 'भारत रत्न' लता मंगेशकर — ✍ डॉ. चंदना शर्मा — 44
- विराट व्यक्तित्व के धनी गुरुवर नंद किशोर सिंह — ✍ डॉ. नवकांत शर्मा — 48
- पर्दा (कहानी) — ✍ यशपाल — 53
- मेस्तर की लली (कविता) — ✍ डॉ. प्रदीप कुमार दूबे — 58
- अभी भी प्यार करता हूँ प्रिय (कविता) — ✍ पंकज मिश्रा — 59

অসমীয়া বিভাগ

- ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতত অসমীয়া গ্ৰাম্য সমাজৰ চিত্ৰ — ✍ ড° স্বপ্নালী দাস — 60
- বিহুগীতত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক সমল — ✍ ড° পল্লৱিকা শৰ্মা — 65
- গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা আৰু পঢ়ুৱৈ সমাজ ঃ সম্ভাৱনা আৰু প্ৰত্যাহ্বান — ✍ দীপাঙ্কৰ শইকীয়া — 73
- যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ কবিতা ঃ এক চমু আলোচনা — ✍ তৰুলতা বৰুৱা — 77
- স্বদেশী অৰ্থনীতি আৰু ইয়াৰ ব্যৱহাৰিক গুৰুত্ব — ✍ ড° কিংশুক চক্ৰৱৰ্তী — 84

संपादकीय

रवींद्रनाथ टैगोर जी का मानवतावादी दृष्टिकोण

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' का मई व जून का संयुक्तांक आपको सौंपते हुए प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। मई में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर का जन्मदिन भी पड़ता है। वे भारत के ऐसे आधुनिक लेखक हैं, जिनको सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। दूसरे भाषाई समाजों में बहुत ही कम लेखक इस तरह से स्वीकृत हैं। टैगोर की स्वीकृति का अंदाजा उनकी जयंती के अवसर पर देखा जा सकता है। बांग्ला समाज को आधुनिक बनाने में टैगोर का महत्वपूर्ण योगदान है।

उनकी आधुनिकता के केंद्र में मनुष्य है। मनुष्य को प्रतिष्ठित करना ही उनकी मुख्य चिंता रही है। उन्होंने पूँजीवाद को मनुष्य का मुख्य शत्रु माना है। मनुष्य के प्रति अगाध प्रेम और आस्था के कारण ही टैगोर धर्म के संपर्क में व्यतिक्रम की सृष्टि करते हैं। मनुष्य की उन्नत अवस्था के संबंध में रवींद्रनाथ टैगोर की दृष्टि अत्यंत स्पष्ट रही है। उन्होंने लिखा है कि 'जीव-जंतु आहार मिलने पर जीवित रहते हैं और आघात लगने पर मर जाते हैं। जंतुओं ने इस तथ्य को बिना तर्क के स्वीकार कर लिया है, परंतु मनुष्य का स्वाभाविक लक्षण है स्वीकार न करना। जीव-जंतु स्वभाव से विद्रोही नहीं होते हैं, जबकि मनुष्य स्वभावतः विद्रोही होता है। बाहरी उपादानों या उपकरणों द्वारा भी जो कुछ घटित होता है, जिसमें उसका स्वयं हाथ नहीं होता, जिसमें उसकी भागीदारी भी नहीं होती है, ऐसी घटनाओं को भी मनुष्य चरम अवस्था के रूप में स्वीकार कर लेता है। इन्हीं कारणों से जीवन के इतिहास में मनुष्य आज भी गौरवमय पद का अधिकारी बना हुआ है।'' चाहे व्यक्ति हो या सामाजिक, मनुष्य का निरंतर आगे बढ़ना ही आधुनिकता है।

सन् 1929 में रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था - ''मेरे बारे में यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि राजनीति के संबंध में किसी निर्दिष्ट काल-विशेष में मेरी कभी कोई स्पष्ट धारणा नहीं बन पाई है। मेरे राजनीतिक विचार जीवनानुभव के साथ-साथ अनेक परिवर्तनों के बीच निर्मित हुए हैं। निस्संदेह इन समस्त परिवर्तनों की परंपरा में एक सूत्रात्मकता है और यही स्वाभाविक भी है।'' रवींद्रनाथ टैगोर की इस सूत्रात्मकता में मनुष्य मुक्ति की आकांक्षा तथा विश्व मानवता का प्रश्रय स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। रवींद्रनाथ टैगोर का विचार है कि एक दिन अपराजित मनुष्य अपनी जययात्रा के अभियान में समस्त बाधाओं का अतिक्रमण करके आगे बढ़ेगा तथा समस्त मानवीय मर्यादाओं की पुनः प्रतिष्ठा करेगा। रवींद्रनाथ में मानवता को सुरक्षित रखने की भावना मुख्य रही है। ❑

आधी आबादी

स्त्री विमर्श की समकालीन चुनौतियाँ

डॉ. ज्योति कौर

एसोसिएट प्रोफेसर
श्री गुरु गोविंद सिंह कॉलेज
ऑफ कॉमर्स
दिल्ली विश्वविद्यालय
ई-मेल :
jyotikaur@rediffmail.com
मो. 9871880038

सारांश :

किसी भी सभ्य समाज अथवा संस्कृति का मूल्यांकन सही तरीके से तभी किया जा सकता है, जब हम उस समाज अथवा संस्कृति में स्त्रियों की दशा का ठीक से अध्ययन करें। पुरुष सत्तात्मक समाज में स्त्रियों की दशा कभी भी ठीक नहीं रही। शुरुआती युग में भले ही स्थिति अच्छी रही हो, लेकिन बाद के युग में यह दिन-प्रतिदिन गर्त में जाती रही। लेकिन जब महिलाओं ने अपने हक और अधिकार की बातें करनी शुरू कीं तभी से इन्होंने एक नई बहस को जन्म दिया, जिसे स्त्री विमर्श/स्त्री आंदोलन और स्त्री अस्मिता नाम दिया गया। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक बराबरी के लिए संघर्ष करती स्त्री के पक्ष में न्याय के लिए किए गए प्रयास स्त्री मुक्ति के प्रयास हैं। स्त्री विषयक संदर्भों में पुरुष की भूमिका शोषक की रही है। पुरुष संस्कृति ने पितृसत्ता के माध्यम से पुरुष को अर्थसंपन्नता और स्वामित्व के अधिकार सौंपे हैं और स्त्री को मिली है सिर्फ अधीनता, अर्थ पर निर्भरता और दासता की भावना। पुरुष को यह व्यवस्था ताकतवर बनाती है और स्त्री को कमजोर, इसलिए स्त्री का संघर्ष पुरुष के साथ द्वंद्वात्मक स्थिति रखने में नहीं, वरन् पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करने में है तथा स्वावलंबी बनकर पुरुषों की बराबरी का हक पाना और पुरानी नियति को तोड़ फेंकना आधुनिक स्त्री का कर्तव्य है, क्योंकि प्राचीन काल से स्त्री इसी नियति का शिकार रही है।

बीज शब्द :

स्त्री, अधिकार, आधुनिकतावाद, स्त्री लेखन, कानून, महिला सशक्तिकरण।

भूमिका :

आधुनिकतावाद, उत्तर आधुनिकतावाद, भूमंडलीकरण और आर्थिक नव उदारवाद ने स्त्रियों को बड़े पैमाने पर प्रभावित किया है। यह प्रभाव जितना सकारात्मक था उतना ही उसके नकारात्मक परिणाम भी सामने लेकर आया। इंडिया टुडे की साहित्य वार्षिकी में यह बहस का मुद्दा बना था कि 'स्त्री लेखन' स्त्री का अधिकार क्षेत्र है या किसी भी रचनाधर्मी का। इसमें अधिकांश

रचनाकारों ने स्वीकार किया कि लेखन, लेखन होता है नर मादा नहीं। उसे बाँटकर देखने वाली दृष्टि पूर्वाग्रह से ग्रस्त है। लेकिन विचारक हीय के अनुसार 'पुरुष का स्त्रीत्ववाद अंततः एक मर्दाना काम ही है।'[1] वहीं डॉ. पायल लिल्हारे लिखती हैं कि 'मनुष्य की सोच और दृष्टि में अपेक्षित परिवर्तन के बिना स्त्री- मुक्ति बेईमानी है।'[2] इसीलिए कहा जाता है कि

सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक बराबरी के लिए संघर्ष करती स्त्री के पक्ष में न्याय के लिए किए गए प्रयास स्त्री मुक्ति के प्रयास हैं।

मूल आलेख :

स्त्री विषयक संदर्भों में पुरुष की भूमिका शोषक की रही है। पुरुष संस्कृति ने पितृसत्ता के माध्यम से पुरुष को अर्थसंपन्नता और स्वामित्व के अधिकार सौंपे हैं और स्त्री को मिली है सिर्फ अधीनता, अर्थ पर निर्भरता और दासता की भावना। पुरुष को यह व्यवस्था ताकतवर बनाती है और स्त्री को कमजोर, इसलिए स्त्री का संघर्ष पुरुष के साथ द्वंद्वात्मक स्थिति रखने में नहीं वरन् पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करने में है तथा स्वावलंबी बनकर पुरुषों की बराबरी का हक पाना और पुरानी नियति को तोड़ फेंकना आधुनिक स्त्री का कर्तव्य है, क्योंकि प्राचीन काल से स्त्री इसी नियति का शिकार रही है। स्वामी विवेकानंद इस संदर्भ में कहते हैं कि 'जब तक महिलाओं की दशा को सुधारा नहीं जाएगा तब तक विश्व कल्याण संभव नहीं है, परिंदे के लिए एक पंख से उड़ना संभव नहीं हैं।'[3]

स्त्री जब लिखती है तो वह अपने निजी जीवन एवं निजता को दाँव पर लगा रही होती है। अपने घर परिवार, समाज का भय और प्रतिक्रिया का डर अवचेतन रूप से उसकी कलम को संचालित कर सेल्फ सेंसर का काम करता है। मार्क्स व एंगल्स ने 'द होली फैमिली' में मानव मुक्ति की वास्तविक स्थिति को जानने के लिए फूरियर का यह कथन निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत किया था कि 'ऐतिहासिक युग परिवर्तन हमेशा इस बात से तय होता है कि मुक्ति की ओर औरतों ने तरक्की कितनी की है, क्योंकि औरत से मर्द के संबंध में यानी कमजोर से ताकतवर के संबंध में ही बर्बरता के ऊपर मानवीय व्यवहार की विजय सबसे साफ तौर पर नजर आती है। मानव मुक्ति का स्वाभाविक पैमाना है कि नारी मुक्ति किस हद तक पहुँची है।'[4]

स्त्री लेखन के शुरुआती दौर से ही यह समस्या सामने आई कि स्त्री दलित है कि नहीं। स्त्री चाहे सर्वहारा वर्ग की हो चाहे बुर्जुआ वर्ग की, दोनों के सामने चुनौतियाँ लगभग समान हैं। दोनों लगभग शोषित वर्ग में आती हैं। निचली जाति की स्त्रियाँ तो दमित हैं ही। रोजा लक्जमबर्ग ने कहा था कि मताधिकार केवल सर्वहारा वर्ग की स्त्रियों को नहीं, वे परजीवी की परजीवी हैं। दलित स्त्रियों ने तो अपने आपको स्वीकार कर लिया कि वह दलित हैं, परंतु समस्या बुर्जुआ वर्ग की महिलाओं को लेकर हुई। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपने एक साक्षात्कार में कहा था कि स्त्री दलितों में भी दलित है इसके लिए व्यवस्था जनित परंपरावादी सोच उत्तरदायी है, जो स्त्रियों को दोयम दर्जे का नागरिक ही नहीं पाँव की जूती समझती है।

'दोहरा अभिशाप' की भूमिका में कौशल्या वैशंत्री

ने लिखा है कि 'पुत्र, भाई, पति, पिता सब मुझ पर नाराज हो सकते हैं, परंतु मुझे भी स्वतंत्रता चाहिए कि मैं अपनी बात समाज के सामने रख सकूँ। मेरे जैसे अनुभव और भी महिलाओं के होंगे, परंतु समाज और परिवार के भय से अपने अनुभव समाज के सामने उजागर करने से डरती और जीवन भर घुटन में जीती है। समाज की आँखें खोलने के लिए ऐसे अनुभव सामने लाने की जरूरत है।'[5]

वर्तमान दौर में चिंता यह है कि स्त्री के पास वैचारिक संसाधन कमजोर हैं। समकालीन आर्थिक-राजनीतिक व्यवस्था में उसने लड़-झगड़ कर थोड़ी-सी जगह हथियाई है, लेकिन बहुत सारी जगह पर मर्दवाद का कब्जा है। मर्दवादी सामंती तंत्र स्त्री को अवसर तो देता है, लेकिन पूरी स्वतंत्रता नहीं देना चाहता। ग्लोबल, उत्तर आधुनिकतावादी समय में उसके सामने यक्ष प्रश्न उपस्थित है कि पुरुष प्रदत्त ज्ञान व्यवस्था को वह कैसे ध्वस्त कर पाएगी और कैसे उसके मानवीय अधिकार उसे प्राप्त हो पाएँगे ? क्या वह पुरुष प्रदत्त नवरीतिवाद, नव-सौंदर्यवाद के बाजार को अपने हाथों में हासिल करने की हिम्मत जुटा पाएगी ? भूमंडलीकरण ने नारी को नागरिक होने का वह चिंतन नहीं दिया, जो उसके पास होना चाहिए। नई लड़कियाँ कह रही हैं कि उन्हें पार्वती, राधा, सीता, द्रौपदी के पुराने आदर्श नहीं चाहिए तथा उन्हें नहीं चाहिए गंगा-सा पवित्र नारीत्व। उन्हें चाहिए यौन स्वच्छंदता, उपभोक्तावादी संस्कृति का मजा, चोटी तक पैसे में डूबा जीवन का स्वर्ग। भूमंडलीकरण के बाजार और संस्कृति ने नारी को बहुत अधिक आत्मसीमित, आत्ममुग्ध, रूपजीवा और आक्रामक बना दिया है।

इस समय स्त्री विमर्श अपने आक्रामक तेवर के लिए जाना जाता है। इस समय स्त्री के लिए एक नई चुनौती सामने आती है, वह है स्वयं स्त्री। इसका उदाहरण घरों, परिवारों में ननद, सास या अन्य सदस्य के रूप में देख सकते हैं। इस समय तक पुरुष तो क्या खुद को जागरूक मानने वाली स्त्रियाँ भी स्त्री को दोयम दर्जे का नागरिक मानने की मानसिकता से उबर नहीं पाई हैं। विवाह की अनिवार्यता, तयशुदा विवाह, दहेज प्रथा और विवाह के समय किया जाने वाला आडंबर आदि उसी मानसिकता के प्रतीक हैं।

वर्तमान समय में मुख्य समस्या स्त्रियों की सुरक्षा को लेकर है। इस समय स्त्री के लिए मुख्य चुनौती पुरुषों की बराबरी करना है। एक ओर स्त्री चाँद, या एवरेस्ट तथा विश्व के महानतम खिलाड़ी का दर्जा व फतह करने में गौरवान्वित होती है तो दूसरी ओर तमाम ग्रामीण अशिक्षित परिवारों की बच्चियाँ इन सभी से अछूती हैं। अगर बात आदिवासियों या दलितों की करें तो प्रश्न उठता है कि क्या वे सच्चे लोकतंत्र में रह रहे हैं।

स्त्री-विमर्श की समस्या या वर्तमान चुनौतियों को समझने के लिए हम छह बिंदुओं को आधार बना सकते है-1. परिवार, 2. शिक्षा, 3. कानून, 4. धर्म, 5. कला और 6. मीडिया।

परिवार की बात करें तो पता चलता है कि यह हमारी पहली पाठशाला मानी जाती रही है। इसमें माता का सहयोग अहम होता है। घर में बच्चे थोड़ा बड़े होते हैं तो उनके कपड़े, उनके रहन-सहन आदि पर बदलाव कर दिया जाता है। थोड़ा और बड़ा होने पर उनको बात-बात पर स्त्री होना बताया जाता है। उनके आने-जाने, पढ़ने, शादी आदि के फैसले पिता लेता है।

यही दशा हमारी शिक्षा व्यवस्था की है। हमारे यहाँ ऐसे तमाम कोर्सेस चलाए जाते हैं, जो सिर्फ स्त्रियों के लिए हैं। यहा सह संबाधात्मक शिक्षा (co-education study) की व्यवस्था नहीं है।

हम कानून की बात करें तो यहाँ की कानून-व्यवस्था तो अंधी है। ऐसा कोई भी कानून नहीं है, जो स्त्रियों का विरोधी न हो। कानून से लड़ना भी स्त्रियों के सामने वर्तमान चुनौती है।

धर्म चाहे कोई भी हो, वह हमेशा से पुरुष के पक्ष में रहता है। प्राचीन समय में स्त्रियों को वेद आदि पवित्र ग्रंथों को पढ़ने नहीं दिया जाता था। तमाम ऐसे धार्मिक साहित्य व कर्मकांड थे, जो स्त्री विरोधी थे। यज्ञों में

स्त्रियों को नहीं जाने दिया जाता था।

कला ने तो स्त्रियों को बाजार की वस्तु बना दिया है। बहुराष्ट्रीय बाजार व्यवस्था में स्त्री मेज-कुर्सी, टी-शर्ट की तरह खरीदी जा रही है। पेंटिग्स में स्त्रियों के नग्न चित्र बनाकर उन्हें बाजार में परोसा जा रहा है।

आज का मीडिया भूमंडलीकरण के गिरफ्त में है। न्यूज चैनलों, बाजार में, विज्ञापन में आदि में स्त्रियों का उपयोग/उपभोग हो रहा है। इस मीडिया ने स्त्री को वस्तु बना दिया है।

आज का दौर चिंतन का दौर कहा जाता है। ऐसे समय स्त्री की चुनौती उसके घर से ही प्रारंभ हो जाती है। अपने भाई के सामने चुनौती, समाज से चुनौती, आदि अनेक चुनौतियाँ उसके सामने आती हैं। 21वीं सदी के दौर में हम स्त्री विरोधी मानसिकता के बंधनों से उबर नहीं पाए हैं। धर्म के नाम पर चुनौती यशपाल के दिव्या उपन्यास में दिखाई देती है। यहाँ लेखक दिखाने का प्रयास करता है कि स्त्री किसी भी रूप में सुरक्षित नहीं है, चाहे वह रूप पत्नी, बहू, माँ, वेश्या, धर्मिणी किसी का भी हो।

निष्कर्ष :

वर्तमान समय में मुख्य समस्या स्त्रियों की सुरक्षा को लेकर है। इस समय स्त्री के लिए मुख्य चुनौती पुरुषों की बराबरी करना है। एक ओर स्त्री चाँद, या एवरेस्ट तथा विश्व के महानतम खिलाड़ी का दर्जा व फतह करने में गौरवान्वित होती है तो दूसरी ओर तमाम ग्रामीण अशिक्षित परिवारों की बच्चियाँ इन सभी से अछूती हैं। अगर बात आदिवासियों या दलितों की करें तो प्रश्न उठता है कि क्या वे सच्चे लोकतंत्र में रह रहे हैं। आज भी महिलाएँ श्रम, मजदूरी करके अपनी जीविका चला रही हैं। स्त्री के सामने चुनौती आज इन सभी चीजों से भिड़ना है। एक स्त्री को यह नहीं पता होता कि वह जिस पुरुष से बात कर रही है यही पुरुष अगले चौराहे पर भेड़िया बन जाएगा।

आज का दौर महिला सशक्तिकरण का चल रहा है। तमाम ऐसे एन.जी.ओ., कार्यक्रम (सरकारी, गैर सरकारी) संचालित हैं, लेकिन चुनौती आज भी जस-की-तस बनी हुई है, बल्कि आज और बढ़ गई है। हम आज feminism (फेमिनिज्म) की बात करते हैं तो लगता है स्त्री विमर्श हो गया। वहीं मनीषा कुलश्रेष्ठ इस feminism की जगह womanism को उपयुक्त मानती हैं। वह कहती हैं कि feminism में भी एक प्रकार का मर्दवाद छिपा हुआ है। ❑

संदर्भ सूची :

1. https://yoair.com/hi/blog/anthropology-an-overview-of-the-gender-pay-gaps-in-the-workplace/
2. सागर, राजमोहिनी (सं.), समकालीन साहित्य स्त्री विमर्श, साहित्य संचय प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2021, पृ. सं. 133
3. सिन्हा, शशिकला (सं.), महिला सशक्तिकरण का वर्तमान परिदृश्य, समता प्रकाशन बजरंग नगर, कानपुर देहात, संस्करण 2016, पृ. सं. 52
4. https://hi.wikipedia.org/wiki/
5. वैशंत्री, कौशल्या, दोहरा अभिशाप (भूमिका में), परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1999, पृ. सं. 20
6. कस्तवार, रेखा, स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016
7. हिलसायन, सुधीर (सं.), सामाजिक परिवर्तन के महानायक डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर, न्याय संदेश, नई दिल्ली, संस्करण 2014
8. रावत, ज्ञानेंद्र, औरत अस्मिता और यथार्थ, क्रांति बुक सेंटर, नई दिल्ली, संस्करण 2006

सरोकार

हरिशंकर परसाई के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना

डॉ. अखिल चंद्र कलिता

सहायक अध्यापक
लामडिंग कॉलेज, लामडिंग
होजाई, असम-782447
मो. 9774126252

सारांश :

स्वाधीनता के बाद भारतीय समाज में व्याप्त विकृतियों और विद्रूपताओं से व्यथित होकर साहित्यकार की वेदना आक्रोश का तीखा स्वर धारण कर व्यंग्य के रूप में उभरने लगी। तत्कालीन साहित्यकारों ने भ्रष्ट समाज-व्यवस्था और शोषण की यंत्रणा के बीच में पिसते मनुष्य की वेदना को स्वर प्रदान किया और शोषकों का मुखौटा उतारकर उनके असली चेहरे का चित्र खींचा है। मानवीय मूल्यों की दुहाई देने वाला और उनके प्रति आस्था को बल देने वाला साहित्यिक व्यक्तित्व भी निजी स्वार्थ में अपने दायित्व को भूलकर साहित्यकार की उदात्तता को खो बैठा है। आदमी का स्वभाव बड़ा विचित्र होता है ।प्रत्येक व्यक्ति में कोई-न-कोई विशेषता या विसंगति देखने को मिलती है ।कभी यह विचित्रता व्यक्ति के व्यक्तित्व में कलंक रूप सिद्ध होती तो कभी उस पर हँसी भी आती है। साहित्यकार मानव-स्वभाव में निहित इन विचित्रताओं को अपना लक्ष्य बनाता है। व्यक्ति से परिवार और परिवार से समाज का संबंध, एक-दूसरे के परिपूरक हैं ।व्यक्ति से परिवार बनता है और परिवार से ही समाज। परिवार, मानव समाज की पूर्णत: मौलिक एवं सार्वभौमिक इकाई है। यह एक प्राथमिक समूह है। इसे मानवीय समूहों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह कहा जाता है। मनुष्य की आवश्यकताओं को दो प्रमुख भागों में बाँटा गया है-पहला प्राथमिक आवश्यकताएँ, ये ऐसी आवश्यकताएँ हैं, जो उसके जीवन यापन के लिए प्रमुख हैं। दूसरी वह आवश्यकताएँ हैं, जो उसके जीवन के लिए प्रमुख तो नहीं, परंतु वे भी अपना अलग महत्व रखती हैं। परिवार इन दोनों प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। सामाजिक जीवन को निर्मित करने में परिवार की विशेष भूमिका है।

मूल शब्द :

आक्रोश, तत्कालीन, व्यंग्य, शोषण, विचित्रता, विसंगति, सार्वभौमिक, बाँटा, पूर्ति।

उद्देश्य :

हरिशंकर परसाई हिंदी के महत्वपूर्ण व्यंग्य लेखक हैं। इनके लेखन में सामाजिक विसंगतियाँ सर्वाधिक सशक्त रूप से प्रस्तुत हुई हैं । इसलिए हरिशंकर परसाई की व्यंग्यात्मक कृतियों में सामाजिक युगीन चेतना का अध्ययन एक महत्वपूर्ण शोध कार्य हो सकता है। विषय के विस्तार को नियंत्रित करने के लिए उनके उपन्यासों को केंद्र में रखकर अध्ययन का विषय बनाया गया है। हरिशंकर परसाई के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना एक औचित्यपूर्ण विषय है।

प्रविधि :

प्रस्तुत शोध लेखन के दौरान हरिशंकर परसाई के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना को उद्घाटित करने के लिए प्रमुख रूप से विश्लेषणात्मक और समीक्षात्मक शोध प्रविधि अपनाई गई है।

पूर्व शोध कार्य का विवरण :

उपलब्ध जानकारी के अनुसार अपनी तरह का यह पहला शोध लेखन है । इस विषय को लेकर अब तक कोई भी शोध लेखन नहीं हुआ है। यद्यपि हरिशंकर परसाई के साहित्य के अन्य पहलुओं पर शोध लेखन हो चुके हैं। हरिशंकर परसाई के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना पर किया गया यह एक मौलिक शोध कार्य है।

भूमिका :

साहित्य मानव संस्कृति का एक अविभाज्य अंग है, अत: साहित्य सामाजिक चेतना का भी एक अत्यंत अनिवार्य तत्व है। साहित्य समाज का दर्पण है और समाज के उत्थान में साहित्य का अत्यधिक योगदान रहता है। जिस देश की साहित्यिक चेतना जितनी संपन्न होगी, उस देश का समाज भी उतना ही चेतना संपन्न होगा। साहित्य ही समाज की चेतना को क्रियाशील बनाता है। सामाजिक चेतना की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए उपन्यास, साहित्य की एक उत्कृष्ट विधा है। सामाजिक के साथ ही आर्थिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ जुड़ी रहती हैं।

मूल आलेख :

सामाजिक चेतना में 'समाज' और 'चेतना' शब्द

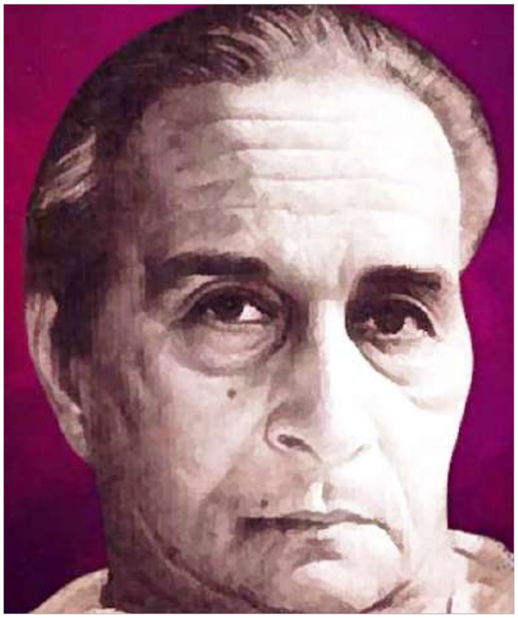

समाविष्ट है। सामाजिक चेतना का स्वरूप विस्तृत एवं व्यापक है। सामाजिक संदर्भ में सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति शाश्वत, मांगलिक और सर्वग्राह्य है। इस चेतना के अंतर्गत मानव मन में उत्पन्न ज्ञानात्मक एवं क्रियात्मक सामाजिक परिवर्तन की संपूर्ण मानवतावादी भाषा समाविष्ट हो जाती है। सामाजिक चेतना और मानव के सामाजिक चरित्र में मौलिक संबंध होता है । सामाजिक चेतना के कारण ही प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक प्रतिष्ठामूलक कार्य संपादित करता है। यह चेतना व्यक्ति को जीवित रखती है और उसके चरित्र के बल पर सामाजिक संगठन को दृढ़ बनाती है। सामाजिक चेतना व्यक्तिमूलक और समाजमूलक दोनों रूपों में रहती है। व्यक्तिमूलक सामाजिक चेतना व्यक्ति के दो पक्षों को प्रकट करती है। एक उसके क्षुद्र व्यक्तित्व का है और दूसरा पक्ष वह विराट व्यक्तित्व धारण कर सकता है। व्यक्ति जितने अंशों में सामाजिक चेतना को ग्रहण करता है, उतना ही उसका जीवन समाज सापेक्ष होता है। जब व्यक्ति समाज केंद्रित कार्य संपादित करता है तो वह समाज के विकास में अपना योगदान देता है।

सामाजिक चेतना का उद्भव सामाजिक विषमता की दशा पर होता है। शोषण, संघर्ष, समाज में ऊँच-नीच की भावना, छुआछूत, वर्ग संघर्ष, आर्थिक विषमताएँ,

विधवा समस्या, बाल-विवाह, वैवाहिक समस्याएँ, अमीर-गरीब जैसी विषमतामूलक स्थिति का जन्म सामाजिक आघात की प्रतिक्रिया से होता है। सामाजिक चेतना ने व्यक्ति का समाज के प्रति दायित्व और व्यक्ति-व्यक्ति के संबंधों के स्वरूप को निर्धारित और नियंत्रित किया है। समाज में व्याप्त वैषम्य को समाप्त करने का प्रयास तथा उसके साथ समाज के रूढ़िवादी विकास के कारण उत्पन्न विकृतियों के निराकरण द्वारा समाज को नवीन स्वरूप प्रदान करना सामाजिक चेतना का महत्वपूर्ण कार्य है। सामाजिक चेतना विकासशील है और युग के साथ बदलती रहती है। प्रत्येक युग में सामाजिक चेतना के कई स्तर होते हैं। यह चेतना व्यक्ति की भी हो सकती है, समूह की भी। सामाजिक चेतना की परिभाषा देने का प्रयास भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने किया है। डॉ. रत्नाकर पांडेय के अनुसार, ''सामाजिक चेतना अभावात्मक या नकारात्मक नहीं होती। यह व्यक्ति मात्र में विद्यमान रहती है। परंतु यह रूढ़ि, अशिक्षा और अभावों के कारण दुष्प्रभावित और कुंठित हो जाती है। इसे दुष्प्रभाव से मुक्त रखना और कुंठा को अपनी अंत:वृत्ति से तिरोहित बनाए रखना ही सामाजिक चेतना है।''[1] सामाजिक चेतना के संदर्भ में डॉ. कुंवरपाल सिंह का कथन है, ''सामाजिक चेतना सरित प्रवाह की तरह विकसित होती चलती है। यह चेतना विच्छिन्न नहीं होती, बल्कि भिन्न-भिन्न सामाजिक समस्याओं, राजनीतिक गतिविधियों, धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विषमताओं से संबंधित नागरिक जीवन की समानतामूलक विकासात्मक भावना ही सामाजिक चेतना है।''[2]

सामाजिक चेतना केवल समझ ही नहीं देती, अपितु वह सामाजिक उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए आगे बढ़ने की प्रेरणा भी देती है। साथ ही यह सामाजिक आयामों के विस्तार के साथ-साथ विकसित भी होती है। परंपराओं से चलती आ रही मान्यताओं, रूढ़ियों और संस्कारों के कारण कुंठाग्रस्त जनता के जीवन में आशा, प्रेरणा, आस्था एवं स्फूर्ति जाग्रत कर इन्हें एक सूत्र में पिरोना सामाजिक चेतना का कार्य है। विभिन्न समाजों और एक ही समाज में भिन्नताओं के कारण सामाजिक चेतना भी भिन्न-भिन्न रूपों में प्राप्त होती है। किन्तु मूलत: इसमें समाज सुधार, सामाजिक प्रगति अथवा समाजोत्थान की ही प्रधानता रहती है।

स्वाधीनता के बाद का भारतीय समाज मिथ्या आडंबर, संतोष, आशा एवं अपेक्षाओं से ग्रस्त रहा है। देश की आजादी के दौरान प्रजा ने स्वस्थ समाज एवं सामाजिक उत्कर्ष का जो स्वप्न देखा था, वह कुछ ही समय में टूटकर बिखर गया। खोखली होती जा रही राजनीति का सीधा असर सामाजिक जीवन पर पड़ने लगा। फलस्वरूप भारतीय समाज में दंभ, पाखंड, छल-कपट, धूर्तता, भ्रष्टचार आदि बढ़ते ही गए, जिसके परिणामस्वरूप समाज और भी खोखला होता गया। मध्य वर्गीय एवं निम्न वर्गीय लोगों के लिए सम्मानपूर्ण जीवन जीना दुष्कर होता गया। इस प्रकार आजादी के बाद का समाज अनेक प्रकार की विसंगतियों, विकृतियों एवं विद्रूपताओं से ग्रस्त होकर जटिल विषमता से भर उठा। मनुष्य में मानव मूल्यों का अभाव दिखने लगा, जिसका असर पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन पर पड़ता गया। पुरानी सामंती व्यवस्था में भारतीय समाज प्राय: दो वर्गों में विभक्त था-उच्च वर्ग और निम्न वर्ग। लेकिन औद्योगीकरण तथा दफ्तरी तंत्र के विकास के परिणामस्वरूप मध्य वर्ग के रूप में समाज का एक नया रूप उभकर सामने आया। इससे पारस्परिक स्वार्थ टकराए और समाज के विभिन्न वर्ग-स्तरों पर तनाव और संघर्ष की स्थिति उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। सामाजिक और वैयक्तिक जीवन के प्रतिमान बदलते गए।

छठे दशक के बाद कलुषित एवं कुत्सित राजनैतिक वातावरण के कारण भारतीय समाज असफल, निष्क्रिय, उदासीन होकर कुटिलता और संकीर्णता के मध्य घुटता हुआ अत्यंत असंतोषी हो गया, जिसके कारण व्यक्ति के रागात्मक संबंधों का टूटना प्रारंभ हुआ। व्यक्ति अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति और स्वार्थ साधने के लिए हर तरह के गलत माध्यम अपनाने लगा। खुशामद, चापलूसी, मुखौटेबाजी आदि उसकी नई नीतियाँ बनने लगीं। एक ओर व्यक्ति अपने दायित्वों से मुँह मोड़कर गैर-जिम्मेदार बनता गया तो दूसरी ओर उसके द्वारा अधिकारों की माँग बराबर बढ़ती गई। वर्तमान युग में देश का नागरिक न तो भारतीय परंपरा से कट पा रहा है और न ही

समय के परिवर्तन के साथ व्यक्ति की आस्था, नैतिकता, मूल्यों और जीवन-शैली में भी बदलाव आता है और इसका सीधा असर धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों पर पड़ता है। संसार के सभी कार्य व्यक्ति केंद्रित हैं। उसी का एक रूप शोषक है और दूसरा शोषित।

आधुनिकता को समग्र रूप में अपना सकता है। वह पाश्चात्य विचाधारा से आकर्षित होते हुए भी पूरी तरह उसमें अपने आप को ढाल नहीं पाता है। दूसरी ओर वह भारतीयता में आकंठ डूबे रहने के बावजूद भारतीय कहलाना नहीं चाहता। इस प्रकार मनुष्य नकाबपोशी होता जा रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु चलाए गए जन-आंदोलन का संकल्प था-एक वर्गहीन, शोषणमुक्त, समृद्ध, संपन्न एवं प्रगतिशील समाज की स्थापना। लेकिन जब स्वतंत्रता प्राप्त हुई उसके बाद समाज निजी स्वार्थों में बंधकर इस संकल्प से दूर ही हटता गया। भारतीय समाज की परंपरागत रूढ़ियों, रीति-रिवाजों एवं उसूलों से ऊबा मनुष्य विदेशी सभ्यता के प्रति आकर्षित होकर अनेक मानसिक बीमारियों का शिकार होने लगा। समाज और मानव-मात्र में हताशा, अनास्था, संशय, संत्रास और घुटन व्याप्त हो गई। अँग्रेजी शिक्षा एवं पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध ने लोगों को कुंठित कर दिया है। वे अपने आप को अत्याधुनिक एवं प्रगतिशील दिखाने की कोशिश में ही सारी शक्ति लगा देते हैं, लेकिन रूढ़ संस्कार उनका पीछा नहीं छोड़ते और वे सच्चे अर्थ में प्रगतिशील नहीं बन पाते। बुद्धिजीवी वर्ग अभावग्रस्त जीवन और मानसिक तनाव की संघर्षमयी स्थितियों से छुटकारा पाने के लिए अनेक बाह्यडंबरों, छद्मों और कपट का सहारा लेता है। झूठे दिखावा के कारण बुद्धिजीवी वर्ग समाज को और ज्यादा जर्जर बना देता है। एक ओर औद्योगिक प्रगति के द्वारा समाज प्रगतिशील पथ पर अग्रसर है तो दूसरी ओर मूल्यहीनता और अनैतिकता से ग्रस्त समाज अध:पतन की ओर बढ़ता ही जा रहा है । ऊँच-नीच, जातिवाद, दहेज-प्रथा, गरीबी एवं बेरोजगारी जैसी अनेक समस्याओं से समाज पीड़ित है।

हिंदी के मूर्धन्य व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई ने अपने समकालीन समाज को निकट से देखा है। उन्होंने समाज में व्याप्त विकृतियों, कुरीतियों, विद्रूपताओं को अपनी व्यंग्य रचना का लक्ष्य बनाया। पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण और मिथ्या आडंबर, दिखावा, असंतोष, त्रासदी जैसी अनेक विकृतियाँ समाज में व्याप्त थीं। आर्थिक दबाव एवं अभावों के बीच जीने वाले मध्य वर्ग और निम्न वर्ग के असंतोष, टूटन, कुंठा, घुटन, हताशा को परसाई जी ने अपनी व्यंग्य रचनाओं में स्थान दिया है। उन्होंने समाज में व्याप्त दंभ, पाखंड, दोमुँहापन, कथनी-करनी में अंतर, स्वार्थपरता, रूढ़ परंपराओं व रीति-रिवाज आदि पर व्यंग्य करके समकालीन समाज का वास्तविक और जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत किया है। उन्होंने संपूर्ण भारतीय समाज का सूक्ष्म अवलोकन किया है। उनकी सामाजिक चेतना वर्ग विशेष या समाज विशेष तक ही सीमित नहीं रही है। उन्होंने समाज के हर एक पहलू का यथार्थता के साथ उसकी सहज अभिव्यक्ति की है। परसाई के विषय में श्री मधुमासचंद्र यथार्थ लिखते हैं, ''शोषणविहीन और सामंतवादी समाज की स्थापना के लिए जो लेखक अपनी लेखनी चला रहे हैं, परसाई उसमें अग्रणी हैं। आने वाली पीढ़ी के दिशा-निर्देश के लिए हरिशंकर परसाई एक आकाशदीप के समान हैं।''[3] स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात का भारत सामाजिक परिवेश की दृष्टि से और भी अधिक दूषित लगता है । पुरानी मान्यताएँ टूट रही हैं, आज पुरातन और नवीन के बीच संघर्ष चल रहा है । भारतीय समाज पहले नैतिकता और सच्चाई की दुहाई देता था, लेकिन आज वह इनसे बिल्कुल विमुख हो गया है। भ्रष्टाचार, बेईमानी, व्यभिचार बढ़ते ही जा रहे हैं । फलस्वरूप चारों ओर एक विचित्र--सी उदासीनता का वातावरण बन गया है। भारतीय समाज घुटन, संत्रास और टूटन की पीड़ा को जी रहा है। आज देश की सामाजिक स्थिति बहुत ही विसंगतिपूर्ण

बन गई है। समाज में फैली भ्रष्टाचार की जड़ें अत्यंत गहरी हो चुकी हैं। भ्रष्टाचार रूपी दोष को समाज से उखाड़ फेंकना असंभव तो नहीं, किंतु कठिन अवश्य है। समाज में शिक्षा, लेखन, अध्यापन, डॉक्टरी आदि सभी पेशे में भ्रष्टाचार समाया हुआ है। समाज की स्थिति के विषय में परसाई लिखते हैं, ''समाज में 'धन्य' और 'धिक्कार' की शक्तियाँ होती हैं । ये सामाजिक सदाचरण बनाए रखती हैं। मैंने पिछले कुछ सालों में समाज को इन शक्तियों को खोते देखा है या गलत जगह प्रयोग करते देखा है, जो चालीस साल पहले धिक्कार पाते थे, वे धन्य पाने लगे हैं और और जिन्हें धन्य मिलता था, वे अपमानित, पीड़ित हैं । सामाजिक शक्तियाँ तटस्थ भी हो गई हैं। चालीस साल पहले जो घूसखोर बदनाम हो गया, वह सिर उठाकर नहीं चलता था, वह समाज से धिक्कार पाता था। आज वह सफल आदमी माना जाता है, वह ऊँचा सिर करके चलता है।''[4]

व्यक्ति समाज की मूल इकाई है, अंत: उसके जीवन के उतार-चढ़ाव, आस्था, मूल्यों एवं क्रिया-प्रतिक्रियाओं का सीधा असर समाज पर पड़ता है। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति का रचनात्मक कार्य समाज की शोभा में अभिवृद्धि करता है और खंडनात्मक कार्य उसे विकृत बनाता है। समाज के केंद्र में व्यक्ति की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। मूल्यों के अवमूल्यन की जो आपाधापी मची हुई है, वास्तव में वह व्यक्ति -चरित्र का ही अवमूल्यन है। समय के परिवर्तन के साथ व्यक्ति की आस्था, नैतिकता, मूल्यों और जीवन-शैली में भी बदलाव आता है और इसका सीधा असर धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों पर पड़ता है। संसार के सभी कार्य व्यक्ति केंद्रित हैं। उसी का एक रूप शोषक है और दूसरा शोषित। व्यक्ति के कारण ही अर्थ वैषम्य और वर्गभेद उत्पन्न होता है। भ्रष्टाचार, अनैतिकता, बेईमानी, छल-कपट, पाखंड, दंभ आदि बुराइयाँ भी व्यक्ति के स्वभाव में ही निहित होती हैं । इन बुराइयों एवं विकृतियों से संघर्ष करने का जुनून भी व्यक्ति में ही निहित है। अर्थात संसार की प्रत्येक प्रवृत्ति के मूल में व्यक्ति शामिल है। मूल्यों के पक्षधर और समाज सुधार में आस्था रखने वाले व्यंग्यकारों का यह दायित्व है कि वे समाज को दूषित करने वाले स्वार्थी चरित्र के लोगों को बेनकाब करें ।

उपसंहार :

निष्कर्ष रूप में यह कह सकते हैं कि परसाई ने अपने उपन्यासों में समाज की स्थिति को स्पष्ट रूप से दर्शाया है। व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के परिपूरक हैं। उन्होंने अपने उपन्यासों में व्यक्ति का परस्पर संबंध कैसा है, समाज के साथ व्यक्ति का कैसा संबंध है उसका चित्रण किया है। स्वाधीनता के बाद के समाज को परसाई ने अपने कथा साहित्य में प्रस्तुत किया है। परसाई ने अपने उपन्यासों में समकालीन समाज और राजनीति में व्याप्त पाखंड, विसंगति, दोमुँहापन जैसी प्रवृत्तियों का विश्लेषण कर उसका तर्कपूर्ण विवेचन किया है। परसाई के उपन्यास 'रानी नागफनी की कहानी' में प्रत्येक व्यक्ति का संबंध स्वार्थ निहित परिलक्षित होता है। राजकुमारी नागफनी की सखी 'केरलामुखी' इस कथा में राजकुमारी के साथ दहेज में जाकर राजसुख भोगने की लालसा प्रकट करती है। दूसरी ओर राजा भयभीतसिंह अपने पुत्र को पैसे कमाने का माध्यम समझकर उसका प्रयोग करना चाहते हैं। वे दहेज के माध्यम से धन कमाने के लिए लालायित थे। इसी प्रकार व्यक्तियों का संबंध केवल अपना काम सीधा करने तक था, ईमानदारी कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होती है। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. पांडेय, डॉ. रत्नाकर, हिंदी साहित्य : सामाजिक चेतना, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1999 ई, प्रथम संस्करण, पृ.सं. 56
2. वही, पृ.सं. 118
3. गोहिल, डॉ. वखतसिंह, हरिशंकर परसाई : एक अध्ययन, वाणी प्रकाशन, 2005 ई., प्रथम संस्करण, पृ.सं. 67
4. वही, पृ.सं. 74

अतीत बोध

1857 की क्रांति में भाग लेने वाली मुस्लिम महिलाएँ एवं उनका योगदान

डॉ. आशा यादव

एसो. प्रो., विभागाध्यक्ष,
इतिहास विभाग
एम.एम. (पी.जी) कॉलेज
मोदीनगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)
मो. 9897331182

सविता

शोध छात्रा, इतिहास विभाग
एम.एम. (पी.जी.) कॉलेज
मोदीनगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)
मो. 9560048347

सारांश :

सन् 1857 की क्रांति को भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की संज्ञा दी जाती है। ऐसा इसलिए कहा जाता है, क्योंकि लगभग संपूर्ण भारत में अँग्रेजों के विरोध में लोग उठ खड़े हुए थे। बिखरे भारत में फिर से एक हो जाने के लिए राष्ट्रवाद की भावना का जन्म हुआ। राष्ट्रवाद की लहर को फैलाने में रोटी और कमल सहायक बने तथा अँग्रेजों के खिलाफ विद्रोह का बिगुल बजा। यद्यपि स्थानीय नवाब व राजा अपनी विरासतों, जमीनों तथा रियासतों के छिन जाने के कारण इकट्ठे हुए, किंतु भारत को एकता के सूत्र में बांधने वाले इस आंदोलन में कई ऐसी हस्तियाँ भी थीं, जिन्होंने बिना किसी निजी स्वार्थ के आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। सन 1857 की क्रांति को न केवल पुरुषों ने, बल्कि महिलाओं ने भी नेतृत्व प्रदान किया। कंपनी की साम्राज्यवादी नीति के विस्तार से नवाबों तथा स्थानीय राजाओं की रियासतें छीन ली गईं। उन्हें उनके पदों से हटा दिया गया और विरोध करने पर या तो मार दिया गया या जेल में डाल दिया गया। अँग्रेजों ने अपनी नीतियों (राज्य हड़प नीति एवं सहायक संधि) के माध्यम से अनेक बहाने बना जैसे-नवाबों व राजाओं की मृत्यु , कारावास या उत्तराधिकारी का अभाव, उनकी रियासतों एवं संपत्तियों पर कब्जा कर लिया। ऐसी दशा में नवाबों व राजाओं के परिवार की महिलाओं ने विद्रोह के नेतृत्व की बागडोर संभाली और यहीं से मुस्लिम महिलाओं की भागीदारी सन 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में प्रारंभ हुई। हठ और विनम्रता को छोड़कर महिलाएँ आगे आईं और बिना किसी मांग के स्वेच्छा से बलिदान दिया। सन 1857 की आजादी की लड़ाई में हिंदू महिलाओं का ही नहीं, वरन मुस्लिम महिलाओं का योगदान भी बड़े पैमाने पर रहा, क्योंकि उनके सौहरों को जेल में डाल दिया गया या मार दिया गया एवं उनकी रियासतें छीन ली गईं। इसी कारणवश हरम एवं पर्दे में रहने वाली इन मुस्लिम महिलाओं ने अपनी भूमिका बदल ली और जंगे आजादी को अपना नेतृत्व प्रदान किया।

कुंजी शब्द :

क्रांति, स्वतंत्रता सिपाही, वीरांगना, देशभक्त, प्रोत्साहन।

भूमिका :

सन् 1857 की क्रांति का शुभारंभ सर्वप्रथम सैनिक छावनी में हुआ था। मंगल पांडे द्वारा सार्जेंट पर गोली चलाने के साथ ही क्रांति का बिगुल बज उठा। देखते-ही-देखते यह स्वतंत्रता संग्राम लखनऊ, बनारस, इलाहाबाद, बरेली, जगदीशपुर और झांसी आदि स्थानों पर उग्र रूप से फैल गया। यह संघर्ष केवल सन 1857 का सिपाही विद्रोह या कोरा विद्रोह नहीं था, बल्कि स्वाधीनता संघर्ष था। जहाँ एक ओर सन 1857 के संग्राम में वीर योद्धाओं ने अपनी जान गँवाई, वहीं वीरांगनाओं ने भी अँग्रेजों का डटकर मुकाबला किया और अपने प्राणों की बाजी लगाई। मुस्लिम पुरुषों के साथ मुस्लिम महिलाओं ने भी देश की आजादी के लिए अपना सर्वस्व बलिदान किया। संग्राम की इस बेला में केवल गिनी-चुनी कुलीन वर्ग की कुछ मुस्लिम महिलाओं जैसे बेगम हजरत महल, जीनत महल, अजीजन बाई आदि का नाम तो इतिहास के पन्नों में दर्ज हो गया, किंतु अन्य अनेक मुस्लिम महिलाओं के बलिदान को दर्ज करने वाला तथा इनके साहस की कहानी कहने वाला कोई न था। पितृ सत्तात्मक समाज में इन महिलाओं को योद्धा के रूप में कम ही महत्व मिला। सन 1857 की क्रांति के बाद सिलसिलेवार तौर पर बड़े पैमाने पर अन्य स्वतंतत्रा सेनानियों की तरह ही इन विद्रोही मुस्लिम औरतों का इतिहास गृह विभाग की फाइलों में, पोर्ट ब्लेयर के रिकॉर्डों में, ब्रिटिश डायरियों व म्यूटनी पेपर्स में दर्ज है और इनकी बहादुरी के चर्चे इन्हीं से प्राप्त होते हैं। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में मुस्लिम महिलाओं ने आजादी की प्रथम चिंगारी को न केवल सबल सामर्थ्य प्रदान किया, बल्कि अलग-अलग स्थानों पर अपना नेतृत्व प्रदान किया, जिसका विवरण इस प्रकार है:-

लखनऊ : 10 मई, सन 1857 को मेरठ से विद्रोह के आरंभ होने के बाद 30 मई, सन 1857 को लखनऊ व अवध से विद्रोह की घोषणा की गई। बेगम हजरत महल अवध के नवाब वाजिद अली शाह की बेगम थीं, जो पेशे से नर्तकी थीं। वाजिद अली शाह के निर्वासन के बाद जब अवध पर अँग्रेजों का कब्जा हो गया, तब हजरत महल ने नाबालिक पुत्र बिरजिस कादिर को गद्दी

पर बिठाकर अँग्रेजों से स्वयं मुकाबला किया। आलमबाग की लड़ाई में उन्होंने सिपाहियों की भरपूर हौसला अफजाई की। वह हाथी पर सवार होकर दिन-रात युद्ध करती रहीं तथा अवध के शहरी क्षेत्र में पराजय का संकेत मिलने पर जान बचाने के लिए अवध के देहातों में चली गईं तथा वहीं से क्रांति की चिंगारी सुलगाई। वह पूर्ण स्वतंत्रता के लिए न केवल अँग्रेजी सेना से लड़ती रहीं, बल्कि उन्होंने नजरबंद वाजिद अली शाह को छुड़ाने के लिए लॉर्ड कैनिंग की सुरक्षा दस्ते में भी सेंध लगा दी थी। विद्रोह के समय अँग्रेज जब जीतने लगे तो उन्हें भागकर नेपाल में शरण लेनी पड़ी, परंतु उन्होंने स्वयं को अँग्रेजों के हवाले नहीं किया। सन 1879 में इनकी मृत्यु नेपाल में ही हो गई।

लखनऊ से सन 1857 की क्रांति में बेगम हजरत महल के अलावा रहीमी ने भी बढ़-चढ़कर भाग लिया। वह लखनऊ में हजरत महल की महिला सैनिक दल का नेतृत्व कर रही थीं। रहीमी ने फौजी भेष धारण कर सैनिक महिलाओं को न केवल बंदूक चलाना सिखाया, बल्कि उनकी अगुवाई में महिला सैनिकों ने अँग्रेजों से जमकर लोहा लिया, जबकि उस समय वह मात्र 28 वर्ष की ही थीं। रहीमी के अलावा उम्दा बाई, हैदरी बाई आदि महिलाओं ने महिला सैनिक दल में शामिल होकर अँग्रेजों के खिलाफ मोर्चा संभाला। ये दोनों महिलाएँ पेशे से तवायफ थीं। उनके यहाँ तमाम अँग्रेज अफसर आते थे एवं क्रांतिकारियों के खिलाफ योजनाओं पर बात किया करते थे। इन योजनाओं की जानकारी जब इन्हें हुई तो तवायफ होते हुए भी हैदरी बाई ने देशभक्ति का प्रमाण देते हुए महत्वपूर्ण सूचनाएँ क्रंतिकारियों तक पहुँचाने का कार्य किया।

कानपुर से सन 1857 की क्रांति का नेतृत्व नाना साहब तथा तात्या टोपे ने किया तथा यहाँ से मुस्लिम महिला के रूप में अजीजन बाई प्रमुख थीं, जो अँग्रेजी सेना के साथ भीषण लड़ाई की गवाह बनीं। अजीजन बाई पेशे से दरबारी तवायफ थीं, जो निजी स्वार्थ या स्वयं की लड़ाई न होने के बाद भी इस विद्रोह में शामिल हुईं। अजीजन बाई नाना साहब से प्रेरित थीं और नाना साहब की प्रेरणा से ही इन्होंने औरतों का एक सैनिक दस्ता बनाया। वह पुरुषों के लिबास में रहती थीं और एक जोड़ी बंदूक रखती थीं। अजीजन बाई सैनिकों के साथ घोड़े की सवारी करती थीं। वह शुरुआती जीत पर कानपुर में झंडा जुलूस में भी शामिल हुई थीं। अजीजन बाई कानपुर में तैनात दूसरी घुड़सवार सवार सेना की चहेती थीं। यह समसुद्दीन नाम के सैनिक के बहुत करीब थीं। अजीजन बाई का घर सैनिकों के मिलने का अड्डा बन गया था। अजीजन बाई निडरतापूर्वक सशस्त्र जवानों की हौसला अफजाई करती थीं और युद्ध के दौरान घायलों के जख्मों पर मरहम -पट्टी करती थीं, साथ ही हथियार गोला-बारूद मुहैया भी कराती थीं। अजीजन बाई ने 'गन बैटरी' नामक जगह को इस काम के लिए मुख्यालय बना दिया था। इन्होंने क्रांतिकारियों की प्रेरणा से मस्तानी नाम की 400 महिलाओं की एक सैनिक टोली बनाई। सती चौरा घाट से बचाकर बीबी गढ़ में रखी गईं लगभग 200 अँग्रेज महिलाओं व बच्चों की रखवाली का कार्य अजीजन की मस्तानी टोली के जिम्मे था। बिठूर में युद्ध हारने के बाद नाना साहब और तात्या टोपे पलायन कर गए, लेकिन अजीजन बाई पकड़ी गईं। इन्हें जर्नल हैवलॉक के समक्ष प्रस्तुत किया गया। इनकी सुंदरता से प्रभावित होकर जनरल ने अजीजन से किए गए कृत्य की माफी मांगने का प्रस्ताव रखा, परंतु उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया और पलट कर कहा, 'माफी तो अँग्रेजों को मांगनी चाहिए जिन्होंने इतने जुल्म ढाए।' इससे आगबबूला होकर हैवलॉक ने अजीजन को गोली मारने का आदेश दिया, जिससे क्षण भर में ही अजीजन का अंग प्रत्यंग धरती माँ की गोद में समा गया। इस तरह अजीजन बाई देश के लिए मिटकर इतिहास के पन्नो पर अमर हो गईं।

कानपुर की बीवीगढ़ की घटना : इस घटना से हुसैनी खानम व इनकी मालकिन अदला बेगम का संबंध है। बीवीगढ़ जहाँ 10-20 स्क्वायर फीट के दो कमरों में लगभग 200 से ज्यादा यूरोपियन कैदी रखे गए थे, इन कैदियों की देखभाल का जिम्मा इन दोनों तवायफों का था। जब नाना साहब के आदेश पर यूरोपियन कैदियों को मारने का आदेश हुआ तो मर्द सैनिकों ने औरतों को मारने से इनकार कर दिया, तब इन महिलाओं

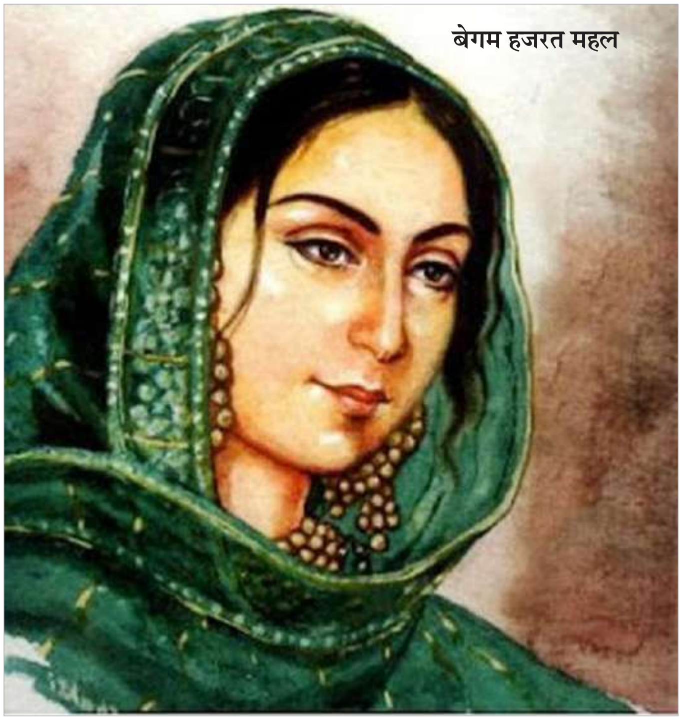
बेगम हजरत महल

की ठोकरें खानी पड़ी थीं। बाद में बेगम जीनत महल भी बहादुर शाह जफर के साथ बर्मा चली गईं।

अवध : अवध से क्रांति के नेतृत्व की बागडोर बेगम आलिया ने संभाली। इन्होंने अपने अद्भुत कारनामों से अँग्रेजों को चुनौती दी। बेगम आलिया ने सन 1857 की क्रांति से एक साल पहले ही अपनी सेना में महिलाओं को शामिल कर लिया था। अपने गुप्तचरों के गुप्त-संदेशों के माध्यम से बेगम ने समय-समय पर अँग्रेजी सैनिकों से युद्ध किया और कई बार उन्हें अवध से भगाया।

अवध में आलिया बेगम की तरह मनियारपुर की सोगरा बीवी ने भी क्रांतिकारियों की पूरी सहायता की। सोगरा बीवी ने अपने 400 सैनिकों व 2 तोपें सुल्तानपुर के नाजिम तथा विद्रोही नेता मेहंदी हसन को दी और सन 1857 की क्रांति में खुलकर भाग लिया। राष्ट्रवाद के रंग में रंगा, हर कोई राष्ट्रीय एकता के लिए अपनी आहुति देने के लिए तैयार खड़ा था।

सन 1857 की क्रांति में सबसे ज्यादा मुस्लिम औरतों की हिस्सेदारी पश्चिमी उत्तर प्रदेश से रही। उत्तर प्रदेश से मुजफ्फरनगर एवं मेरठ की मुस्लिम महिलाओं ने भी क्रांति में खुलकर भाग लिया। इनमें मुजफ्फरनगर से हबीबा और जमीला पठान का नाम अग्रणी है। हबीबा खातून एक मुस्लिम गुर्जर परिवार से संबंधित थीं। मुजफ्फरनगर से हबीबा ने अँग्रेजों के खिलाफ कई लड़ाइयां लड़ीं। हबीबा ने सन 1857 की क्रांति का नेतृत्व मेरठ से आशा देवी के साथ किया एवं हारने के बाद इन्हें 11 अन्य विद्रोही महिलाओं के साथ सन 1857 में फाँसी पर लटका दिया गया, जिस कारण इनका नाम आज भी सम्मान से लिया जाता है। हबीबा की तरह जमीला पठान ने भी मुजफ्फरनगर से क्रांति में भाग लिया। जमीला को जिंदा पकड़ लिया गया और कुछ समय बाद फाँसी पर चढ़ा दिया गया। इलाहबाद से मौलवी लियाकत अली की बेटी हजीरा बेगम का नाम

ने बहुत गुस्सा दिखाया और सैनिकों को प्रेरित करते हुए कहा कि दुश्मन के साथ नरमी नहीं, शक्ति से पेश आना चाहिए।

दिल्ली व आसपास के क्षेत्र : यहाँ से सन 1857 की क्रांति का नेतृत्व बहादुरशाह जफर ने किया। बहादुरशाह को प्रेरित करने में उनकी बेगम जीनत महल का योगदान प्रमुख रहा था। जीनत महल ने स्वयं भी सन 1857 की क्रांति में उन्मुक्त स्वर से भाग लिया। उन्होंने वृद्ध हो चुके बहादुर शाह जफर को क्रांति के लिए प्रोत्साहित करते हुए एवं ललकारते हुए कहा, ''यह समय गजल कहकर दिल बहलाने का नहीं है। बिठूर से नाना साहब का पैगाम लेकर देशभक्त सैनिक आए हैं, हिंदुस्तान की आँखें दिल्ली और आप पर लगी हैं। खान- ए- मुगलिया का खून यदि आज हिंद को गुलाम होने देगा तो इतिहास उसे कभी माफ नहीं करेगा।'' बेगम जीनत महल के आलावा मुगल परिवार की अनेक महिलाओं जैसे- नूर महल, कुलसुम जमानी बेगम, हाफिज सुल्ताना आदि महिलाओ को भी क्रांति के दौरान अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा और जान बचाने के लिए दर-बदर

अहम है, क्योंकि वह रोटियाँ बनाकर एवं उन्हें घर-घर भेजकर आंदोलनकारियों को इक्कठा कर रही थीं। उस समय रोटी और कमल आंदोलन का प्रतीक था। तकरीबन 258 मुस्लिम महिलाओं को सन 1857 में मुजरिम करार देकर या तो जेल मे डाल दिया गया या फाँसी की सजा हुई।

फर्रुखाबाद से सकीना युद्ध के मैदान में बेटे को जन्म देती है। जिस दिन बेटा पैदा हुआ, उसी दिन वह अपने पति फौलाद खां और ससुर को जंग के मैदान में खो देती हैं । युद्ध के मैदान में हुई आपाधापी में उनकी गोद से उनके बच्चे को धात्री लेकर भाग गई थी। अपने बच्चे को पाने के लिए उन्हें 12 वर्ष तक संघर्ष करना पड़ा।

सन 1857 की क्रांति में अनेक मुस्लिम महिलाएँ थीं, जिनका इतिहास में जिक्र मात्र है, परंतु उन्होंने अपने - अपने स्तर से विद्रोह में भाग लिया और अपनी योग्यता का परिचय दिया। इबरतुनिश, जहांअफरोज बानो, होससैनी, लाला रूख, गोहर खान, बेगम तुकलाई सुल्तान जमानी इत्यादि महिलाओं का योगदान कमतर नहीं आंका जा सकता। क्या हम असगरी बेगम को भूल सकते हैं जिन्हें पकड़ कर जिंदा जला दिया गया। असगरी बेगम से जुड़ी एक घटना के बारे में जानकारी कीथ यंग के निजी पत्र 'दिल्ली-1857' में वर्णित है, जिसमें उन्होंने अपनी पत्नी को लिखा है, ''क्या मैंने तुम्हें बताया कि एक औरत को बंदी बनाया गया है, जिसके बारे में लोगों का कहना है कि वह घुड़सवार सेना का नेतृत्व कर रही थी और उसने अपने हाथों से हमारे दो आदमियों को मौत के घाट उतार दिया... वह औरत बूढ़ी व बदसूरत है।''

निष्कर्ष :

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से लेकर देश की आजादी तक मुस्लिम महिलाओं के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। आजादी के इस संग्राम में कुछ मुस्लिम महिलाओं ने प्रत्यक्ष एवं कुछ ने परोक्ष रूप से सहयोग दिया। आजादी के इतिहास में उन मुस्लिम महिलाओं का योगदान भुलाया नहीं जा सकता, जिन्होंने स्वतंत्रता की लड़ाई में अपने प्राणों की आहुति दी। सन 1857 की क्रांति में राजघरानों, साधारण परिवार में जन्मी महिलाओं, तवायफों एवं स्थानीय मुस्लिम महिलाओं ने पुरुषों के साथ एकजुट होकर अँग्रेजों को लोहे के चने चबवा दिए थे। इतिहास हमेशा उन अनगिनत मुस्लिम महिलाओं का ऋणी रहेगा, जिन्होंने खुशी-खुशी जंग-ए-आजादी में अपने परिवार एवं अपने आप को कुर्बान कर दिया था। किंतु आजादी की इस लड़ाई में सफलता प्राप्त न हो सकी थी।

सन 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में विफलता प्राप्त होने के पश्चात भी देशप्रेम एवं एकता के भाव को बल मिला, जिसने आगे आजादी की राह का मार्ग प्रशस्त किया। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. डेविड, साउ ल : भारतीय विद्रोह पृष्ठ -215-21
2. वही, पेज नंबर -373
3. मिचेल एडवर्ड : द इंडियन रेबीलिसन ऑफ 1857, पेज नंबर- 219
4. खुर्शीद, मुस्तफा, रिजवी : जंगे -आजादी 1857, पेज नंबर-187-189
5. थॉमस, स्मिथ : मुस्लिम विमेन पेट्रोट ऑफ 1857 स्टेटमेंट
6. गुप्ता, प्रकाश, विश्व व गुप्त, मोहिनी - स्वतंत्रता संग्राम और महिलाएं पृष्ठ संख्या-91
7. चंद्र, विपिन- भारत का स्वतंत्रता संग्राम, पृष्ठ संख्या-2
8. अदीना अखबार : बिजनौर, up-october-5-1917
9. विमेन इन इंडियाज फ्रीडम स्ट्रगल, नेशनल आर्काइव्स, न्यू दिल्ली, 1984, पृष्ठ -1
10. यंग, कीथ : दिल्ली 1857 (निजी पत्र) 21 जुलाई 1857

विश्लेषण

स्त्रीभाषा की दृष्टि से 'आवां' उपन्यास का अध्ययन

उर्मिला भगत

शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी
असम-781001
मो. 7002868098

सार संक्षेप :

स्त्री विमर्श के साथ ही स्त्रीभाषा का प्रश्न आज महत्वपूर्ण हो गया है, क्योंकि हमारी भाषा पुरुष प्रधान है। स्त्रियों की अपनी स्वतंत्र भाषा क्यों नहीं है? स्त्री के भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए स्त्री भाषा का होना आवश्यक है। अभी तक जिस भाषा का प्रयोग साहित्य में होता आया है, वह पुरुष प्रधान भाषा है, जिसमें स्त्री को हीन समझा गया है। हमारी भाषा में प्राय: सकारात्मक शब्द पुरुष प्रधान है तो नकारात्मक शब्द स्त्री प्रधान है, जिसका विरोध किया जाना आवश्यक है, क्योंकि भाषा के साथ ही हमारी राजनीतिक और सामाजिक स्थिति जुड़ी हुई है। आज भी देश के प्रधान को प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति ही कहा जाता है चाहे प्रधान स्त्री ही क्यों न हो। भाषा पर पुरुषों का अधिकार है, यह बात तीन तथ्य से स्पष्ट हो जाता है -भाषा के निर्माण का अधिकार, नियंत्रण और चुप्पी। इसी आधार पर आवां उपन्यास का अध्ययन करने का प्रयास किया जाएगा।

बीज शब्द :

स्त्रीभाषा, आवां, उपन्यास, अध्ययन।

1. भूमिका :

आवां उपन्यास का अध्ययन स्त्री भाषा की दृष्टि से करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि नारी अधिकार और अस्मिता की जो लड़ाई पूरी दुनिया में बड़े जोर-शोर से लड़ी जा रही है, वहीं स्त्री भाषा के संदर्भ में अभी और अधिक जागरूक होने की आवश्यकता है। स्त्री और पुरुष द्वारा लिखित साहित्यिक भाषा में विशेष अंतर नहीं है। जिस तरह हमारा समाज, धर्म, राजनीति सब पुरुष प्रधान है, उसी तरह हमारी भाषा भी पुरुष प्रधान है। अत: नारीवादी रचनाकारों के लिए आवश्यक है कि वह अपनी भाषा को पुरुषवादी वर्चस्व से मुक्त करें। आवां उपन्यास की भाषा भी पुरुष प्रधान भाषा ही है। इसके बावजूद लेखिका ने बीच-बीच में नवीन शब्दों और भाषा का उपयोग किया है, जो सराहनीय है।

2. अध्ययन का महत्व :

इस शोध के द्वारा एक नवीन दृष्टिकोण से आवां उपन्यास का अध्ययन किया जाएगा। साथ ही स्त्री भाषा की आवश्यकता तथा पुरुष प्रधान भाषा की आलोचना की जाएगी। आवां का अध्ययन भाषा की दृष्टि से की जाएगा।

3. अध्ययन का शीर्षक :

प्रस्तुत शोध-पत्र का शीर्षक है 'स्त्री भाषा की दृष्टि से आवां उपन्यास का अध्ययन।'

4. अध्ययन का उद्देश्य :

आलोच्य विषय पर शोधपरक अध्ययन का उद्देश्य है-आवां का भाषा की दृष्टि से मूल्यांकन करना तथा स्त्री भाषा की आवश्यकता को सामने लाना।

5. अध्ययन का सीमांकन :

इस अध्ययन का सीमांकन स्त्री भाषा का सैद्धांतिक पक्ष, भाषा निर्माण का आधार, भाषा पर पुरुष नियंत्रण, स्त्री चुप्पी की समस्या और आवां में स्त्री भाषा है।

6. अध्ययन में व्यवहृत पद्धति एवं उपाय :

प्रस्तुत शोध-पत्र में आधारभूत सामग्री के रूप में आवां और संबंधित समीक्षात्मक ग्रंथों की सहायता ली गई है तथा इसमें अपनाई गई पद्धति व्याख्या-विश्लेषणात्मक और आलोचनात्मक है। साथ ही एम.एल.ए. शोध पद्धति को यहाँ आधार रूप में अपनाया गया है।

7. विश्लेषण एवं निर्वचन :

स्त्री भाषा का सैद्धांतिक पक्ष :

स्त्रीवादियों ने स्त्री भाषा की प्रकृति पर विचार किया है। इस संबंध में तीन बातें सामने आई हैं :-

(क) पुरुष भाषा का शुद्धिकरण करके अलग स्त्री भाषा का निर्माण किया जाए।

(ख) पुरुष प्रधान भाषा के संबंध में स्त्रीवादियों ने सबसे ज्यादा विरोध भाषा के कामुक रूपों को लेकर किया है, क्योंकि भाषा पुरुष प्रधान होते हुए भी कामुक शब्द स्त्री विरोधी हैं। पुरुष प्रधान भाषा में स्त्री को हीन साबित करने का प्रयास किया गया है। जहाँ हमारी भाषा

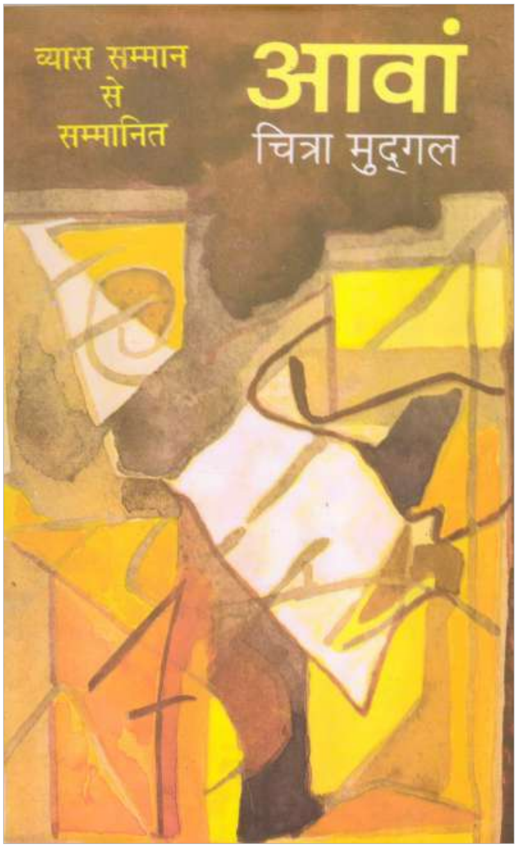

पुरुष वाचक प्रधान है यानी भाषा में जितने भी सकारात्मक शब्द हैं, वह पुरुष प्रधान हैं। लेकिन जितने भी नकारात्मक शब्द हैं वे स्त्री प्रधान हैं, जिसका विरोध किया जाना आवश्यक है।

(ग) तीसरा महत्वपूर्ण तत्व है कि जिस भाषा का व्यवहार स्त्री-पुरुष दोनों समान रूप से करते हैं, वह वास्तव में हमारी भाषा एक केंद्रीय भाषा है, क्योंकि इस भाषा में स्त्री का कोई महत्व नहीं है। महत्व है तो केवल पुरुष का। स्त्रियों के पास जो भाषा है, वह पुरुषों के अनुकरण पर आधारित है। प्रसिद्ध स्त्रीवादी विचारक डेबोरॉह कैमेरॉन भाषा के संदर्भ में प्रश्न उठाते हुए कहती हैं - *क्या हम भाषा में कामुकता के तत्व को छाँट सकते हैं।* (सिंह 2008 : 103)

भाषा के संबंध में स्त्रीवादियों के विचारों का विरोध करते हुए यह माना गया कि यह भाषा पर हमला है। पुरुष प्रधानता को व्याकरणिक कोटी कह कर मुँह

नहीं मोड़ा जा सकता है। अगर स्त्री भाषा को स्थापित किया गया तो उससे स्त्री की सामाजिक और राजनीतिक आधारों में भी परिवर्तन आएगा, जो पुरुष प्रधान है। उदाहरणस्वरूप इस बात को लिया जा सकता है कि हमारे देश की राजनीति में राष्ट्र के प्रधान को 'राष्ट्रपति' कहा जाता है, जो कि पुरुष वाचक शब्द है। लेकिन राष्ट्र की प्रधान कोई महिला बनती है तो उसके लिए कोई अलग शब्द नहीं है। स्त्रीवादी शब्द के अभाव में उसे राष्ट्रपति ही कहा जाता है।

8. स्त्रीभाषा के संबंध में तीन बातें :

8.1 भाषा निर्माण का आधार :

इस दृष्टिकोण के विकास में प्रसिद्ध स्त्रीवादी भाषा चिंतक डेल स्पेण्डर का योगदान महत्वपूर्ण है। इस दृष्टिकोण के अनुसार, ''भाषा हमारे परिवेश के निर्माण का प्रमुख जरिया है। यह हमारी विश्वदृष्टि का भी निर्माण करती है। हम जैसी भाषा बोलते हैं, जिस तरह का वाक्य गठन करते हैं, भाषा में व्याकरणिक सत्ताओं को जिस तरह से रखते हैं, बल पैदा करते हैं, यह सब कुछ इस दृष्टिकोण के अंतर्गत शामिल है।'' (सिंह 2008 : 103)

यह दृष्टिकोण भाषा की संरचना और वर्चस्व के सत्य पर आधारित है। भाषा में किसी वस्तु का वर्णन उसकी भौतिक प्रकृति के आधार पर नहीं होता है, बल्कि वर्चस्व के नियम पर आधारित है। चूँकि भाषा के निर्माण और नामकरण में पुरुष शामिल थे, स्त्रियों को भाषा के निर्माण और नामकरण की परिधि से दूर रखा गया। इस का यह अर्थ नहीं कि स्त्रियाँ भाषा के निर्माण और नामकरण के संदर्भ में अयोग्य थीं, बल्कि पितृसत्ता ने जान-बूझकर उसे उस परिधि से बाहर रखा है। माँ बनना सबसे अधिक कष्टदाई स्थिति होती है। ऐसी भी धारणा कुछ स्त्रियों की हो सकती है। लेकिन हमारे पुरुषवादी समाज में माँ बनना सौभाग्य की बात मानी जाती है।

8.2 भाषा पर पुरुष नियंत्रण :

भाषा पर पुरुष नियंत्रण की धारणा का विकास करते हुए शर्ले अर्डेनर ने भाषा के सामाजिक खाते की बात की। शर्ले अर्डेनर के अनुसार, ''स्त्रियों की चुप्पी के कई आयाम होते हैं। सामाजिक विमर्श के रजिस्टर में अर्थ और रूप दोनों पर पुरुष का नियंत्रण होता है। ये पुरुष के द्वारा निर्मित और नियंत्रित होता है। इस कारण पुरुष सार्वजनिक वक्तृता में ज्यादा सहूलियत महसूस करते हैं, क्योंकि ये मूलत: उनका माध्यम हैं। अपने मूल्यों के आधार पर ही उन्होंने भाषा का सामाजिक रजिस्टर बनाया है। स्त्रियों के लिए इसमें इतनी भर जगह है कि वे बातचीत की कला में आसानी महसूस करें जबकि उनकी कम्फोर्ट लेबल का केवल ध्यान रखा गया है। पुरुषों के लिए सारा व्यापार फुसलाने का (पर्सुएशन) है।'' (सिंह 2008 :104)

भाषा पर पुरुषों का हमेशा से नियंत्रण रहा है। अगर कोई स्त्री भाषा में दक्षता प्राप्त कर ले तो भी उसे वह महत्व समाज में नहीं मिलता है, जो एक पुरुष को मिलता है, क्योंकि भाषा योग्यता के आधार पर यह नहीं देखा जाता है। यहाँ भी स्त्री और पुरुष को दो खाँचों में बाँट कर देखा जाता है। भाषा पर पुरुष का नियंत्रण रहा है। यही कारण है कि सार्वजनिक संस्थानों पर पुरुष वक्ता जितनी दक्षता और सहजता से अपनी बात को रख पाता है, स्त्री उतनी दक्षता और सहजता से नहीं रख पाती है। अगर कोई स्त्री पूर्ण दक्षता के साथ सार्वजनिक स्थलों पर बोलती भी है तो उसे सुना नहीं जाता है।

8.3 स्त्री चुप्पी की समस्या :

स्त्री के साथ चुप्पी शब्द का घनिष्ठ संबंध है। प्रश्न यह उठता है कि अगर स्त्री चुप्पी का भंग नहीं होगी तो फिर स्त्री अस्मिता और स्वतंत्रता की लड़ाई कैसे लड़ी जाएगी। स्त्री जब बोलती है तो केवल भावों को ही व्यक्त नहीं करती है, बल्कि वह अपने नए संसार का निर्माण भी करती है। अक्सर देखा जाता है कि सार्वजनिक स्थलों पर स्त्रियाँ चुप ही रहती हैं। सार्वजनिक स्थलों पर ही क्यों, अगर हम ध्यान से देखें तो यह स्पष्ट होता है कि परिवार में भी स्त्रियाँ चुप ही रहती हैं। सारे फैसले पुरुष लेता है।

साधारणत: माना जाता है कि स्त्री और पुरुष जब एक-दूसरे से बात करते हैं तो उनकी बात करने का ढंग अलग होता है। जब स्त्री-स्त्री से बात करती है तब

उनकी बात करने का ढंग अलग होता है। और जब पुरुष-पुरुष से बातचीत करता है तो उस समय उनका बात करने का ढंग अलग होता है।

इस उपन्यास के आरंभ में ही देखा जा सकता है कि नमिता और स्मिता दो सहेलियाँ आपस में लोकल के डिब्बों में पुरुषों की कामुक हरकतों पर चर्चा करते हुए सहयोगी की भूमिका निभाती हैं। नमिता और हर्षा की बातचीत का नमूना देखा जा करता है :-

'कामकाजी महिलाओं के लिए सहूलियतें बंबई में होनी जरूरी है।'

'मसलन ?'

'यह कि महिलाओं के लिए विशेष गाड़ियाँ चलाई जानी चाहिए पूरी की पूरी'

'दूसरी'

'प्लेटफार्म नितांत अलग होने चाहिए। उनके आने-जाने की सीढ़ियाँ और पुल भी'

'अखबार के दर्शन कब से नहीं हुए तुझे ?'

'क्यों ? ...'

'...रेलवे वाले कम अंतर्यामी नहीं। तेरी मरजी का अनुमान हो गया था उन्हें, सो उन्होंने कार्यालय के समय पर चर्चगेट और छत्रपति शिवाजी टर्मिनस, दोनों ही स्थानों से महिलाओं के लिए पूरी की पूरी लोकलें शुरू कर दी हैं। काफी अरसा हो गया।'

'यह तो बड़ी अच्छा खबर है।'

(मुद्‌गल 2015 : 14-15)

लेखिका इस तथ्य को भी सामने लाती हैं कि जब पुरुष आपस में बातचीत करते हैं तो वह बातचीत न होकर प्रतिद्वंद्वी की भूमिका निभाते हुए नजर आते हैं। पवार और उसके कुछ आघाड़ी को मित्र सुनंदा के बारे में जब बातचीत करते हैं तो वे आपस में ही झगड़ बैठते हैं:-

'राय से हम इत्तिफाक करें, न करें, सुनने में कैसा हर्ज ?' अकरम ने तुरंत हस्तक्षेप किया, 'और शायद गुस्से और उबाल में हम अपने तौर-तरीके भूल रहे। पवार साहब ने मकरंद के लिए जो टिप्पणी की ...

'अवाम के हक में हम इस तरह से काम कर सकेंगे ?' क्षुब्ध अकरम का स्वर उत्तेजित हो आया।

दोनों हाथ उठाकर पवार ने व्यर्थ तूल पकड़ रहे विवाद को बरजा।

'जो हो गया, सो हो गया। सोचना वह है, जो नहीं होना चाहिए। अकरम की चिंता गलत नहीं। मुद्दों को व्यक्तिगत दुराग्रहों से ऊपर रखने की जरूरत है।'

'पचासो बार दोहरा चुका हूँ मैं'

'और फिर .... अपने स्वाभिमान के साथ सुनंदा को जीने का हक नहीं ?'

'वह हक आप नहीं देंगे उसे ?'

(मुद्‌गल 2015:122)

इन पंक्तियों में विषय पर चर्चा कम आपस में द्वंद्व अधिक दिखता है। तीनों अपने आप को एक-दूसरे के ऊपर अपनी सत्ता स्थापित करना चाहते हैं। जबकि नमिता और हर्षा के वार्तालाप में द्वंद्व का भाव नजर नहीं आता है, बल्कि एक समस्या को रखती है तो दूसरी समस्या का समाधान पेश करती है। इस तरह लेखिका ने नारी और पुरुष के वार्तलाप के ढंग और प्रकृति को सामने रखा है।

जब पुरुष और स्त्री वापस में बातचीत करते हैं तो वह बातचीत नहीं रह जाती, क्योंकि उस समय स्त्री केवल श्रोता मात्र रह जाती है। वह बातचीत केवल पुरुष का रह जाता है, जिसकी अभिव्यक्ति लेखिका ने नमिता और पवार के माध्यम से कई स्थानों पर व्यक्त किया है:-

'खाना तो तुम खा नहीं पाई होंगी ?'

'नहीं'

'यानी कि तुम्हें पहले कुछ खिलाया-पिलाया जाए। कहां....'

'लेक चलें ? सांझ में बैठकर चीज सैंडविच के साथ फिल्टर कॉफी पीएं ?'

'बहुत रमणीक जगह है, बांध लेगी तुम्हें। तीनों ओर से पहाड़ियों के अंक में दुबकी विशाल झील को झुरमुट में निरखते हुए फिल्टर के गरम घूंट अद्भुत आंनद से भर देते हैं। ऐसा लगता है मानों की आलोजड़ित सतह हमारी गेह चप्पुओं के बगैर डोंगी का संतरण कर रही हो।'

'सच कहूँ तो आज वही निश्चिंतता अपेक्षित है।

बड़ा खटाऊ दिन बीता'

'कभी बैठी हो सांझ में ?' (मुद्‌गल 2015 :124)

पूरे वार्तालाप में नमिता सहयोगी की भूमिका में कहीं नजर नहीं आती है, बल्कि वह मूक श्रोता की भाँति पवार की बातें सुनती और उसके पीछे चलती हुए दिखाई देती है। मन में प्रश्न आने पर भी वह पवार से कुछ नहीं कह पाती है। पवार खुद प्रश्न पूछता है और उत्तर भी स्वयं देता है। एक अन्य स्थान पर पवार नमिता से कहता है :-

'... दरअसल तुमसे बातें करने में इसलिए मजा आता है कि तुम मुठभेड़ से बचती हो। तुम सा गूंगा श्रोता मेरे लिए अन्यत्र दुर्लभ है।' (मुद्‌गल 2015:257)

लेखिका ने इस तथ्य को भी सामने रखा है कि पुरुष स्त्री से बातचीत करते समय भद्र और अभद्र शब्दों में भेद नहीं करता। वह बड़ी ही आसानी से स्त्री के सम्मुख अभद्र भाषा का व्यवहार करता है, जबकि स्त्रियाँ प्राय: ऐसा करने में झिझकती हैं। पवार नमिता से सुनंदा के बारे अभद्र भाषा का व्यवहार करते हुए कहता है :-

'सड़क पर जब भी कोई कुतिया आवारा घूमती नजर आती है, कामोत्तेजित कुत्ते एक साथ उसकी दुम उठा....' ...इस क्रांतिदूती सुनंदा के होश बहुत जल्द ठिकाने आ जाएंगे।' (मुद्‌गल 2015:129)

नए शब्दों का प्रयोग :

अदहन, लजाए सांप, नागफनी, पैकिंग गर्ल, जुगनू फुरफुराए, छुटी रोटी सी कोयला, पगहा-तुड़ाए बछिया सी, स्त्री के लिए- चूल्हे में भुने आलू सी, चुसी गुठली सी आदि।

पुरुषवादी शब्द के तर्ज पर स्त्रीवादी शब्द :

मलिच्छ, कटखनी कुतिया, फूटी मटकुयाँ, बूढ़ी शेरनी आदि।

उपन्यास में आईं स्त्री प्रधान गालियाँ :

साआ..ली, रंडीरोना, तिरियाचरित्र, रंडीबाजी, हरामजादी, बौड़मबैसी, नागिन, कक्कटी, कुलबोरन, कमीनी, कुकुरी, कुत्तिया, छिनरी, कुटनी, हत्यारिन, डायन, बोनड़ी, शीलभंग आदि।

प्रतीक :

मछली लड़की के लिए, चुसी गुठली जवानी ढलने के बाद की नारी का प्रतीक आदि।

9. निष्कर्ष :

आवां उपन्यास की भाषा पुरुष प्रधान होते हुए भी इसमें कुछ नवीनता देखने को मिलती है। लेखिका ने इस तथ्य को सामने रखा है कि स्त्रियाँ जब आपस में बात करती हैं तो वह सहयोगी की भूमिका अदा करती हैं, जिसकी अभिव्यक्ति नमिता और स्मिता के माध्यम से हुई है।

जब पुरुष पुरुष से बातचीत करता है तो वह प्रतिद्वंद्वी की भूमिका अदा करता है, जिसकी अभिव्यक्ति उपन्यास में पवार और उसके मित्रों के माध्यम से लेखिका ने किया है तथा नमिता और पवार के माध्यम से लेखिका ने यह स्पष्ट किया है कि जब पुरुष और स्त्री आपस में बात करते हैं तो वह बातचीत स्त्री-पुरुष की बातचीत न होकर केवल पुरुष का होती है, स्त्री केवल श्रोता की भूमिका अदा करती है। लेखिका ने उपन्यास में पुरुषवादी शब्दों के तर्ज पर स्त्रीवादी शब्दों का प्रयोग किया है। साथ ही स्त्री प्रधान गालियों का प्रयोग स्त्री-पुरुष दोनों समान रूप से किए हैं। उपन्यास में पारंपरिक प्रतीकों का प्रयोग हुआ है, साथ ही लेखिका ने कुछ नवीन शब्दों का भी उपयोग किया है। ❑

सहायक ग्रंथ सूची :

1. मुद्‌गल,चित्रा, आवां, आठवां संस्करण, दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, 2015
2. सिंह, सुधा, ज्ञान का स्त्रीवादी पाठ, प्रथम संस्करण, दिल्ली : ग्रंथ शिल्प, 2008.
3. चव्हाण, अर्जुन, समकालीन उपन्यासों का वैचारिक पक्ष, प्रथम संस्करण, दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2012
4. थोरात, गोरक्षा, चित्रा मुद्‌गल के कथा साहित्य का अनुशीलन, कानपुर : अन्नपूर्णा प्रकाशन, 2009

विमर्श

यशपाल का व्यक्तित्व एवं कृतित्व : एक अध्ययन

डॉ. पल्लबी दास

(शिक्षिका, आदर्श विद्यालय, कोकराझार)
पता : मध्य मेतुवाकुची
डाक : बरपेटा, असम-781301
ई-मेल :
pallabidas10@gmail.com
मो.98545-27917

सार-संक्षेप :

हर एक व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व रहता है। हमारे मार्क्सवादी विचारधारा के कथाकार यशपाल भी एक अनन्य व्यक्तित्व के अधिकारी थे। वे अपने जीवन में हमेशा साहस के साथ आगे बढ़े। यशपाल अपने विचारों से हमेशा आधुनिक थे, लेकिन वे अपने रहन-सहन में अत्यंत ही साधारण थे। यशपाल की साहित्यिक देन अतुलनीय है। उन्होंने ग्यारह उपन्यास, सत्रह कहानी संग्रह, एक कथा नाटक, तीन यात्रा-साहित्य, नौ निबंध संग्रह, पाँच अनुवाद साहित्य एवं अपने क्रांतिकारी जीवन का संस्मरण 'सिंहावलोकन' की भी सृष्टि की। वे पत्रकार भी थे। हिंदी साहित्य की निधि को यशपाल ने अपने कृतियों से काफी समृद्ध किया और बहुत आगे ले गए।

भूमिका :

यशपाल आधुनिक हिंदी साहित्य के कथाकारों में प्रमुख हैं। वे भारतीय संस्कृति के पुजारी हैं। वे एक साथ क्रांतिकारी एवं लेखक दोनों रूपों में जाने जाते हैं। हिंदी के सुप्रसिद्ध सामाजिक यथार्थवादी कहानीकारों में यशपालजी का नाम प्रेमचंद के बाद आता है। वे मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित हैं।

यशपालजी का व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक है। वे हमेशा जीवन के संघर्षों का सामना साहस के साथ करते थे और परिस्थिति से लड़कर मार्ग बना लेते थे। उनके व्यक्तित्व में पलायनवादी रूप देखने को नहीं मिलता है।

बीज शब्द :

यशपाल, व्यक्तित्व, कृतित्व, साहित्य, हिंदी आदि।

अध्ययन का महत्व :

यशपाल का व्यक्तित्व असाधारण है एवं उनकी साहित्यिक देन अतुलनीय है। उनके आकर्षणीय व्यक्तित्व एवं महत्वपूर्ण रचनाओं का अध्ययन बहुत ही आवश्यक है।

अध्ययन का परिसर :

यशपाल के व्यक्तित्व और उनकी साहित्यिक कृतियों को ही इस

अध्ययन के अंतर्गत लिया जाएगा।

अध्ययन में व्यवहृत पद्धति :

इस अध्ययन के लिए वर्णनात्मक पद्धति का प्रयोग किया जाएगा।

अध्ययन का उद्देश्य :

यशपाल के व्यक्तित्व और साहित्यिक देन के बारे में लोगों तक जानकारी पहुँचाना ही इस अध्ययन का उद्देश्य है।

यशपाल का व्यक्तित्व :

यशपाल अनन्य व्यक्तित्व के अधिकारी हैं। साधारणत: ही लोग उनके व्यक्तित्व के प्रति आकर्षित हो जाते हैं। यशपाल साधारण रहन-सहन वाले व्यक्ति होते हुए भी उनमें सतत आधुनिकता की प्यास एवं जिज्ञासा की प्रवृत्ति जुड़ी हुई है और इसका प्रमाण हमें निम्नोक्त अभिव्यक्ति के द्वारा प्राप्त होता है - यशपाल के साथ साक्षात्कार के अनुभवों को दोहराते हुए हिंदी कहानी के कहानीकार कमलेश्वर ने लिखा था, ''मेरे सामने यशपाल का एक और ही रूप उभरता है। वह एक ठोस घर में रहने वाला और सामान्य कारोबारी-सा दीखने वाला व्यक्ति....जिसके चारों तरफ विचारों की पवित्र आत्माएँ भटक रही हैं और जो दिमागों के हर बंद दरवाजे पर दस्तक देता हुआ पूछ रहा है - कोई और फूल खिला? कोई और कली आई?''[1] लखनऊ का कॉफी हाउस यशपाल की प्रिय जगह है, जहाँ शाम को एकत्र अनेक लोगों से वे राजनीतिक, आर्थिक एवं कला संबंधी बातों पर बहस करते हैं-"लखनऊ में संध्या समय उनका अड्डा कॉफी हाउस में लगता है। वहाँ इनके कुछ ऐसे मिलने वाले हैं, जो नित्य पत्र-पत्रिकाएँ पढ़कर आते हैं। वहाँ राजनीतिक, आर्थिक, कला सभी बातों पर खूब बहस होती है।''[2] अपने विचार, वेशभूषा एवं व्यवहार सभी में वे आधुनिक हैं। गुरुकुल के वातावरण में बचपन के आरंभिक वर्ष बिताने के बावजूद उनके विचारों में कहीं पुरानापन नहीं दिखाई देता। उनका यही व्यक्तित्व उनके संपूर्ण साहित्य में प्रतिबिंबित है, आरंभ से लेकर आज तक की संपूर्ण रचनाएँ, वह कहानी हो या उपन्यास,

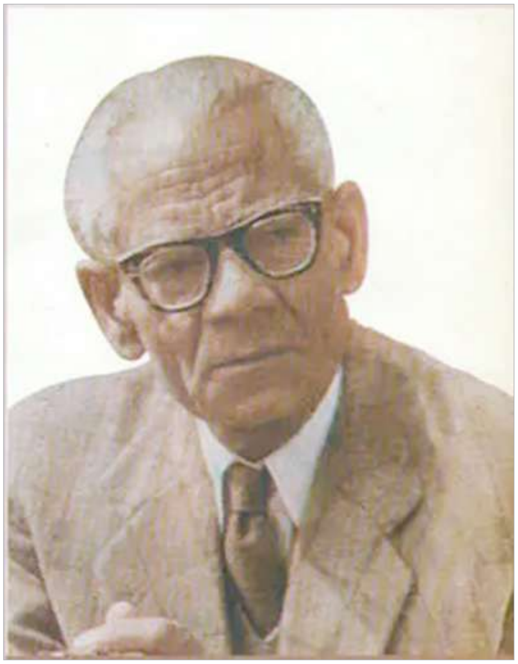

बदलते परिवेश के अनुकुल नए विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम है।[3]

यशपाल से मिलने वालों को उनके बाह्य स्वरूप से प्राय: निराशा होती है, क्योंकि उनके चेहरे, मुद्रा या बातचीत में कहीं कथाकार जैसी कोई भंगिमा नहीं मिलती। यशपाल के संबंध में किसी ने इस तरह कहा है, ''मैंने दो-तीन बार गौर से यशपाल को देखा-उनमें मुझे कुछ भी खास नजर नहीं आ रहा था, न वे क्रांतिकारी लग रहे थे, और न साहित्यकार।''[4] साधारणत: उनके व्यक्तित्व की अनुशासनबद्धता का सभी के ऊपर प्रभाव पड़ता है। नए परिचितों से वह बहुत संक्षिप्त बातचीत करते। अंतत: हम कह सकते हैं कि यशपालजी का व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली है।

यशपाल का कृतित्व :

यशपाल साहित्य सर्जन में अत्यंत धनी हैं। उन्होंने गद्य की अनेक विधाओं में अपना लेखन कार्य किया। उनकी रचनाओं में उपन्यास, कहानी, निबंध, यात्रा साहित्य, नाटक आदि प्रमुख रूप से प्राप्त होते हैं। यहाँ नीचे उनकी रचनाओं के बारे में विस्तृत रूप से वर्णन किया जा रहा है-

उपन्यास : यशपाल की साहित्य रचना की यात्रा में उपन्यास की यात्रा बहुत लंबी है। उन्होंने अपने लेखन के लगभग पैंतीस वर्षों में काल क्रमानुसार इन ग्यारह उपन्यासों की रचना की-

1. दादा कॉमरेड (1941)
2. देशद्रोही (1943)
3. दिव्या (1945)
4. पार्टी कॉमरेड (1946)
5. मनुष्य के रूप (1949)
6. अमिता (1956)
7. झूठासच : वतन और देश (1958) और झूठासच : देश का भविष्य (1960)
8. बारह घंटे (1963)
9. अप्सरा का शाप (1965)
10. क्यों फँसे (1968) और
11. मेरी तेरी उसकी बात (1974)

कहानी संग्रह : उपन्यास यशपाल की केंद्रीय रचना विधा है, लेकिन लेखन की शुरुआत उन्होंने कहानी से ही की थी। यशपाल के उल्लेखनीय कहानी संग्रह हैं -

1. पिंजरे की उड़ान
2. वो दुनिया
3. तर्क का तूफान
4. अभिशप्त
5. ज्ञानदान
6. भस्मावृत्त चिंगारी
7. फूलों का कुर्ता
8. धर्मयुद्ध
9. उत्तराधिकारी
10. चित्र का शीर्षक
11. तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूँ
12. ओ भैरवी
13. उत्तमी की माँ
14. सच बोलने की भूल
15. खच्चर और आदमी
16. भूख के तीन दिन, और
17. लैम्पशेड।

यशपाल ने सन 1934 से लेकर 1938 तक जेल में रहते समय जो कहानियाँ लिखीं, उन कहानियों का संग्रह वर्ष 1939 में 'पिंजरे की उड़ान' नाम से छपा था।

सन 1939 में 'पिंजरे की उड़ान' से लेकर सन 1968 में प्रकाशित 'भूख के तीन दिन' तक यशपाल की कहानियों के 16 संग्रह प्रकाशित हुए, जिनमें संकलित कहानियों की कुल संख्या 201 हैं। उनके मरणोपरांत 'लैम्पशेड' नाम से एक संग्रह सन 1977 में प्रकाशित हुआ था। लेकिन इसमें मुख्यत: आखिरी दौर की उनकी कमजोर कहानियाँ हैं। यशपाल की आरंभिक कहानियाँ भावुकता और रोमानियता के विरुद्ध जीवन के प्रति एक यथार्थ और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण पर बल देती हैं। सामाजिक परिवर्तन की दिशा में अपने विचारों को वे बहुत संयत और समझदारी से उपयोग करते हैं।

निबंध : यशपाल ने अपने निबंधों द्वारा हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। यशपाल के कई निबंध संग्रहों में उल्लेखनीय हैं -

1. मार्क्सवाद
2. गांधीवाद की शव-परीक्षा
3. रामराज्य की कथा
4. देखा सोचा समझा
5. बीबी जी कहती हैं मेरा चेहरा रोबीला है
6. न्याय का संघर्ष
7. चक्कर क्लब
8. बात बात में बात, और
9. जग का मुजरा आदि।

यशपाल हिंदी के मार्क्सवादी कथाकार के रूप में ख्यात हैं। प्रेमचंद के बाद की पीढ़ी के जिन कथाकारों ने अपने कथा-लेखन की नई भूमि और नई कथा दृष्टि का विकास करते हुए हिंदी कथा साहित्य का इतिहास निर्मित किया है, उनमें यशपाल का विशेष महत्व है।

यात्रा साहित्य : अपने समाज को देखने-समझने और अपने आदर्शों के अनुरूप उसे गढ़ने का सबसे अच्छा साधन उनके लिए यात्राएँ थीं। उन्होंने अपनी यात्राओं को लेकर कई यात्रा वृत्तांत लिखे थे। यशपाल द्वारा लिखे गए उल्लेखनीय यात्रा वृत्तांत हैं -

1. लोहे की दीवार के दोनों ओर
2. राह बीती
3. स्वर्गोद्यान बिना साँप आदि

कथा नाटक : यशपाल का एकमात्र कथा नाटक है- नशे, नशे की बात (1952)। इस कथा नाटक के तीन खंड हैं - (क) नशे, नशे की बात, (ख) रूप की परख और (ग) गुडबाई दर्दे-दिल।

सिंहावलोकन : यशपाल के क्रांतिकारी जीवन का संस्मरण है 'सिंहावलोकन'। इसमें उन्होंने अपनी दृष्टि का मूल्यांकन किया है। यशपाल के क्रांतिकारी जीवन के संस्मरण 'सिंहावलोकन' के तीन भाग प्राप्त होते हैं। इनमें से पहला भाग सन 1950 में, दूसरा भाग सन 1952 में और तीसरा भाग सन 1955 में प्रकाशित हुआ था।

अनुवाद साहित्य : यशपालजी एक मौलिक साहित्यकार के साथ अनुवाद साहित्यकार भी थे। अनुवाद के क्षेत्र में वे सिद्धहस्त थे। यशपाल की रचना में शाब्दिक और भावानुवाद का समन्वय देखने को मिलता है। यशपाल की अनूदित रचनाएँ इस प्रकार हैं -

1. पक्का कदम
2. जनानी ड्योढ़ी
3. फसल
4. चलनी में अमृत, तथा
5. जुलेखां आदि।

पत्रकारिता : यशपाल ने लखनऊ में 75 रुपए मासिक पर उप-संपादक की नौकरी की थी। परंतु यह नौकरी पौने दो महीने ही चली। इसके बाद नवंबर , 1938 से 'विप्लव' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ था।

निष्कर्ष :

यशपाल का संपूर्ण जीवन ही अनन्य है। वे बचपन से ही साहसी व्यक्तित्व के अधिकारी हैं। जीवन के पथ पर वे साहस के साथ आगे बढ़े। वे एक सशक्त क्रांतिकारी भी हैं। यशपाल का व्यक्तित्व दूसरों को प्रभावित करने वाला है। वे आधुनिक विचार वाले और अनुशासन प्रिय व्यक्ति हैं।

यशपाल ने गद्य की प्राय: सभी विधाओं में लिखा है। यशपाल की छवि एक दुर्धर्ष और अपने विचारों को प्रतिपादित करने के लिए विवाद के तत्पर लेखक के रूप में हमें प्राप्त होती है। यशपाल ने अपनी लेखनी के द्वारा समाज में व्याप्त विभिन्न विसंगतियों को अंकित किया है। यशपाल की लेखनी में यथार्थ के दर्शन होते हैं। यशपाल हिंदी के एक सफल साहित्यकार हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. यशपाल : जीवन दर्शन एवं साहित्य - उमा सिन्हा, पृष्ठ - 13
2. वही, पृष्ठ - 14
3. वही, पृष्ठ - 13
4. वही, पृष्ठ - 14

सहायक ग्रंथ सूची :

1. आनन्द, सम्पादक : यशपाल रचनावली : भाग-1, अलाहाबाद-211001, लोक भारती प्रकाशन, 2007
2. मधुरेश, सम्पादक : यशपाल रचना संचयन, नई दिल्ली - 110001, साहित्य अकादेमी, 2007
3. सिन्हा, उमा : यशपाल-जीवन दर्शन एवं साहित्य, नई दिल्ली-110005, आशा प्रकाशन गृह, 1998
4. सहगल, मनमोहन : कथाकार यशपाल, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, 2007

विश्लेषण

स्त्री चेतना के धरातल पर मन्नू भंडारी की कहानियाँ : एक विश्लेषण

डॉ. नूरजहान रहमातुल्लाह

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी
असम-781001
मो. 9435161974

सार-संक्षेप :

वर्तमान कथा साहित्य में स्त्री की दुखद यंत्रणा, शोषित पराधीन जीवन, स्त्री की व्यथा और रूढ़िवादिता को निर्भीक ढंग से अभिव्यक्त करने का प्रयास किया जा रहा है। स्त्री स्वतंत्रता आज भी प्रासंगिक है और यह तब तक बनी रहेगी, जब तक स्त्री समाज में पुरुष के समानाधिकार प्राप्त ना कर ले। आधुनिक हिंदी साहित्य में नारी मुक्ति, नारी सशक्तिकरण तथा स्त्री विमर्श की महिला लेखिकाओं में मन्नू भंडारी प्रमुख हैं। वे एक सशक्त नारीवादी साहित्यकार हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में नारी के यथार्थ जीवन का अंकन कर, नारी को परिस्थिति के अनुसार जूझने की सलाह दी है। नारी को कमजोर होने के बजाय साहस और आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा दी है। मन्नू भंडारी की कई कहानियाँ दुर्बल नारी के पक्ष में उठाई गई आवाज हैं। उनकी रचनाओं को समाज में नारी की वास्तविक स्थिति के अत्यंत महत्वपूर्ण दस्तावेजों के रूप में देखा जा सकता है। उन्होंने अपनी कहानियों में सिर्फ निम्न वर्गीय नारी का ही नहीं, बल्कि मध्यम और उच्च वर्ग की नारी के संघर्ष और शोषण को भी चित्रित किया है।

बीज शब्द :

नारी, जीवन, चेतना, शोषण, यथार्थबोध, मुक्ति, आत्मनिर्भरता।

मूल आलेख :

समाज में अनादिकाल से ही स्त्री शोषित और पराधीन है। समाज आज आधुनिकता के रंगों में रंगा हुआ है, लेकिन मनुवादी भारतीय लोगों की मानसिकता वही की वही है। आधुनिक काल में तथा इक्कीसवीं सदी में यद्यपि नारी निरंतर आगे बढ़ रही है, परंतु विचारणीय यह है कि संकुचित मानसिकता वाले लोगों के लिए नारी आज भी हेय है। समाज की मानसिकता पर नजर डालने से यही ज्ञात होता है कि मानो आज भी आधुनिक नारी दबी हुई है। स्त्री का संघर्ष सदियों से ही सामाजिक जीवन और पारिवारिक जीवन

में विद्यमान है । स्त्री सदैव एक निर्दिष्ट मानदंड की यात्री है, परंतु समाज उसे लगातार उस मानदंड से मुक्त होने का मार्ग प्रदान नहीं करता। बल्कि उसे समाज के हर क्षेत्र में बार-बार दबाने की कोशिश की जाती है। युग परिवर्तन हुआ, परंतु स्त्री के प्रति अवहेलित दृष्टिकोण आज भी पितृ सत्तात्मक समाज में दिखाई देता है। 21वीं सदी की नारी समाज के विभिन्न क्षेत्रों में पुरुष द्वारा परिचालित है । नारी सदैव बंधन मुक्त जीवन जीना चाहती है और स्वयं की अस्मिता तलाश करती है। लगभग सौ वर्ष पहले 'नोरा' ने 'हेल्मर' से पूछा- 'तुम क्या मानते हो, मेरा सबसे पवित्र कर्तव्य क्या है ?' और जब उसने कहा, 'अपने पति और बच्चों के प्रति तुम्हारा कर्तव्य' तो वह असहमत हुई और बोली, 'मेरा एक और कर्तव्य है, उतना ही पवित्र अपने प्रति मेरा कर्तव्य... मैं मानती हूँ कि सबसे पहले मैं मनुष्य हूँ । उतने ही जितने कि तुम हो... या हर सूरत में मैं वह बनने की कोशिश तो करूंगी ही। मैं अच्छी तरह से जानती हूँ तोरवाल्ड के ज्यादातर लोग तुमसे सहमत होंगे, किताबों से तुम्हें इसका परवाना मिला है, लेकिन अब मैं, ज्यादातर लोग जो कहते हैं और जो किताबों में लिखा है उससे संतुष्ट नहीं हो पाऊँगी, मुझे चीजों पर खुद सोच-विचार करना होगा और उन्हें समझने की कोशिश करनी होगी।' (रेखा, 2016 : 10)

स्त्री ही स्त्री के मन को समझ सकती है, इसलिए नारी के दुखपूर्ण जीवन अनुभव नारी लेखिकाओं में अधिक देखने को मिलता है । स्त्री अपने संपूर्ण व्यक्तित्व में स्वतंत्र रूप में जी सके यही स्त्री मुक्ति का आयाम है। आधुनिक हिंदी साहित्य में नारी मुक्ति, नारी सशक्तिकरण तथा स्त्री विमर्श की महिला लेखिकाओं में मन्नू भंडारी प्रमुख हैं। वे एक सशक्त नारीवादी साहित्यकार हैं। हिंदी साहित्य में उनकी कहानियाँ अमूल्य रत्न स्वरूप हैं, स्त्री के यथार्थ दस्तावेज हैं। उनकी कहानियों के संकलन हैं- 'एक प्लेट सैलाब', 'मैं हार गई', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर', 'यही सच है', 'त्रिशंकु', 'आंखों देखा झूठ' आदि ।

मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों में नारी के यथार्थ जीवन का अंकन कर, नारी को परिस्थिति के अनुसार जूझने की सलाह दी है। नारी को कमजोर होने के बजाय साहस और आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा दी है। मन्नू भंडारी की कई कहानियाँ शोषित, पीड़ित तथा कुचली हुई नारी के पक्ष में उठाई गई आवाजें हैं। उनकी रचनाओं को समाज में नारी की वास्तविक स्थिति के अत्यंत महत्वपूर्ण दस्तावेजों के रूप में देखा जा सकता है। उन्होंने अपनी कहानियों में निम्न वर्गीय नारी का ही नहीं, बल्कि मध्यम और उच्च वर्ग की नारी के संघर्ष को भी उजागर किया है। मन्नू भंडारी की कहानियों में

स्त्री को देवी तथा दानवी रूप में दिखाया नहीं गया है, बल्कि अपने मानवीय गुणों द्वारा उन्हें मानव के रूप में दिखाया गया है ।

मन्नू भंडारी की एक कहानी 'यही सच है' में स्त्री पुरुष के द्वंद्व तथा संबंधों को दिखाया गया है । 'यही सच है' कहानी की नायिका दीपा आधुनिक बोध से संपन्न है । प्रस्तुत कहानी की नायिका दीपा परंपरागत नारी जीवन का विरोध कर नारी को एक नवीन रूप में प्रस्तुत करती है । पारंपरिक भारतीय नारी की विशेषताओं से अलग दीपा एक विद्रोही स्त्री है। दीपा की प्रथम प्रेमी निशीथ था। निशीथ से धोखा मिलने पर वह संजय से प्रेम करने लगती है। परंतु नौकरी के लिए वह जब कलकत्ता जाती है तब उसकी निशीथ से पुन: मुलाकात होती है । फिर वह अपने प्रेम की दुविधा में तथा द्वंद्व में फँस जाती है । एक तरफ उसका मन निशीथ को चाहने लगता है और एक तरफ संजय को। इस प्रकार 'यही सच है' कहानी में मन्नू भंडारी ने दीपा के माध्यम से एक आत्मनिर्भरशील स्वतंत्र आधुनिक युवती का चित्रण किया है ।

मन्नू भण्डारी की एक और कहानी 'बंद दराजों का साथ' भी स्त्री चेतना से युक्त है । कहानी की नायिका मंजरी है। प्रस्तुत कहानी में मंजरी का पति विपिन बेवफाई करता है। फिर वह विपिन से दूर होकर दिलीप से प्रेम करने लगती है। इस कहानी में मंजरी एक आधुनिक नारी है, जो पति की बेवफाई से टूट जाती है। वह न तो अपने अतीत को भूल पाती और न ही अपने भविष्य को सँवार पाती है । छूटी हुई जिंदगी और चुनी हुई जिंदगी के द्वंद्व में वह फँस-सी जाती है।

'तीन निगाहों की एक तस्वीर' कहानी में एक आत्मनिर्भरशील और स्वतंत्र नारी जीवन की कथा है । इसकी नायिका दर्शना है। वह एक परित्यक्ता नारी है, परंतु फिर भी वह किसी की दया का पात्र नहीं बनना चाहती है। वह खुद आत्मनिर्भरशील होकर जीना चाहती है। दर्शना नौकरी के सहारे ही अपना जीवन निर्वाह करने का निर्णय लेती है। इसी तरह एक अन्य कहानी 'हार' में भी आत्मनिर्भरशील नारी की गाथा है। इस कहानी की नायिका दीपा राजनैतिक क्षेत्र में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करती है। वह राजनैतिक क्षेत्र में पुरुषों के एकाधिकार को समाप्त कर नारी का अधिकार कायम करती है ।

मन्नू भंडारी की एक और कहानी 'ऊंचाई' में भी तीव्र नारीवादी दृष्टिकोण प्रतिफलित हुआ है। इस कहानी में एक आधुनिक, आत्मनिर्भरशील और स्वतंत्र नारी जीवन को दिखाया गया है । प्रस्तुत कहानी की नायिका शिवानी है। वह एक ऐसी आधुनिक नारी है, जो प्रेमिका और पत्नी दोनों की भूमिका का पालन करती है। शिवानी के अनुसार पवित्रता मन की वस्तु है, शरीर की नहीं। वह अपने पूर्व प्रेमी अतुल के साथ शारीरिक संबंध विवाह के बाद भी रखती है और उसे अनुचित और अनैतिक नहीं मानती। शिवानी के अनुसार अगर विवाह के पश्चात पुरुष अन्य स्त्री से संबंध रख सकता है तो एक स्त्री भी अपने मन की शांति के लिए संबंध बना सकती है। ऐसे संबंध को वह अनुचित नहीं मानती। इस प्रकार 'ऊंचाई' कहानी में एक ऐसी आधुनिक नारी को दिखाया गया है, जो एक से अधिक पुरुषों के साथ संबंध रखकर भी अपने स्वतंत्र अस्तित्व को बनाए रखती है।

मन्नू भंडारी की अनेक कहानियाँ जैसे 'जीती बाजी की हार', 'आते जाते यायावर' , 'घुटन', 'नई नौकरी' आदि में विवाह बंधन को नारी की प्रगति में बाधक स्वरूप दिखाया गया है। इन कहानियों की नायिका अपने 'स्व' अस्तित्व की रक्षा के लिए विवाह बंधन को अस्वीकार करती हैं। 'जीती बाजी की हार' नामक कहानी की नायिका मुरला विवाह बंधन को अपने व्यक्तित्व को बेचना स्वरूप मानती है। वह एक पढ़ी-लिखी स्त्री है। एक आत्मनिर्भरशील स्त्री किसी के बंधन में फँसकर अपने व्यक्तित्व को खोना नहीं चाहती थी। वह विवाह बंधन मुक्त जीवन जीकर स्व रक्षा की कामना करती थी । मुरला इतनी अधिक आत्मनिर्भरशील थी कि उसे अपना जीवन निर्वाह करने के लिए किसी की भी जरूरत महसूस नहीं होती थी ।

'घुटन' कहानी में दो नारी मन की भावनाओं का सुंदर प्रतिफलन हुआ है । इस कहानी में एक वैवाहिक नारी की दुखद जीवन गाथा है और एक तरफ एक अविवाहित नारी की वेदना है । दोनों ही अपने जीवन में खुश नहीं रह पातीं। इस कहानी की एक पात्र प्रतिमा

अपने पति से सुखी नहीं है। उसका पति शराब पीकर उसे अपनी बाँहों में जकड़ लेता है। प्रतिमा अपने पति से तंग आ जाती है और ऐसे वैवाहिक जीवन से घुटन महसूस करती है। ठीक उसके विपरीत मोना है। वह एक अविवाहित और आत्मनिर्भरशील नारी है। वह अपने प्रेमी अरूप से विवाह करना चाहती है, परंतु अपनी माँ के कारण कर नहीं पाती। वह अपनी माँ के विरोध में किसी भी पुरुष की बाँहों में जाने के लिए तड़पती है। इस प्रकार इस कहानी में एक विवाहित नारी अपने क्रूर पति की बाँहों से दूर भागना चाहती है और एक अविवाहित नारी किसी भी पुरुष की बाँहों में जाने की कामना करती है और घुटन महसूस करती है। इस प्रकार अविवाहित नारी और विवाहित नारी मन के अंतर्द्वंद्व को 'घुटन' कहानी में सुंदर रूप से प्रतिफलित किया गया है ।

'नई नौकरी' नामक कहानी में भी मन्नू भंडारी ने विवाह को बंधनस्वरूप दिखाया है। इस कहानी की नायिका रमा है। वह एक अध्यापिका है। वह अपने पारिवारिक जीवन के लिए तथा पति की प्राइवेट नौकरी के लिए खुद की नौकरी को छोड़ देती है। परंतु वह अपने आराम भरे जीवन से सुखी नहीं रह पाती और घर में बैठकर अपनी संपूर्ण बौद्धिकता तथा आकांक्षा को त्याग नहीं कर पाती। वह केवल पति की कमाई पर अपना जीवन निर्वाह नहीं करना चाहती, बल्कि आत्मनिर्भरशील होकर अपनी कमाई पर जीना चाहती है। इस प्रकार वह अपनी प्रगति में विवाह बंधन को बाधक स्वरूप मानती है ।

'अकेली' मन्नू भण्डारी की एक प्रमुख कहानी है । यह कहानी अपने शीर्षक के अनुसार ही एक अकेली स्त्री की दुखद गाथा को व्यक्त करती है। इस कहानी में 'सोमा बुआ' एक अकेली और परित्यक्ता नारी है। वह बीस वर्षों से अकेली ही जीवन निर्वाह करती है। वह एक अत्यंत साहसी नारी है। उसका पति अपने पुत्र के वियोग से तीर्थवासी हो जाता है और संन्यास ले लेता है। फिर सोमा बुआ अकेली ही कष्ट कर दूसरों के घर मेहनत कर अपना जीविका निर्वाह करती है। वह अपने गाँव के लोगों से पारस्परिक संबंध बनाए रखती है। आधुनिक जीवन यात्रा में पारस्परिक संबंधों की कमी आ गई है। आज व्यक्ति एकाकीपन को ज्यादा महत्व देता है। इस कहानी में सोमा बुआ के माध्यम से पारस्परिक संबंध को बरकरार रखने का प्रयास किया गया है। साथ ही एक अकेली नारी के दुख-दर्द तथा साहस और संघर्ष भरे जीवन को सुंदर रूप से दर्शाया गया है।

निष्कर्ष :

इस प्रकार हम देखते हैं कि मन्नू भंडारी की कहानियाँ यथार्थ जगत से जुड़ी हुई हैं। उनकी कहानियों की नायिकाएँ इक्कीसवीं सदी की नारी के लिए प्रेरणास्वरूप हैं । मन्नू भंडारी की कहानियों में विशेष रूप से नारी का आधुनिक, आत्मनिर्भरशील, स्वतंत्र स्वभाव प्रतिफलित हुआ है। नारी का उन्होंने दुर्बल रूप में चित्रण नहीं किया और न ही वह नारी को पारंपरिक बंधनों में चित्रित करना चाहती हैं।

मन्नू भंडारी की कहानियों की नारी स्वतंत्र होकर मुक्त जीवन जीना चाहती है। उन्होंने अपनी कहानियों में नारी का ऐसा स्वरूप दिखाया है, जो स्व अस्तित्व रक्षा के लिए संपूर्ण संबंध को त्याग सकती है। उनकी कहानियों के नारी पात्र खुद को कमजोर नहीं मानते और न ही किसी कि परछाई में या दया में अपना जीवन निर्वाह करना चाहते हैं। इस प्रकार मन्नू भंडारी की कहानियों में नारी का एक नया स्वरूप उभरकर सामने आया है। मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों के माध्यम से नारी जीवन के नए भावबोध तथा आधुनिक नारी जीवन दर्शन को प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ समाज के लिए प्रेरणा स्वरूप हैं। ❑

सहायक ग्रंथ :

1. कस्तवार, रेखा, (2016), स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ, दिल्ली : राजकमल प्रकाशन
2. मिश्र, अ. (2013), आधुनिकता के आईने में स्त्री संघर्ष, हैदराबाद : गीता प्रकाशन.
3. शर्मा, क. (2011), कमलेश्वर के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श, नई दिल्ली : नवचेतन प्रकाशन

.

असमीया लोक-गीत का विशिष्ट अंग - लोरी

करबी भूयाँ

अतिथि अध्यापिका
लंका महाविद्यालय,
लंका, होजाई (असम)
फोन : 9864825861

शोध-सार :

लोक-गीत असमीया लोक-साहित्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। असमीया लोक-गीत बिहू-गीत, लोरी (निचुकोनी गीत), विवाह गीत, मेंढक की शादी के गीत, देह विचारक गीत, ग्वालपरीया लोक-गीत, ओजापाली आदि गीतों से समृद्ध है। इसके साथ ही खेत में काम करते, सूता काटते, धान काटते समय भी अनेक प्रकार के गीत गुनगुनाए जाते हैं।

लोरी, जिसे असमीया भाषा में निचुकोनी गीत या धाई नाम कहते हैं। मूलतः यह गीत बच्चों को सुलाने के लिए माँ, दादी, नानी द्वारा गाए जाते हैं। निचुकोनी गीत या धाई नाम मूलतः शिशु केंद्रित होता है। शिशु का मन कल्पनाशील होता है, इसलिए इन गीतों में भी कल्पना का पुट देखने को मिलता है। चांद, हाथी, लोमड़ी, तारा, परी आदि को लोरियों में प्रधानता दी जाती है, क्योंकि बच्चों का मन इन सब चीजों से सहज ही आकर्षित हो जाता है। लोरी के जरिए माँ की आशा-आकांक्षा, विश्वास आदि की अभिव्यक्ति होती है।

बीज शब्द :

लोरी, बचपन, आनंद, साहित्य।

1. प्रस्तावना :

असमीया लोक-गीत में लोरी का विशेष स्थान है। इसमें एक माँ की ममता झलकती है। माँ के शब्दों से लोरी में प्राण आ जाते हैं। जिस प्रकार दैनिक जीवन में माँ बच्चों से सरल से सरल शब्दों में बातें करती है, उसी प्रकार लोरी में भी वही सहज-सरल शब्दावली प्रयोग करती है। माँ कोशिश करती है कि वह जल्दी से बच्चों को सुलाकर अपना काम कर सके। इसलिए वह अमूर्त प्रतिबिंबों के माध्यम से बच्चों को कल्पना जगत में ले जाती है, कभी-कभी बच्चों को डराती भी है। इस प्रकार लोरी माँ की गीत बन जाती है।

2. अध्ययन का महत्व :

लोरी असमीया साहित्य की अभिन्न अंग है। इन गीतों के माध्यम से माँ

और बच्चों के बीच प्यार का बंधन और दृढ़ बन जाता है। लोक-गीत लोक-संस्कृति का एक अनन्य हिस्सा है। चूँकि लोरी असमीया लोक-गीतों के अंतर्गत आती है, इसलिए इसके अध्ययन का महत्व है। इसके अध्ययन से इसकी प्रासंगिकता बढ़ेगी। साथ ही असमीया भाषा के साथ-साथ इसकी अलग अलग स्थानीय भाषा के शब्दों का भी प्रचार-प्रसार होगा।

3. अध्ययन का उद्देश्य :

प्रस्तुत अध्ययन के कई उद्देश्य हैं। असमीया लोक-गीतों को बाहर के लोगों तक पहुँचाना इसका प्रधान उद्देश्य है। लोरी की शब्दावली के साथ लोगों को परिचित कराना भी इसका एक उद्देश्य है। वर्तमान समय में आधुनिकता के चक्कर में ये गीत प्राय: लुप्त हो गए हैं, इन्हें फिर से लोगों तक पहुँचाना भी इस अध्ययन का एक उद्देश्य रहा है।

4. अध्ययन का सीमांकन :

अध्ययन सिर्फ लोरी पर केंद्रित रहेगा। असमीया भाषा में प्रचलित अन्य लोक-गीतों का सिर्फ उल्लेख किया जाएगा।

5. अध्ययन में व्यवहृत पद्धति एवं उपाय :

प्रस्तुत अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है। शोध पत्र MLA(Modern Language Association) पद्धति पर आधारित है। असमीया लोक-संस्कृति पर लिखित ग्रंथों का इसमें सहारा लिया गया है।

6. विश्लेषण एवं निर्वचन :

प्रत्येक भाषा और जाति के लोगों में कुछ परंपरागत गीत होते हैं। इन्हें लोक-गीत कहते हैं। असम में प्रचलित लोक-गीतों को तीन भागों में विभाजित किया जाता है- कार्यक्रममूलक (किसी त्योहार विशेष में गाए जाने वाले), आख्यानमूलक (पौराणिक कथाओं पर आधारित) और विविध विषयक गीत।

निचुकोनी गीत अथवा धाई नाम विविध विषयक गीतों के अंतर्गत आते हैं। इन गीतों की कुछ विशेषताएँ होती हैं। भाव-वस्तु की दृष्टि से ये अकृत्रिम होते हैं। इनमें तर्क के स्थान पर कल्पना का पुट एक उल्लेखनीय

विशेषता है। ये गीत एक विशेष सुर, ताल, लय के साथ गाए जाते हैं। इन गीतों में सहज एवं सरल शब्दों का प्रयोग होता है। असमीया ग्राम्य समाज को प्रभावित करने वाले सभी विषयों को इन गीतों में स्थान दिया जाता है। एक माँ की ममता, प्यार और अनुभूति को इन गीतों के माध्यम से अंदाजा लगाया जा सकता है। ये गीत सहज ही याद हो जाती है।

लोरी (निचुकोनी गीत या धाई नाम) : असमीया समाज में 'निचुकोनी गीत' को धाई नाम से भी जाना जाता है। माँ की अनुपस्थिति में जो औरत बच्चों का देखभाल करती है, उन्हें 'धाई' कहा जाता है। 'धाई' द्वारा गुनगुनाने वाले गीत होने के कारण इन्हें 'धाई-नाम' कहा जाता है। एक माँ की तरह ही 'धाई' भी प्यार से गीत गाकर बच्चों को सुलाने की कोशिश करती है। बच्चों की नींद लाने के लिए माँ या धाई बच्चों के साथ हँसती है, रोती है। बच्चे ये देखकर खुश हो जाते हैं। निचुकोनी गीत या धाई नामों से माँ का बच्चों के प्रति ममता झलकती है।

सदियों से ही हमारे समाज में लोरियों का प्रचलन रहा है। हर क्षेत्र में लोरी भिन्न-भिन्न नामों से जानी जाती है। असम की विभिन्न भाषा तथा जाति-जनगोष्ठियों में लोरी का प्रचलन है। स्थान, भाषा और जाति की भिन्नताओं के कारण लोरी के सुर और शब्दों में कुछ अंतर दिखती है।

असम की अलग-अलग जगहों पर असमीया भाषा

में प्रचलित कुछ लोरियाँ इस प्रकार हैं–

(क) *आमारे मइना सुब ऐ*
बारिते बगरी रुब ऐ,
बारिरे बगरी पकि सरि जाबो
आमारे मइनाइ बुटलि खाबो।

अर्थात् माँ गाती है कि हमारा बच्चा सो जाएगा, घर में बेर के पेड़ लगाएगा, बेर पककर नीचे गिरेगा, हमारा बच्चा उठाकर खाएगा।

(ख) *शियाली ऐ नाहिबि राति*
तोरे काने काटि लगामे बाटि।

इसमें माँ बच्चों को शियार की बात कहकर डराती है, ताकि डरकर बच्चा सो जाए। माँ कहती है कि शियार तू रात को मत आना, तेरा कान काटकर बत्ती जलाऊँगी।

(ग) *जोनबाइ ऐ एति तरा दिया*
एति तरा नालागे, दुति तरा दिया,
पात नाइ, सूत नाइ किहतकै दिम ?

इसका अर्थ यह है कि माँ बच्चों को गोद में लेकर चाँद से एक–दो तारा मांगती है। और चाँद जवाब देता है कि पत्ता भी नहीं है, सूता भी नहीं है, कैसे दूँ?

(घ) *जोनबाइ ऐ बेजि एटा दिया*
बेजि नू केलै ?
मोना सिबलै।
मोना नू केलै ?
धन भराबलै।
धन नू केलै ?
हाति किनिबलै।
हाति नू केलै ?
उठि फुरिबलै।

इसका अर्थ इस प्रकार है – माँ बच्चे को गोद में सुलाती हुई चाँद से बातें करती है। माँ बच्चे को चाँद की तरफ दिखाकर कहती है–ऐ चाँद, मुझे एक सूई दे दो। चाँद पूछता है कि सूई से क्या करोगी? माँ कहती है–सूई से झोला सिलाऊँगी। फिर चाँद पूछता है–झोला क्यों चाहिए? माँ बताती है–पैसा रखूँगी। चाँद पूछता है–पैसे से क्या करोगी? जवाब में माँ बताती है कि सवारी के लिए हाथी खरीदूँगी।

(ङ) *जोनबाइ आहिब दूरणिर परा*
कबहि रजा–रानीर साधु कथा,
आहसोन जोनाकी पाति दे मेला,
ओ तरा, ओ तरा, तयो आह।

माँ बच्चे को सुलाती हुई गाती है – चाँद दूर से आएगा, राजा–रानी की कहानी सुनाएगा, फिर माँ तारा से कहती है – तुम भी साथ में आ जाओ।

इन गीतों के अलावा असम के अनेक जाति–जनगोष्ठियों की अपनी भाषा में भी लोरियाँ प्रचलित हैं। जैसे–

(क) *फेसुदोला, मामाथेर बारिक गेला*
आम खाला, काठाल खाला
मामाथेर घरोत कि पाला ?
माइमें बुले सि सि भागिन आइसि बइहबा दि,
नेदो पिरा बहक माटित, काठपिपराई कामरक कटित
फेसुदोला, मामाथेर बारिक गेला
फूल देखि समक खाला,
फूलूक लागि मेलला हात
फूल गेल उठर हात।

(असम के नलबाड़ी जिले में प्रचलित)

(ख) *आह आह जोन काका*
तुर सारिपुन मोर सारिपुन
घुगरा गाथो आह,
घुगरा बुले रुणूरझूणूर
बर आइर हबार बेला,
बरे दिब बर कापुर
कइनाइ दिब माला।

(असम के ग्वालपाड़ा जिले में प्रचलित)

(ग) *आइरे बाण्डिया सियाल*
घर पिण्डारे थाक,
बाबुर माक जलके गेले
बाबुर काण काट।

(चाय जनजाति में प्रचलित)

(घ) *आह जोनाकि आह*
उरि उरि आह,
तरा पातते भात दिम
ईसा मासर जुल दिम,
तार तलते बांधि थम
रातिपुवाले एरि दिम।

(कोच जनसमुदाय में प्रचलित)

लोरी असमीया समाज के प्राण हैं। इसकी सहज, सरल, सुबोध भाषा-शैली मनमोहक है। प्रत्येक लोरी को विशेष लय में हाथों से बच्चों की पीठ पर थपकी के साथ गाया जाता है। बाल-मन की अनेक भावनाओं को लेकर श्रीधर कंदली ने 'काणखोवा पुथि' (ग्रंथ) की रचना की। असमीया ग्रामीण जीवन में प्रभाव डालने वाले सभी विषय लोरियों में समाहित हैं।

वर्तमान समय में लोरियों का महत्व थोड़ा कम हो गया है, लेकिन इसकी प्रासंगिकता अभी भी है और आगे भी रहेगी। आधुनिकता के स्पर्श पाकर इसमें भी नया रूप आ गया है। धरती पर जब तक मातृ हृदय की ममता और बच्चों का कौतूहल रहेगा, इन गीतों की प्रासंगिकता बनी रहेगी। इसलिए इन गीतों को नए दृष्टिकोण से देखने की आवश्यकता है।

7. उपलब्धियाँ :

(क) निचुकोनी गीत असमीया लोक-गीतों की एक प्रमुख हिस्सा है।

(ख) निचुकोनी गीतों को असम में 'धाई-नाम' से भी जाना जाता है।

(ग) निचुकोनी गीतों में कल्पना की प्रधानता के साथ साथ कभी-कभी अलौकिकता भी दृष्टिगोचर होती है।

(घ) ग्रामीण जीवन में प्रभाव डालने वाले विषयों को निचुकोनी गीतों में स्थान दिया जाता है।

(ङ) निचुकोनी गीतों की भाषा सहज-सरल एवं ग्राम्य शब्दावली से भरपूर है। असमीया भाषा के साथ-साथ अलग-अलग स्थानीय भाषाओं के शब्द भी इसमें मिलते हैं।

(च) निचुकोनी गीतों में अक्सर चाँद, तारा, आकाश, परी आदि के साथ-साथ विविध जीव-जंतुओं जैसे सियार, हाथी आदि को भी संबोधित करते हुए उनसे भी बातचीत होने की कल्पना की जाती है।

(छ) निचुकोनी गीतों में असम की अलग-अलग जाति व जनसमुदाय के सुर में भिन्नताएँ देखने को मिलती है।

8. निष्कर्ष :

इस अध्ययन एवं आलोचना के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि लोरी यानी निचुकोनी गीत असमीया संस्कृति का एक अनोखा सुर है। माँ और बच्चों के अटूट बंधन को हम इन गीतों के माध्यम से अनुभव कर सकते हैं। इन गीतों के माध्यम से माँ अपने बच्चों को मधुर स्वर में गाकर सुलाने की कोशिश करती है। प्यार भरी आँखों से बच्चों की तरफ देखकर मुस्कुराते हुए माँ ये गीत गाती है।

गीत गुनगुनाने के साथ-साथ माँ बच्चों की पीठ पर प्यार से थपकियाँ भी देती है, ताकि बच्चों को जल्द ही नींद आ जाए। वर्तमान समय में हम देखते हैं कि असमीया समाज में इसका प्रचलन एवं प्रासंगिकता दोनों ही कम हो गए हैं, चूँकि ये गीत असमीया संस्कृति से जुड़े हुए हैं, इसलिए इन्हें संरक्षित रखना हमारी जिम्मेवारी बनती है। ❑

संदर्भ सूची :

असमीया साहित्यर समीक्षात्मक इतिवृत्त, शर्मा सत्येंद्रनाथ, सौमार प्रकाश
असमीया साहित्यर रुपरेखा, नेओग महेश्वर, चंद्र प्रकाश
असमर लोकसंस्कृति, बरदलै निर्मलप्रभा, चंदन दे (प्रकाशक)

आलेख

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का हिंदी आलोचना में योगदान

दीप्ति यादव

शोधार्थी
बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर
विश्वविद्यालय
लखनऊ, उत्तर प्रदेश
मो. : 9984787855

आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिंदी आलोचना के युग-पुरुष हैं। 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में गद्य साहित्य का प्रसार के द्वितीय उत्थान (संवत् 1950-1975) के अंतर्गत समालोचना पर विचार करते हुए शुक्ल जी ने लिखा है, ''पर यह सब आलोचना बहिरंग बातों तक ही रही। भाषा के गुण-दोष, रस, अलंकार आदि की समीचीनता इन्हीं परंपरागत विषयों तक पहुँची। स्थायी साहित्य में परिगणित होने वाली समालोचना, जिसमें कवि की अंतर्वृत्ति का सूक्ष्म व्यवच्छेद होता है, उनकी मानसिक प्रवृत्ति की विशेषताएँ दिखाई जाती हैं, बहुत कम दिखाई पड़ी।''[1] आगे गद्य साहित्य के तृतीय उत्थान के अंतर्गत समालोचना के विकास पर लिखते हुए उन्होंने कवियों की 'अंत: प्रवृत्ति की छानबीन' की बात फिर की है। शिष्टता और विनम्रता के नाते उन्होंने यह नहीं लिखा कि 'ऐसी आलोचना मैंने की है।' उन्होंने उत्तम पुरुष का प्रयोग बचाते हुए अपने विषय में केवल यह लिखा, ''इस इतिहास के लेखक ने तुलसी, सूर और जायसी पर विस्तृत समीक्षाएँ लिखीं, जिसमें से प्रथम 'गोस्वामी तुलसीदास' के नाम से पुस्तकाकार छपी है, शेष दो क्रमश: 'भ्रमरगीत सार' और जायसी ग्रंथावली' में सम्मिलित हैं।''[2] समालोचना विषयक अपनी अवधारणा बताकर शुक्ल जी ने समालोचना विषयक अपनी विशेषता बता दी है। उन्हीं की गवाही पर यह कहा जा सकता है - ''किसी कवि या पुस्तक के गुण-दोष या सूक्ष्म विशेषताएँ दिखाने के लिए एक दूसरी पुस्तक तैयार करने की चाल हमारे यहाँ न थी।''[3] और 'हमारे हिंदी साहित्य में समालोचना पहले-पहल केवल गुण-दोष-दर्शन के रूप में प्रकट हुई है।'

हिंदी आलोचना को पहली बार तर्कसंगत दिशाबोधी और व्यवस्थित रूप प्रदान करने का श्रेय आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल को जाता है। उनसे पहले हिंदी आलोचना की एक उर्वर जमीन मिश्रबंधु, पद्‌म सिंह शर्मा, कृष्ण बिहारी मिश्र, लाला भगवान दीन आदि आरंभिक आलोचकों ने तैयार की थी। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने उसे ज्ञान-विज्ञान से पुष्ट किये जाने की दिशा में एक कदम आगे बढ़ाया था, किंतु अभी वह काम शेष था, जिससे आलोचना किसी रचना और रचनाकार के बहिरंग के साथ ही उसकी अंतर्वृत्तियों को भी सूक्ष्म छानबीन करने वाली बनती है। कहना न होगा कि यह काम आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने बेहद जिम्मेदारी, ईमानदारी और निष्ठा के साथ पूरा

किया। उनके इस कार्य की वजह से हिंदी आलोचना का प्रवाह चल निकला और वे आलोचना में एक युग प्रवर्तक की तरह प्रतिष्ठित हुए। शुक्ल जी की विशेषता इस बात में है कि वे जितना वर्तमान और आधुनिक चेतना को जानते हैं, उससे ज्यादा वे हजारों साल से चली आती हुई साहित्य परंपरा को समझते हैं। काल और युगों की बिखरी हुई चेतना को इस तरह से संबद्ध रूप में जान लेना आसान नहीं है। सामान्यत: जो व्यक्ति पारंपरिक साहित्य को समझता है, वह आधुनिक से दूर भागता है और जो आधुनिक को जानता है, वह प्राचीन की अनदेखी करता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इन दोनों के बीच सेतु बनाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। परंपरा और नवीनता के संबंध को सही दिशा देकर उसे वर्तमान के लिए उपयोगी बना लेना शुक्ल जी की मनीषा का मुख्य काम रहा है। वे चीजों के संबंध पर आलोचक के साथ एक दार्शनिक और विचारक की तरह सोचकर उसका विश्लेषण करते हैं । उनकी आलोचना की खूबी इस बात में है कि वे उसे जीवन से अलग करके विशुद्ध साहित्य और कला तक सीमित नहीं रखते। शुक्ल जी की आलोचना से गुजरते हुए पाठक को अपने समय और मांग का अहसास हमेशा बना रहता है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के हिंदी साहित्य के इतिहास को पढ़ने से पता चलता है कि वे साहित्य को इस दुनिया में चलने वाली हलचलों-आंदोलनों से अलग नहीं मानते हैं। उनका प्रभाव साहित्य पर पड़े बिना नहीं रहता है। वे यह मानते हैं कि ''जब प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।'' आधुनिक युग में जब विश्व स्तर पर लोकतंत्र के लिए आंदोलन चले तो उसका प्रभाव तात्कालीन हिंदी साहित्य पर पड़ा, खासतौर से तत्कालीन राजनीतिक हलचलों का। यह समझने और जानने की जरूरत है कि जिस समय आचार्य रामचंद्र शुक्ल अपने आलोचना कर्म में लगे हुए थे, उस समय भारत की जनता स्वाधीनता संघर्ष में लगी थी। इस आंदोलन से

जीवन के कुछ नए मूल्यों की प्रतिष्ठा हो रही थी। इसके प्रभाव साहित्य रचना पर भी पड़ रहे थे। शुक्ल जी के मन में भी उनका असर था, जिसका उल्लेख वे कई जगहों पर करते हैं। वे एक जगह लिखते हैं ''वर्तमान सभ्यता और लोक की घोर आर्थिक विषमता से जो असंतोष का ऊंचा स्वर पश्चिम में उठा, उसकी गूँज यहाँ भी पहुँची। दूसरे देशों का धन खींचने के लिए यूरोप में मशीनों की सभ्यता के विरूद्ध तालस्ताय की धर्मबुद्धि जगाने वाली वाणी सुनाई पड़ी, जिसका भारतीय अनुवाद गांधी जी ने किया। दूसरी ओर इस घोर आर्थिक विषमता की घोर प्रतिक्रिया के रूप में साम्यवाद और समाजवाद के सिद्धांत चले, जिन्होंने रूस में अत्यंत उग्र रूप धारण करके भारी उलटफेर कर दिया।''[4] स्पष्ट है कि शुक्ल जी इस बात से बाखबर थे कि उनके समय में दुनिया और अपने देश में क्या चल रहा है और साहित्य पर उसका कितना प्रभाव पड़ रहा है। उन्होंने जितना भी साहित्य लिखा, उसमें इस तरह के विचारों की अभिव्यक्ति जगह-जगह पर हुई है। उनका मुख्य काम हिंदी साहित्य का इतिहास की रचना करना रहा है। इसी काम के क्रम में उन्होंने सूर, तुलसी और जायसी पर विस्तृत समीक्षाएं लिखीं। उन्होंने साहित्य के प्रतिमान के रूप में रस

सिद्धांत का पुनरान्वेषण किया और उसे आधुनिक स्वरूप देकर साहित्य की विवेचना नये जीवन सरोकारों के साथ की। रस सिद्धान्त के मूलाधार स्थायी भावों की विस्तृत विवेचना भी उन्होंने अपने निबंधों में की, जो 'चिंतामणि' के नाम से संकलित हुए। इसके अलावा उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण अनुवादों के माध्यम से हिंदी की चेतना को आधुनिक वैज्ञानिक चेतना से जोड़ने का काम भी किया। उनके लेखन से पता चलता है कि यदि वे देशी सामंतवाद की प्रवृत्तियों के विरोधी थे तो वहीं तत्कालीन अंग्रेजी उपनिवेशवाद के भी। उनके साहित्य के भीतर इसी आधुनिक सांस्कृतिक मुक्ति चेतना के सूत्र विद्यमान हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने आलोचना कर्म के अंतर्गत साहित्येतर ग्रंथ जितनी संख्या में लिखे या अनूदित किए, उतने अभी तक हिंदी के किसी अन्य आलोचक ने नहीं किए। ''लगभग 14 वर्ष की अवस्था में उन्होंने एडीसन के 'एस्से ऑन इमेजिनेशन' का अनुवाद 'कल्पना का आनंद' नाम से किया था। इसके अतिरिक्त उन्होंने सर टी. माधवराव की पुस्तक 'माइनर हिट्स' का अनुवाद 'राज्य प्रबंध शिक्षा' नाम से किया। मेगस्थिनीज के 'भारत विवरण' राखालदास वंदोपाध्याय के बांग्ला उपन्यास 'शशांक' और एडविन अरनॉल्ड के 'लाइट ऑफ एशिया' का पद्यबद्ध अनुवाद 'बुद्धचरित' नाम से किया है।''[5] जो बात ध्यान देने की है, वह यह कि प्राय: इन सभी अनूदित ग्रंथों की उन्होंने विस्तृत भूमिकाएँ लिखीं। शुक्ल जी के विचारों का निर्माण करने में जर्मनी के जगद्विख्यात प्राणितत्ववेत्ता 'हैकल' की पुस्तक 'रिडिल ऑफ द यूनिवर्स' का बहुत योगदान है। इस पुस्तक का अनुवाद शुक्ल जी ने 'विश्व व प्रपंच' नाम से किया और '155 पृष्ठों की विस्तृत भूमिका' लिखी। इस भूमिका को पढ़ने के उपरांत पता चलता है कि शुक्ल जी ने भौतिक विज्ञान और मनोविज्ञान का गहरा अध्ययन किया था। भूमिका के प्रथम पृष्ठ में वे लिखते हैं- ''जहाँ पहले लोग छोटी से छोटी बात के कारण को न पाकर उसे ईश्वर की कृति मान कर संतोष कर लेते थे, वहाँ चारों ओर नाना विज्ञानों के द्वारा कार्य-कारण की ऐसी विस्तृत शृंखला उपस्थित कर दी गई कि किसी को बीच में ही ठिठकने की आवश्यकता न रह गई।''[6]

इस वैज्ञानिक दृष्टिकोण का ही परिणाम है कि वे साहित्य की जागतिक व्याख्या करते हैं, अध्यात्म शब्द की काव्य या कला के क्षेत्र में कहीं कोई जरूरत नहीं समझते और अपने प्रिय कवि तुलसी को 'लोक-धर्म का उद्घोषक कवि कहते हैं। इसीलिए कहा गया है कि पं. रामचंद्र शुक्ल की दृष्टि वैज्ञानिक, प्रगतिशील और इहलौकिक थी।

''परिणामत: उनके सिद्धांतों में 'लोकवाद' की प्रतिष्ठा होती है। यह एक प्रकार से कवि और काव्य का समाजीकरण है। वे ''रामचरितमानस'' के 'लोकधर्म' के आदर्श से सर्वाधिक प्रभावित है।

शुक्ल जी समन्वयवादी आलोचक हैं। 'विरूद्धों के सामंजस्य का सिद्धांत जो कि तुलसी के 'मानस' के संबंध में प्रस्तुत किया गया है, शुक्ल जी आलोचना दृष्टि की व्याख्या करते हैं। उन्होंने सैद्धांतिक और व्यावहारिक आलोचना दोनों ही क्षेत्रों में रुचि दिखाई। चिंतामणि के निबंध विशेषकर 'कविता क्या है ?' 'काव्य में रहस्यवाद और 'रसमीमांसा' में उनके सैद्धांतिक आलोचना के मानदंडों की व्याख्या मिलती है। लोकमंगल, रसदश, हृदय की मुक्तावस्था, विरूद्धों का सामंजस्य, लोकमंगल की साधनावस्था और सिद्धावस्था आदि उनके द्वारा विकसित मुहावरे हैं, जो सैद्धांतिक आलोचना के संदर्भ में उनके द्वारा विकसित मानदंडों का संकेत करते हैं। शुक्ल जी की सैद्धांतिक आलोचना के मानदंडों का विकास 'रामचरितमानस' में अभिव्यक्त तुलसी की सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि के परिप्रेक्ष्य में हुआ है। यह दृष्टि यदि आचार्य रामचंद्र शुक्ल की शक्ति है तो सीमा भी। आलोचक शुक्ल की समन्वयवादी चेतना का दायरा यहीं तक सीमित नहीं है। उन्होंने संस्कृत काव्यशास्त्र और पश्चिमी काव्यशास्त्र को भी एक-दूसरे से संबद्ध करते हुए हिंदी आलोचना को समृद्ध किया।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी की समन्वयवादी दृष्टिकोण पर विचार करते हुए कहा गया है- 'आचार्य जी की समानवादी दृष्टि मनुष्य के सामान्य व्यवहार-क्षेत्र से आगे बढ़कर समस्त, जगत के नाम रूप-व्यापारों तक फैली हुई है।'[7]

शुक्ल जी के अनुसार - साहित्य का कार्य-क्षेत्र

मानव हृदय है। वह हृदय के भावों का व्यापार है। शुक्ल जी ने कविता की साधना को भावयोग कहा है।[8]

इस भावयोग की साधना से मनुष्यहृदय 'स्वार्थ संबंधों के संकुचित मंडल के ऊपर' उठकर 'लोक-सामान्य भावभूमि' पर पहुँच जाता है। भावयोग की साधना को वे 'कर्म योग और ज्ञान योग' का समकक्ष मानते हैं।

शुक्ल जी के विषय में कहा गया है - 'हिंदी साहित्य में शुक्ल जी का वही महत्व है, जो उपन्यासकार प्रेमचंद या कवि निराला का।'[9]

शुक्ल जी ने हिंदी समालोचना में प्रमुखतः दो काम किए। एक, प्राचीन काव्यशास्त्र की पुनर्व्याख्या करके उसे फिर से रचनात्मकता के लिए संदर्भवान बनाया। दूसरा, जिस तरह उन्होंने काव्यशास्त्र को वर्तमान बोध एवं सहृदयता के लिए संदर्भवान बनाया, उसी प्रकार प्राचीन साहित्य को वर्तमान बोध एवं सहृदयता के लिए। जिस अर्थ-विस्तार को आलोचना का वास्तविक कार्य कहा जाता है, वह शुक्ल जी ने अनेक कवियों विशेषतः जायसी, तुलसी और सूरदास की समीक्षा के माध्यम से किया है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार - ''जिस तरह 'सभ्यता के विकास के साथ-साथ कवि-कर्म कठिन होता चला जाता है', उसी तरह यह बात कहने में कोई हिचक नहीं है कि आलोचना-कर्म और भी कठिन होता चला जाता है।''[10]

'पाश्चात्य काव्यशास्त्रीय चिंतन के अंतर्गत आचार्य शुक्ल जी को रिचड्र्स सर्वाधिक प्रिय है। कलावाद के विरोधी होने के कारण ए.सी. ब्रैडले, बेले, क्रोचे आदि के घोर आलोचक हैं। वे ''कला का उद्देश्य कला'' को किसी रूप में स्वीकार नहीं करते हैं।

''शुक्ल जी ने इन कलावादी धारणाओं को ''नक्काशी और बेलबूटों की भावना'' मानते हुए न केवल सशक्त विरोध किया है, वरन् अपने खंडन को रिचर्ड्स के विचारों से परिपुष्ट भी किया है।''[11]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी आलोचना के क्षेत्र में सैद्धांतिक आलोचना और व्यावहारिक आलोचना दोनों क्षेत्रों में महत्वपूर्ण कार्य किया है। आचार्य शुक्ल मूलतः

शुक्ल जी समन्वयवादी आलोचक हैं। 'विरूद्धों के सामंजस्य का सिद्धांत जो कि तुलसी के 'मानस' के संबंध में प्रस्तुत किया गया है, शुक्ल जी आलोचना दृष्टि की व्याख्या करते हैं। उन्होंने सैद्धांतिक और व्यावहारिक आलोचना दोनों ही क्षेत्रों में रुचि दिखाई।

रसवादी आलोचक हैं। सैद्धांतिक आलोचना के अंतर्गत शुक्ल जी के जो निबंध आते हैं, उनमें से प्रमुख हैं 'कविता क्या है', 'काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था', 'साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद'। आलोचना के साथ-साथ अन्वेषण और गवेषणा करने की प्रवृत्ति भी शुक्ल जी में पर्याप्त मात्रा में है। 'हिंदी साहित्य का इतिहास' उनकी इसी प्रवृत्ति का परिणाम है।

शुक्ल जी के अनुसार कविता का सौंदर्य उनकी दृष्टि में, उसकी जीवन-जगत् सापेक्षता में है। आचार्य शुक्ल पारम्परिक रसवादी धारा से प्रभावित होकर रस को काव्य की आत्मा मानते हैं, लेकिन रस की आनंदवादी व्याख्या की ओर संकेत करते हुए वे कहते हैं कि इसने साहित्य को नाच-तमाशे की चीज बना दिया है, जिससे साहित्य की गंभीरता आहत हुई है।

'शेष सृष्टि के साथ मनुष्य के रागात्मक संबंधों की रक्षा और निर्वाह का नाम ही कविता है।'

इस कथन के जरिए वे मानते हैं कि 'कविता का उद्देश्य लोकमंगल' है और उसे मानवता के धरातल पर ले जाकर खड़ा कर देते हैं।

शुक्ल जी के शब्दों में – ''कविता हमें स्व के संकुचित दायरे से बाहर निकालकर मानवीयता की उच्चभूमि पर ले जाकर स्थित कर देती है, जहाँ पर हमारे लिए अपने सुख और दु:ख का महत्व नहीं रह जाता, वरन् हम दूसरे के दुख से दु:खी और दूसरे के सुख से सुखी होने लगते हैं।'' आचार्य शुक्ल ने इसे 'हृदय की मुक्तावस्था' की संज्ञा देते हैं। इसे रस सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य में रसदशा कहा जाता है।

काव्य में रसास्वादन का लक्ष्य यदि 'आनंद' नहीं है तो फिर क्या है? शुक्ल जी मानते हैं कि 'भावयोग' अर्थात् कविता के द्वारा मनुष्य हृदय की मुक्ति की साधना करता है। ''मुक्त हृदय मनुष्य अपनी सत्ता को लोक सत्ता में लीन किए रहता है। इस योग के अभ्यास से हमारे मनोविकारों का परिष्कार तथा शेष सृष्टि के साथ हमारे रागात्मक संबंध की रक्षा और निर्वाह होता है।'' यानी कविता का लक्ष्य मनुष्य को व्यष्टि से समष्टि में लीन कर देता है। जिसे रस दशा कहा जाता है, उसके विषय में शुक्ल जी का कहना है कि – ''लोक हृदय के लीन होने की दशा का नाम रस-दशा है।''

'कविता क्या है? निबंध पर शुक्ल जी रसदशा पर लिखा है- 'जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, इसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इस मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आयी है, उसे कविता कहते हैं।

मुक्तक काव्य के सम्बन्ध में शुक्ल जी का यह वाक्य अत्यंत प्रसिद्ध है कि ''यदि प्रबंध काव्य एक विस्तृत वनस्थली है तो मुक्त एक चुना हुआ गुलदस्ता है।'' इसी से यह सभा-समाजों के लिए उपयुक्त होता है। मुक्तक में रस की धारा नहीं रहती है, केवल उसके छीटें ही उड़ते हैं, जो हमारे चित्त को थोड़ी देर के लिए सिक्त कर देते हैं।

रामचंद्र शुक्ल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने अपने आलोचनात्मक लेखन या कि इतिहास में कहीं भी साहित्येतर मानदंड स्वीकार नहीं किए। उनकी प्रिय रचना तुलसी का 'रामचरितमानस' रही और अधिकतर उसी में से उन्होंने अपने काव्य-मूल्य विकसित किए, जिस रचना के बारे में स्वयं कवि ने कहा – ''एहि महं रघुपति नाम उदारा।'' विलक्षण बात यह है कि इसके बाद उन्होंने अध्यात्म को काव्य और कला के विवेचन में कहीं प्रासंगिक नहीं माना। अपने प्रसिद्ध आलोचनात्मक निबंध 'काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था' में वे लिखते हैं, ''अध्यात्म शब्द की मेरी समझ में काव्य या कला के क्षेत्र में कोई कही जरूरत नहीं है।'' दूसरी ओर निरे उपयोगिता की कसौटी भी वे अस्वीकार कर देते हैं। अपने चिंतन के केंद्रीय निबंध 'कविता क्या है?' में वे स्पष्ट कहते हैं, ''सुंदर और कुरूप-काव्य में बस ये दो पक्ष हैं। भला-बुरा, शुभ-अशुभ, पाप-पुण्य, मंगल-अमंगल, उपयोगी-अनुपयोगी ये सब काव्य क्षेत्र के बाहर के हैं।'' इस प्रकार अध्यात्म और उपयोगितावाद दोनों ओर के दबाव से रचना को मुक्त करके उसे उन्होंने स्वायत्त रूप में प्रतिष्ठित किया।

व्यावहारिक आलोचना के अंतर्गत शुक्ल जी ने 'जायसी ग्रंथावली', 'भ्रमरगीत', 'गोस्वामी तुलसीदास' और 'हिंदी साहित्य का इतिहास' को सामने लाया है। आचार्य शुक्ल ने भारतीय संस्कृति के प्राणतत्व सहिष्णुता और समन्वय के आधार पर जीवन को विरूद्धों का सांमजस्य माना है और इसी परिप्रेक्ष्य में उन्होंने रचनाओं की व्याख्या की है। साधन और साध्य की पवित्रता के संदर्भ में वे साध्य को महत्व देते हैं। उनका मानना है कि यदि उचित साधन से उचित साध्य तक पहुँचना संभव न हो तो उसके लिए अनुचित साधन का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इसकी भी व्याख्या वे तुलसी के संदर्भ में करते हैं। तुलसी के राम के लिए जब वैध तरीके से भाई सुग्रीव की पत्नी के अपहर्ता बालि का वध संभव नहीं रह जाता तो राम बालि-वध के लिए छल का सहारा लेते हैं। तुलसी राम के इस कृत्य का औचित्य साबित करते हुए लिखते हैं –

'अनुज बधू भगिनी सुत नारी, सुन सठ कन्या सम ये चारी।
इनहिं कुदृष्टि बिलोकहिं जोई, ताहि बधे कछु पाप न होई॥'

आचार्य शुक्ल तुलसी को बड़ा कवि अवश्य मानते हैं, लेकिन जायसी और सूर को वे तुलसी पात में बिठाकर हिंदी साहित्य की त्रिवेणी का निर्माण किया है। यद्यपि उन्हें रहस्यवाद विरोधी आलोचक के रूप में

जाना जाता है, लेकिन जब जायसी के रहस्यवाद का प्रश्न आता है तो वे उसकी जीवन-जगत सापेक्षता के कारण सुंदर अद्वैती रमणीय रहस्यवाद कहकर उसकी प्रशंसा करते हैं। नागमती के विरह-वेदना का वर्णन अद्वितीय प्रतीत होता है-

कुहकि-कुहकि जस कोइल रोई रक्त-सांसु धुंधली बन बोई
जहं, जहं, ठाढि होइ बनवासी, तहं-तहं होई घुघचि कैरारी।
बूंद-बूंद मंह जानहुं जीऊ, गुंजागूजि करे 'पिउ पीऊ'
तेहि दुख भए परास निपाते, लोहू बूड़ि उठे होइ राते
राते बिम्ब भीजि तेहि लोहू, पखर पाक फाट हियगोंहू।

ध्यान देने की बात यह है कि सीता की भाँति नागमती का 'रानीत्व' छूट गया है और महलों में रहने वाली रानी साधारण रानी की भाँति वन-वन बिलख रही है। शुक्ल जी ने कविता के विषय में लिखा है कि वह हमें 'लोक सामान्य भावभूमि' पर खड़ा कर देती है। यह सामान्य भूमि शुक्ल जी की रुचि की कसौटी है।

आचार्य शुक्ल सूरदास की चर्चा करते हुए कहते हैं कि सूर अपने भावों में रमे रहने वाले कवि हैं। चारों ओर की परिस्थितियों से उनका कोई संबंध नहीं रह जाता है। फिर भी सूर का वैशिष्ट्य उनसे अलक्षित नहीं रह पाता है - ''सूर का विषय-क्षेत्र भले ही परिमित हो, लेकिन जिन क्षेत्रों को सूर ने छुआ है, वे अद्वितीय हैं।''

यह युगीन जीवन का यथार्थ ही है, जिसके साथ जुड़ाव के कारण भारतेंदु युगीन और द्विवेदी युगीन रचनाकारों की प्रशंसा करते हैं और इससे परे होने के कारण ही सिद्धों-नाथों, रहस्यवाद या छायावाद की आलोचना से परहेज नहीं करते।

इतिहास में 'नई धारा' के अंतर्गत 'छायावाद' शीर्षक खंड में विवेचन करते हुए वे लिखते हैं - ''छायावाद शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिए। एक तो रहस्यवाद के अर्थ में, 'छायावाद' का दूसरा अर्थ काव्यशैली या पद्धति-विशेष के व्यापक अर्थ में है।''

पं. रामचंद्र शुक्ल ने प्राचीन साहित्य में से समीक्षा के लिए तुलसीदास, सूरदास और जायसी को चुना। संस्कृत कवियों में उन्होंने वाल्मीकि, भवभूति और कालिदास विशेष रूप से प्रिय थे।

इस प्रकार से शुक्ल जी के आलोचना क्षेत्र को देखने पर दृष्टव्य होता है - ''शुक्ल जी काव्यानुभूति और लोकानुभूति को एक ही कोटि की समझते हैं। उनकी दृष्टि में काव्यानुभूति एक सात्विक मनोदशा है, जो लोक-व्यवहार में भी अनुभव सिद्ध है।''[12]

रामचंद्र शुक्ल की आलोचना-सामर्थ्य को ठीक-ठीक परखने के लिए उनकी आलोचना-भाषा का विश्लेषण आवश्यक है। आलोचना की भाषा अपने आप में एक कठिन और सुकुमार प्रक्रिया है। अनुभव और अर्थ के जिस संश्लेष को रचनाकार भाषा के अधिकतम सर्जनात्मक रूप के सहारे व्यक्त करता है, उसे अपेक्षया सीधी-सादी भाषा में विश्लेषित और व्याख्यायित करते रहने का दायित्व समीक्षक का है। आचार्य शुक्ल की आलोचना-भाषा को जाँचते समय देखा जा सकता है कि उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दावली विशिष्ट होते हुए भी परिभाषिक नहीं बनती। तभी वह रचना के अनुभव को नये और सार्थक ढंग से पकड़ पाती है। 'संश्लिष्ट चित्रण', 'विरुद्धों का सामंजस्य', 'लोक मंगल' उनके कुछ ऐसे ही नये और विशिष्ट प्रयोग हैं।

आलोचना-भाषा के सामान्य विधान में आचार्य शुक्ल की सावधानी समर्थ कवियों की काव्यभाषा का स्मरण दिलाती है। एक अच्छा उदाहरण मिलता है, जहाँ उन्होंने 'जनता' और 'लोक' शब्दों के बीच विवेक किया है। 'जनता' शब्द के अंतर्गत समाज के ऊँचे-नीचे विविध वर्ण सिमट जाते हैं, 'लोक' से समाज के पिछड़े वर्ग का बोध अधिक होता है। साहित्य की रचना-प्रक्रिया का इतिहास में विवेचन करते समय वे 'जनता' का योगदान रेखांकित करते हैं, पर उसके प्रयोजन-स्वरूप 'लोक' को सामने रखते हैं। इतिहास के प्रवाह की व्याख्या में पाँच पदों से बनी लंबी संयुक्त क्रिया परिवर्तन होता चला जाता है, आलोचना-भाषा में सावधान प्रयोग का एक और अच्छा प्रमाण है।

काव्य में नाद-सौंदर्य का महत्व स्पष्ट करते हुए आचार्य शुक्ल ने लिखा है, 'नाद-सौंदर्य से कविता की आयु बढ़ती है।' यह वाक्य कविता के वैशिष्ट्य की व्याख्या करते हुए स्वयं आलोचना-भाषा में नाद-सौंदर्य

का एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है।

भावों और मनोविकारों संबंधी निबंध, जो आलोचक के साहित्य-चिंतन की पुष्ट आधार-भूमि बनाते हैं, समास शैली और संश्लिष्ट शब्द-प्रयोगों से नाना रूपों में संपन्न हैं। इस दृष्टि से 'क्रोध' निबन्ध में वैर और क्रोध का अंतर जिस प्रकार किया गया है, वह अविस्मरणीय है- 'वैर क्रोध का आचार या मुरब्बा है।' किशोर-पाठ से लेकर विश्वविद्यालय और जीवन के खुले विश्वविद्यालय तक यह वाक्य अपने बिंब-विधान के अनेक स्तरों पर खुलता है।

शब्द प्रयोग, नाद सौंदर्य और बिंब-विधान साधारणत: काव्यभाषा के ये गुण रामचंद्र शुक्ल की आलोचना-भाषा में पाए जाते हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी आलोचना के क्षेत्र में भारतीय एवं पाश्चात्य समीक्षा सिद्धांतों का आधार ग्रहण कर हिंदी समीक्षा को प्रौढ़ स्वरूप प्रदान किया तथा हिंदी समीक्षा को नई दिशा प्रदान की।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि आचार्य शुक्ल ने हिंदी आलोचना के क्षेत्र में वैसा ही क्रांतिकारी परितर्वन किया, जैसा प्रेमचंद ने उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में किया था। उन्होंने साहित्य को रीतिवादी मानसिकता से पूर्णत: मुक्त किया तथा पहली बार सैद्धांतिक और व्यावहारिक समीक्षा का समन्वय भी किया। रस जैसे वैयक्तिक तत्व को लोकमंगल से जोड़कर उसके भीतर निहित सामाजिक पक्ष को उभारा। उन्होंने हिंदी समीक्षा को न केवल संस्कृत काव्यशास्त्र के मानदंडों से संबद्ध किया, बल्कि अंग्रेज़ी समीक्षा के प्रतिमानों का भी पर्याप्त समन्वय किया। यही कारण है कि इतना समय बीत जाने के बाद भी आलोचना के इतिहास में उनका महत्व अक्षुण्ण है। ❑

संदर्भ-सूची

1. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृ. 492
2. त्रिपाठी, विश्वनाथ, हिन्दी आलोचना, राजकमल प्रकाशन, पृ. 49
3. वही
4. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, लोकजागरण और हिन्दी साहित्य, वाणी प्रकाशन, संपादक-रामविलास शर्मा, पृ. 187
5. त्रिपाठी, विश्वनाथ, हिंदी आलोचना, राजकमल प्रकाशन, पृ. 50
6. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, विश्व प्रपंच (भूमिका), पृ. 12
7. आचार्य रामचंद्र शुक्ल विशेषांक 'दस्तावेज'।
8. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, रस मीमांसा, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संपादक- विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ. 05
9. शर्मा, डॉ. रामविलास, आर्चा रामचंद्र शुक्ल और हिंदी आलोचना, राजकमल प्रकाशन (भूमिका)
10. पराशर, पंकज, साहित्य-आलोचना की प्रासंगिकता पर सवाल, जनसत्ता लेख जुलाई, 2017
11. डॉ. मिश्र, सत्यदेव, शुक्लोत्तर हिन्दी आलोचना पर पाश्चात्य साहित्यिक अवधारणाओं का प्रभाव, राजकमल प्रकाशन, पृ 83
12. त्रिपाठी, राममूर्ति, आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साहित्य सिद्धांत, पृ. 76

सहायक ग्रंथ सूची

13. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन
14. हिंदी साहित्य का सरल इतिहास - विश्वनाथ त्रिपाठी, ओरियंट ब्लैक प्रकाशन
15. हिंदी साहित्य का इतिहास - कुमार सर्वेश, सार्थक प्रकाशन।

स्मरण

'भारत रत्न' लता मंगेशकर

डॉ. चंदना शर्मा

सहायक अध्यापिका
हिंदी विभाग
प्राग्ज्योतिष महाविद्यालय
गुवाहाटी (असम)
मो. 7002544837

भूमिका :

स्वर कोकिला लता मंगेशकर को 'सुरों की देवी' माना जाता है। हिंदुस्तान में संगीत तो उनके कोकिल कंठ से ही होकर बहता रहा है। लताजी की जादुई आवाज की दीवानी सिर्फ भारतीय उपमहाद्वीप ही नहीं, सारी दुनिया है। अपनी जादुई आवाज पर लताजी का कहना था, 'उनकी जादुई आवाज के पीछे ईश्वर, गुरुजनों और माता-पिता का हाथ है।' कवि प्रदीप द्वारा रचित गीत 'ऐ मेरे वतन के लोगो' जब लताजी की आवाज में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने सुना था तो उनकी आँखों में भी आँसू छलक पड़े थे।

लता मंगेशकर का जन्म 28, सितंबर 1929 को इंदौर में हुआ था। उनके पिता दीनानाथ मंगेशकर शास्त्रीय गायक थे। साथ ही मराठी संगीतकार भी। पहली पत्नी नर्मदा की मृत्यु के बाद उसकी छोटी बहन शीवंती से दीनानाथ ने विवाह किया। उन्हीं की पहली संतान थीं लता मंगेशकर। बाल्यकाल में उन्हें हेमा नाम से पुकारा जाता था। परंतु दीननाथ को अपने नाटक 'भावबंधन' के एक महिला किरदार 'लतिका' का नाम इतना पसंद आया कि उसके नाम पर हेमा का नाम लता रखा गया।

लता मंगेशकर पाँच भाई बहनों में सबसे बड़ी थीं। उनके चार भाई-बहन मीना, उषा, आशा और हृदयनाथ सभी गायक-संगीतकार रहे हैं।

संगीत शिक्षा :

लताजी को बचपन से ही घर में संगीत की शिक्षा प्रदान की गई। उनके पिता के शास्त्रीय गायक होने के नाते उन्हें घर में संगीत का माहौल मिला। बचपन में वह पिता के सामने गाने से डरती थीं और रसाईघर में व्यस्त माँ को अपना गाना सुनाती थीं। दीनानाथ मंगेशकर के पास बच्चे संगीत सीखने आते थे। एक शाम एक लड़का संगीत सीखने आया। दीनानाथ ने उसे एक गाने का रियाज करने को कहा और घर से बाहर चले गए। घर में मौजूद लता को उसका गाना पसंद नहीं आय और वह स्वयं उसे गा कर सुनाने लगीं। उसी समय उनके पिता दीननाथ जी वहाँ पर पहुँचे और अति प्रसन्न हुए। उन्होंने

लता की माँ शीवंती से कहा कि कल सुबह से ही इसकी संगीत शिक्षा प्रारंभ करेंगे। दूसरे दिन सुबह छह बजे लता को जगाया और तानपुरा उठाने को कहा और राग धनश्री से उनकी संगीत शिक्षा प्रारंभ की। उस समय लता पाँच साल की थीं।

लता ने नौ साल की उम्र में पहली बार संगीत कार्यक्रम में गाया और उसके बाद फिर कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

शिक्षा :

लता जी को स्कूल में भर्ती कर दिया गया। वह स्कूल जाने लगीं तो उनके साथ उनकी बहन आशा भी स्कूल जाने लगी। शिक्षक आशा को कक्षा में बैठने की उनुमति नहीं दे रहे थे, क्योंकि बहुत छोटी थी। फलत: शिक्षक से उनकी अनबन हो गई और उन्होंने स्कूल छोड़ दिया। उनकी घर पर ही पढ़ाई हुई। बाद में उन्होंने मौलाना मेहबूब से उर्दू की भी तालिम हासिल की।

संगीत सफर :

मार्च, 1942 में मराठी फिल्म 'इतिहासन' के लिए सरस्वती सिनेटोन में बसंत जुगलेकर के निर्देशन में लता जी का पहला गाना रिकॉर्ड हुआ, जो रिलीज नहीं हुआ। उसी साल अप्रैल में पिता दीनानाथ मंगेशकर की मृत्यु हो गई। घर की बड़ी बहन होने के नाते लता मंगेशकर को परिवार के भरण-पोषण का भार अपने कंधों पर उठाना पड़ा। उस समय वह मात्र तेरह (13) साल की थीं। तब तक लता कई शास्त्रीय संगीत कार्यक्रम कर चुकी थीं। मास्टर विनायक ने उन्हें फिल्म में काम करने का प्रस्ताव दिया। उनके अनुरोध पर लता ने उनकी कंपनी में नौकरी कर ली। 1947 तक प्रफुल्ल पिक्चर में काम किया। इसके बाद उन्हें गुलाम हैदर सहाब ने गाने का मौका दिया और लता मंगेशकर प्ले-बैक सिंगर बन गईं। अनिल बिश्वास, हेमचन्द्र आदि महान संगीतकारों ने लता से गाने गवाये।

लता को अभिनय पसंद नहीं था, लेकिन आर्थिक

समस्या के कारण उन्होंने कुछ फिल्मों में अभिनय किया। मंगला गौर (1942), माझे बाल (1943), गजभाऊ (1944), बड़ी माँ (1945), जीवन यात्रा (1946) आदि फिल्मों में काम किया।

1942 में रिलीज मंगला गौर में लता की आवाज पहली बार सिनेपट सुनाई दी। उसके पश्चात 1943 में प्रदर्शित 'गजभऊ' में 'माला एक सपूत की दुनिया', 'बदल दे तू' गाना गया, जो काफई लोकप्रिय हुए।

1945 से लता मुंबई में रहनी लगीं। यहाँ आकर 'भिंडी बाजार' घराना के उस्ताद अमन अली खान से भारतीय शास्त्रीय संगीत सीखने लगीं।

उस्ताद अमन अली खान के दोस्त थे गुलाम हैदर। वह लता को शशधर मुखार्जी के पास ले गए, पर मुखार्जी ने उन्हें लेने से यह कह कर मना कर दिया कि इसकी आवाज बहुत पतली है, हमारी हीरोइन को सूट नहीं करेगी।

परंतु गुलाम हैदर ने लता की प्रतिभा को पहचाना और उन्हें गाने का मौका दिया। 1949 में 'महल' फिल्म में मधुबाला पर फिल्माया 'आएगा आने वाला' गीत ने लता को हिंदी सिने संगीत में प्रतिष्ठित कर दिया। यह गाना अति लोकप्रिय हुआ। इसके बाद लता को पीछे मुड़कर नहीं देखना पड़ा । बहुत सारी फिल्में लता के गाए गीतों के कारण ही पसंद की गईं।

दीदार, बैजू बावरा, उड़न खटोला, मदर इंडिया, बरसात, आह, श्री420, चोरी चोरी, सजा, हाउस नं 44, देवदास, शर्मिली, मधुमति, आजाद, आशा, अमरदीप, बाणी, अभिमान, रेलवे प्लेटफॉर्म, चाचा जिंदाबाद, आंधी, मुगल-ए-आजम, अनपढ़, अनिता, शागिर्द आदि सैकड़ों फिल्मों में लता ने अपनी मखमली आवाज दी। अनिल बिश्वास, शंकर जयकिशन, सचिन देब बर्मन, नौशाद, श्रीरामचन्द्र, कल्याणजी आनंदजी, डॉ. भूपेन हजारिका, आर.डी. बर्मन, आनंद मिलिन्द, अनु मलिक, राम-लक्ष्मण, ए.आर. रहमान जैसे संगीतकारों के निर्देशन में लता जी ने गाने गाये।

वे एक ऐसी गायक हैं, जिन्होंने बाप और बेटे दोनों के साथ काम किया है। फिल्मी संगीत के आलावा लता जी ने भजन, गजल भी गाए हैं। लता जी ने लगभग तीस से ज्यादा भाषाओं में फिल्मी और गैर-फिल्मी गाने गाये हैं। उन्होंने करीब २६ हजार के आसपास गानों को अपनी मधुर आवाज दी है।

पुरस्कार एवं सम्मान :

1. उन्हें 1958, 1962, 1965, 1969, 1993 और 1994 में फिल्म फेयर पुरस्कार से सम्मानित किया गया।
2. 1972, 1975 और 1990 में राष्ट्रीय पुरस्कार।
3. 1966 और 1967 में महाराष्ट्र पुरस्कार
4. 1969 में पद्म भूषण
4. 1989 में दादासाहेब फाल्के पुरस्कार
5. 1999 में पद्म विभूषण
6. 2001 में भारत रत्न सम्मान

असमीया संगीत और लता मंगेशकर :

डॉ. भूपेन हजारिका ने असमीया संगीत से लता जी को रूबरू कराया। सन् 1950 में लता जी ने पहली बार असमीया में गीत गाया। 'जोनाकरे राति असमीरे माटि' शीर्षक गीत जब सन् 1956 में रीलिज हुआ तो असम में ही नहीं, पूरे भारतवर्ष में धूम मच गई। यहाँ तक कि इस गाने की चर्चा मुंबई के अखबारों में भी हुई। पहली बार किसी बॉलीवुड गायिका ने असमीया फिल्म में गीत गाया था। लता जी के बाद कई गायकों ने असमीया में गीत गाये। लेकिन इसकी राह खोली थी लता जी ने। इस बारे में यह बताना प्रासंगिक होगा कि यह संभव हो पाया डॉ. भूपेन हजारिका की वजह से।

सन् 1956 में जब लता जी की 'जोनाकरे राति' ने धूम मचाई, तब लता जी के सुपर हीट गानों में यह ग्यारह नंबर पर था। यह गीत लता जी को इतना पसन्द आया कि उन्हें असम से प्रगाढ़ प्रेम हो गया। उन्हें लगा कि अगर किसी भाषा के सुर में इतनी मिठास है तो वह जगह कितनी सुंदर होगी। उन्होंने भूपेन हजारिका से अनुरोध किया कि प्रेम और श्रद्धा से युक्त एक गाना उनके लिए लिखें। तब तक उन्होंने असम को देखा भी नहीं था। तो उनके अनुरोध पर भूपेन हजारिका जी ने लिखा था -

''गोदाबरी नेरे पाररे परा
असमी आइलै जाचो प्रणाम

सेइखन देश मोर नेदेखा देश
तथापि चिनाकी शुवनी नाम
असमी आईलै जाचो प्रणाम।''

लेकिन विभिन्न कारणों से यह गाना 1991 में ही रिकॉर्ड हो पाया। लता जी ने स्वयं स्टुडियो बुक कर इस गाने को रिकॉर्ड किया।

ऐसे तो असम से महाराष्ट्र बहुत दूर है, पर सन् 1991 तक लता जी दो बार असम आ चुकी थीं। अत: सन् 1991 में 'नेदेखा देश' की जगह पर 'दूरणिर देश' में बदलकर इस गाने को रिकॉर्ड किया गया। इस गाने के प्रारंभ में ही लता जी ने सम्मानपूर्वक असमी आइ को प्रणाम किया है। 'आइ' शब्द लता जी को अत्यंत प्रिय था। भारतवर्ष में केवल महाराष्ट्र और असम में ही माँ को 'आइ' कहकर पुकारा जाता है।

लता जी के गाये हुए असमीया गीतों ने देश-विदेश में लोकप्रियता अर्जित की। 'एराबटर सुर' फिल्म में भी लता जी ने गाना गया था। इसी फिल्म में लता जी ने हेमंत मुखर्जी के साथ एक और गाना गया था, ''र'द पुवापर कारने मति बानो काक'' जो आज भी लोकप्रिय है।

इसके पश्चात 1988 में निर्मित 'चिराज' में भूपेन हजारिका के साथ लता जी ने 'हाय हाय हाय, कपि उठे किय ताजमहल' शीर्षक गीत गाया। 'अपराजेय' नामक फिल्म में 'अ आकाश' शीर्षक गीत भी गाया। इसके अलावा भी लता जी ने कुछ असमीया गाने गाये थे।

समाज के प्रति जागरूकता :

लता जी सामाज को हमेशा प्रेरित करती रहीं। अभिभावकों को संदेश देते हुए उन्होंने एक जगह कहा था कि बच्चे को हमेशा माता-पिता और बुजुर्गों के प्रति सम्मान करना सिखाना चाहिए। उनके अनुसार मनुष्य के स्वाभाव का उसके कर्म पर भी प्रभाव पड़ता है। अत: वह उन गानों को गाने से मना कर देती थीं, जो थोड़ा सस्ता मनोरंजन के लिए गाया जाता था। 'रॉक एंड रोल', 'कैबरे' जैसे गाना गाने से लता जी दूर रहीं। नब्बे के दशक में फिल्मों में अब ऐसे गाने आने लगे कि लता जी ने गाने से ही मना कर दिया। उन्होंने देखा की गानों में शराब, शाकी, प्याला आदि शब्द प्रचुर व्यवहृत होने लगे तो उन्होंने गाना ही बंद कर दिया।

उपसंहार :

लता मंगेशकर ने मधुबाला, नरगिस से लेकर करिश्मा कपूर तक के लिए गाने गाये। उन्होंने बदलते समय के साथ अपने आपको भी बदला। बदलते संगीत के साथ बदलते परिप्रेक्ष्य में अपने को ढालकर उसी तरह गाने गाये। वर्ष 2022 की 6 फरवरी की सुबह 8 बजकर 12 मिनट पर लता जी ने इस संसार को अलविदा कह दिया। 5 फरवरी को 'सस्वती पूजा' थी। लोगों का कहना था कि माता सरस्वती जाते-जाते अपनी वरद पुत्री को भी आपने साथ ले गईं। ए.आर. रहमान के शब्दों में हम भी कह सकते हैं, ''अगर भारतीय संगीत का कोई स्वरूप होता तो वह लता मंगेशकर जैसे होता।''❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. दास, अरुण लोचन, डॉ. भूपेन हाजरिकार चलचित्रर गीत, 2012, रेखा प्रकाशन।

सहायक ग्रंथ सूची :

1. तालुकदार, दिलीप, विश्व प्रेमिक डॉ. भूपेन हाजरिका, 2012, किताप समालय।
2. दास, अरुण लोचन, असमीयार चलचित्रर काहिनी आरु गीत, 2013, शिशु सची प्रकाशन।
3. पाठक डाकुवा मनोमती, भूपेन हाजरिकार गीत संग्रहर समु विश्लेषण, 2009, आइकन प्रकाशन।

स्मृति-शेष

विराट व्यक्तित्व के धनी गुरुवर नंद किशोर सिंह

डॉ. नवकांत शर्मा

सहायक प्राध्यापक
हिंदी विभाग, कन्या महाविद्यालय,
गुवाहाटी, असम
मो. 8638281052

01 : प्रस्तावना

समय का विधान बड़ा कठोर होता है। इस संसार में जन्म लेने वाला कोई भी मनुष्य काल के कठिन चक्र से बच नहीं सकता। सचमुच समय वह रहस्य है, जो कभी मनुष्य को सुखद अनुभव से हँसाते और दुख से शोकाभिभूत कर देता है। 3 अप्रैल, 2022 को परमपूज्य गुरुदेव डॉ. नंद किशोर सिंह सर के महाप्रस्थान का दुखद संवाद सुनकर स्तब्ध हो गया। हिंदी साहित्य और शिक्षा जगत में ही नहीं, बल्कि अनगिनत हिंदीप्रेमियों के हृदय में राज करने वाले सिंह सर नहीं रहे–इस बात को स्वीकार करना बड़ा कठिन है। धर्मपत्नी, दो बेटे समेत तमाम आत्मीय तथा हजारों अनुगामियों को शोक सागर में डुबाकर सिंह सर इस संसार से हमेशा के लिए चल बसे। सर के हिमालय समान विशाल व्यक्तित्व को फिर हृदय से महसूस किया। सूनेपन के इस दुखद पल में श्रीमद्‌भगवतगीता का एक श्लोक स्मरण हो आया–

‘वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्राणि विहाय जीर्णा
न्यान्यानि संयाति नवानि देही।’ (2.22)

वास्तव कितना भी पीड़ादायक या कठोर हो, अंततोगत्वा उसे स्वीकारना ही पड़ता है। सन 1997 में सर से प्रथम साक्षात्कार से लेकर अब तक हमारे मनमस्तिष्क में सिंह सर एक उज्ज्वल सितारे की तरह दैदीप्यमान होकर चमक रहे हैं। भटके हुए पथिक या नाविक को सही दिशा देने वाले ध्रुव नक्षत्र की तरह सर भी एक प्रेरणामय आलोक स्तंभ रहे।

02 : प्रस्तुत लेख का उद्देश्य :

(क) अध्यापक नंद किशोर सिंह जी के जीवन और व्यक्तित्व पर प्रकाश डालना।

(ख) असम के हिंदी जगत में सिंह जी की देन पर चर्चा करना।

(ग) सिंह जी के समन्वयवादी गतिविधियों पर अवलोकन करना।

(घ) अनछुए पहलुओं पर दृष्टि डालना।

03 : बहुआयामी व्यक्तित्व के कुछ महत्वपूर्ण बिंदु

3.1 : ऋषितुल्य शिक्षागुरु

उदात्त भावना, उच्च अदर्श, निडर स्वभाव और ज्ञान के प्रति सच्चा अनुराग सिंह सर के अध्यापकीय व्यक्तित्व में हमेशा निखरे रहे। किसी भी बिंदु पर कोई समझौता या लचीलापन का सवाल ही नहीं उठता था। सन् 1997 से 2000 तक प्रागज्योतिष कॉलेज के हिंदी विभाग में सिंह सर के अमृतमय सान्निध्य और ज्ञान-गरिमा को निकट से समझने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। हम अविकसित ग्रामीण क्षेत्र में आकर महानगर में उच्च शिक्षा हेतु कदम रखने वाले अति साधारण विद्यार्थी थे। फिर भी सर बड़े आदर और सहृदयता के साथ हमें उत्साहित करते थे, प्रेरणा देते थे।

सिंह सर ने हिंदी कक्षा में 'कामायनी' और 'वाणभट्ट की आत्मकथा' पढ़ाया था। कामायनी में प्रथम पंक्ति के दो शब्द बोल दिया तो पूरा स्तवक सर के स्मरण में आ जाता और हमें सुनाते थे। कामायनी की मार्मिकता, आध्यात्मिकता और गुणवत्ता को बेहतरीन ढंग से प्रस्तुत किया गया था। मित्र सिकदार और हम उस भावसागर में डूब गए थे। वाणभट्ट की आत्मकथा की प्रस्तुति भी अपूर्व थी।

3.2 : असम प्रेमी हिंदी प्रेमी

जन्मसूत्र से हिंदी भाषी क्षेत्र के होने पर भी सिंह सर असम की भौगोलिक अवस्थिति, सांस्कृतिक विविधता, लोक समाज की विशेषताओं, साहित्यिक समृद्धि और धार्मिक परंपरा से भलीभाँति परिचित थे। सच्चे अर्थ में वे असम प्रेमी थे। परिश्रमी, सरल और ईमानदार असमीया लोग तथा विद्यार्थियों से सर रिश्ता रखते थे। महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव और माधवदेव की रचनाओं से भी आप परिचित थे। सर कुछ अपने ढंग से असमीया भी बोल लेते थे। सन 1966 से 2003 तक सर ने प्रागज्योतिष कॉलेज में व्याख्याता, विभागाध्यक्ष और प्रभारी प्राचार्य के रूप में सेवा प्रदान की।

इसी असम में ही रहकर असम में हिंदी की स्थिति को मजबूत कर, असम के विद्यार्थियों का मार्गदर्शन कर सिंह सर ने आदर्श व्यक्तित्व का परिचय दिया था। इन्होंने अमर भारती, हिंदी कविता चयन, हिंदी गद्य सुधा, एकांकी त्रय, निबंधायन, राष्ट्रभाष पाठमाला आदि ग्रंथों का भी संपादन किया था। असम के हिंदी विद्यार्थियों की आजीविका को सुनिश्चित करने में भी सर का विशेष अवदान है। आज असम के हरेक हिंदी क्षेत्र में सर से शिक्षाप्राप्त हिंदी विद्यार्थीगण छाए हुए हैं।

3.3 : लोक समन्वय के मार्गदर्शक

3 जुलाई, 1943 को उत्तर प्रदेश के मऊ जिले के अंतर्गत हृदयपट्टी नामक गाँव में जन्म लेने वाले डॉ. नंद किशोर सिंह समन्वय के अग्रदूत रहे। आपका जन्मस्थान गंगा की घाटी रही तो कर्मस्थान ब्रह्मपुत्र की घाटी। शैक्षणिक दृष्टि से भी आप बड़े उदार और समन्वयवादी थे। आपने 'शिवतत्व' पर शोधकार्य किया था, परंतु देवी कामाख्या के भी परम भक्त थे। आपने पौराणिक विषयों को भी पढ़ाया। दूसरी ओर आधुनिक साहित्य के भी अच्छे जानकार रहे। सन 1989 में काशी विद्यापीठ, बनारस से 'हिंदी काव्य में शिव तत्व' विषय पर डॉ. विजय नारायण सिंह के निर्देशन में पीएच.डी. डिग्री हासिल की।

गुरुवर नंद किशोर सिंह जी का समस्त जीवन ही समन्वय सूत्र से बंधा हुआ था। हिंदी और असमीया साहित्य तथा उत्तर भारत और पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति का विराट समन्वय इनके कार्यों में झलकता है। इसलिए एक समन्वयवादी महानुभव के रूप में इन्हें सदैव याद किया जाएगा।

3.4 : देवी कामाख्या के भक्त

यह बात सबको भलीभाँति विदित है कि नंद किशोर सिंह जी कामरूप कामाख्या के परम भक्त थे। वे प्राय: कामाख्या दर्शन के लिए जाते थे। सिंह सर के शांतिपुर स्थित निवास के पास ही हम भी रहा करते थे। सर प्राय: हमारे किराए के घर के सामने से ही कामाख्या मंदिर जाया करते थे। अनेक साधु-संतों से आप कामाख्या महिमा तथा भक्ति तत्व के गूढ़ार्थ पर चर्चा-परिचर्चा करते थे। साधुओं के सान्निध्य और उनकी विचित्र जीवन-कहानी सुनने का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ था। ऐसे भी कामरूप कामाख्या के बारे में कहा गया है:-

अन्यत्र बिरला देवी
कामरूपे गृहे गृहे।

कामाख्या, अंबुवासी, हठ-योग साधना, रात की गुप्त साधना, गुप्त मंत्र, साधुओं के विचित्र जीवन आदि के बारे में सर को पक्की जानकारी थी। देवी के विविध रूप और वहाँ नियमिति पूजा-पाठ किया करते थे।

3.5 : महामानवता के पुजारी

पहली बार बाहरी दृष्टि से देखने पर या दूरी से सिंह सर एक कठोर व्यक्ति-सा लगते थे, परंतु हृदय से वे बड़े कोमल, स्वभाव से नरम, आचरण में मधुर रहे। हम प्राय: पाठ संबंधी बातों की चर्चा हेतु सर के पास जाते थे। वे प्रथमावस्था में परिवार के साथ और परवर्ती समय में अकेले रहते थे। हम अपने मित्रों के साथ उनके पास जाते तो, कभी अकेले भी जाते। वे बड़े स्नेह के साथ हमें अनेक विषयों पर ज्ञान देते थे। कई बार हमें गर्म दूध भी पिलाते थे। हम जैसे सामान्य विद्यार्थी को भी स्नेह और प्रेरणा से रास्ता दिखाते थे। हमारी सुविधा, कमजोरी, दिक्कतों को भी वे भलीभाँति समझ लेते थे। कम जानना, ठीक से हिंदी बोल न पाना, अच्छा अंक न पाना कोई बड़ी बात नहीं थी, परंतु ईमानदार, परिश्रमी और सकारात्मक बनकर आगे बढ़ना उनके लिए बड़ी बात थी।

इसी प्रसंग में यह बात भी ध्यान में रखना है कि हिंदी के अनेक अध्यापक होने के बावजूद सभी विद्यार्थियों के मन में सिंह सर के लिए गरिमामय स्थान था। कोई उनको भूल नहीं पाएगा। उनकी देन को नजरअंदाज नहीं कर पाएँगे। मानवता, प्रज्ञा और कर्तव्यनिष्ठ के उज्ज्वल प्रतिमूर्ति के रूप में वे हमेशा याद किए जाएँगे।

3.6 : कामायनी महाकाव्य के मर्मज्ञ

हिंदी साहित्य के महाकवि जयशंकर प्रसाद जी की महान कृति कामायनी हमारे लिए एक अंतहीन, व्याख्याहीन रहस्य की भंडार है। 'कामायनी' को अधिक मार्मिक और बोधगम्य स्वरूप में सिंह सर ने प्रस्तुत किया था। आज भी उनकी बलिष्ठ आवाज हमें याद है:-

'वह उन्मत्त विलास क्या हुआ
स्वप्न रहा या छलना थी।
देवसृष्टि की सुख विभावरी
ताराओं की कलना थी।'

(चिंता सर्ग, पृष्ठ-16)

महाकाव्य कामायनी में वर्णित मनु की पीड़ा एवं चंचलता, श्रद्धा का समर्पण, ममता और सहृदयता तथा इड़ा की बुद्धि को इतनी तन्मयता और सूक्ष्मता के साथ प्रस्तुत करते कि उसे सुनकर हम मन ही मन अलग दुनिया में ही पहुँच जाते। उस समय मित्र सिकदार और परवर्ती समय प्रधानजी के साथ उन बातों की बार-बार चर्चा होती थी। सिंह सर कामायनी पढ़ाते समय खुद भावुक हो उठते थे और कहते थे -'मैं ही मनु हूँ'। मानव सभ्यता के क्रम विकास और मानवीय प्रवृत्तियों की सहज अभिव्यक्ति से कामायनी के एक-एक पन्ना भरा हुआ है। कामायनी के अंदरूनी और बाहरी सौंदर्य को महससू करने की शक्ति और दृष्टि सिंह सर से ही मिली थी। आज इतने साल बीत जाने पर भी जब-जब कामायनी हाथ में लेता हूँ तो सिंह सर की एक-एक भंगिमा, स्वर, लय और शब्द आँखों के सामने साफ दिखाई देते हैं।

3.7 : तेजस्वी व्यक्तित्व के अधिकारी

नि:स्संदेह इस बात से सभी सहमत होंगे कि अध्यापक नंद किशोर सिंह जी तेजस्वी व्यक्तित्व के अधिकारी थे। साफ-सुथरा वस्त्र, प्रशस्त दृष्टि, लंबे-लंबे कदम से चलने वाले सिंह सर शारीरिक दृष्टि से भी काफी मजबूत थे। उन्हें देखकर कामायनी की निम्न पंक्तियाँ याद आ आ जातीं -

'अवयव की दृढ़ मांस-पेशियां

उर्जस्वित था वीर्य अपार
स्फीत शिराए, स्वस्थ रक्त का
होता था जिसमें संचार।'

(चिंता सर्ग, पृ.12)

परंतु सच बोलने की खातिर यह भी कहना होगा कि सिंह सर को बहुत गुस्सा आता था। उनकी क्रोधावस्था का सामान करना बड़ा कठिन था। वे जब गुस्सा हो जाते तो गालियाँ भी देते थे। खासकर अगर किसी ने झूठ बोला, अनुशासन तोड़ा या गलत काम किया तो सर की गाली सुनना शत-प्रतिशत निश्चित था, लेकिन वह क्रोध पल भर का होता। फिर वे शांत हो जाते और बच्चों को शिक्षादान करने में व्यस्त हो जाते।

श्रद्धेय सिंह सर शाकाहारी थे। खाना खुद बनाते थे। दूध उन्हें बेहद पसंद था। उन्होंने कहा था - मेरा तीन ही मूलभूत काम है पढ़ना, पढ़ाना और पूजा करना। सचमुच सर ऋषि व्यक्तित्व के अधिकारी थे।

3.8 : ज्ञान के वरद पुत्र

अध्यापक नंद किशोर सिंह जी ज्ञान के अनंत भंडार थे। हिंदी साहित्य से संबंधित कोई भी मुश्किल से मुश्किल सवाल उनसे पूछे तो तुरंत सटीक और ज्ञानगर्भित उत्तर अवश्य मिलते थे। उनके जवाब सिर्फ पाठ या प्रश्न के ही समाधान नहीं थे, बल्कि अनेक नई बिंदुओं की सही सूचना एवं जानकारी भी रहते। ज्ञान के प्रसंग में निम्न पंक्तियाँ हमेशा स्मरणीय हैं-

'ज्ञानदूर कुछ, क्रिया भिन्न है
इच्छा क्यों पूरी हो मन की,
एक दूसरे से न मिल सके
यह विडंबना है जीवन की।'

(कामायनी , रहस्य सर्ग, पृ. 280)

कामायनी के अलावा वाणभट्ट की आत्मकथा पढ़ाते समय प्राचीन भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिक चेतना, योग साधना, त्रिकोण प्रेम और इतिहास की जानकारी देखकर हम हैरान हो जाते। ठीक उसी प्रकार काव्यशास्त्र पढ़ाते समय भारतीय सिद्धांतों के साथ पाश्चात्य सिद्धांतों पर भी गुरुजी का स्पष्ट ज्ञान गरिमा झलक उठता। हम सभी विद्यार्थियों के लिए सर एक मशाल थे। राजनीतिक एवं समसामयिक विषयों पर भी सर उचित जानकारी रखते थे। डॉ. सिंह जी गौहाटी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के शोध निदेशक भी रहे और दो विशिष्ट शोधार्थियों का सफलतापूर्वक मार्गदर्शन भी किया।

3.9 : ओजस्वी वक्ता

एक ओजस्वी वक्ता के रूप में डॉ. नंद किशोर सिंह सर प्रसिद्ध थे। हिंदी कक्षा में आपका संबोधन कितना अनमोल था - कहना कठिन है, परंतु उन दिनों में हिंदी विभाग, कॉटन कॉलेज के सहयोग से असम भारती नामक स्वैच्छिक संस्था की ओर से हिंदी साहित्य से संबंधित विविध विषयों पर व्याख्यान आयोजित किए गए थे। कॉटन कॉलेज तथा गौहाटी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यापकों ने भी वहाँ बहुमूल्य भाषण रखा था। डॉ. नंद किशोर सिंह सर उन आयोजनों के मध्यमणि थे। वे या तो उस कार्यक्रम में अध्यक्षता करते थे या मुख्य वक्ता के रूप में अपने ज्ञानगर्भित व्याख्यान रखते थे। हमारे विद्यार्थी जीवन में अच्छे, जानकार, ज्ञानी अध्यापक तो बहुत मिले थे, परंतु अध्यापक होने के साथ ही अच्छे वक्ता बहुत ज्यादा नहीं मिले थे। क्लास में हो या संगोष्ठी में, सिंह जी जब बोलते थे, तब पूरा माहौल शांत हो जाता था और सबका ध्यान सिंह जी के भाषण पर ही केंद्रित हो जाता। हरेक विषय पर उनका गंभीर ज्ञान और सूक्ष्म दृष्टि थी। संभवत: इसी कारण से इनकी वाणी में एक प्रबल और प्रवाहपूर्ण धारा छिपी हुई थी।

3.10 : भारतीय संस्कृति के दैदीप्यमान स्वरूप

हमारे श्रद्धास्पद गुरुजी भारतीय संस्कृति के वाहक थे। उनके विचार, पहनावे, जीवन शैली, अनुशासन, दैनंदिन गतिविधि, खानपान आदि में भारतीय संस्कृति की पूर्ण झलक थी। धोती, लंबा कुर्ता, चमड़े का चप्पल और चश्मा पहनकर वे हमेशा चलते थे। समय के सदुपयोग पर ध्यान देते थे।

गुरुजी भारतीय संस्कार और परंपरा के वाहक थे। उन्होंने आध्यात्मिक परंपरा का नियमित रूप से पालन किया था। भारत की प्राचीन संस्कृति, धर्म साधना, मानवीय मूल्य, उच्च आदर्श, उदात्त विचार, सहायता की भावना, लोक-कल्याण आदि अच्छे गुण आपके व्यक्तित्व में विद्यमान थे। वे सच्चे अर्थ में भारतीय

संस्कृति के अनुगामी थे। यह हमारे लिए परम सौभाग्य की बात है कि सिंहजी के सादगीपूर्ण जीवन शैली को अत्यंत निकट से देखने का मौका मिला था। वह अनुभव हमारे लिए अमूल्य निधि है।

3.11 : अंतिम भेंट

हिंदी विभाग, रंगापाड़ा कॉलेज और अखिल भारतीय साहित्य परिषद के संयुक्त तत्वावधान में 'कामायनी में आधुनिकता बोध' शीर्षक विषय पर एकदिवसीय राष्ट्रीय ई-संगोष्ठी में सर का अंतिम व्याख्यान सुना था। 27 अगस्त, 2021 को सर के अंतिम दर्शन होंगे, यह कल्पनातीत था। सर को उस दिन थोड़ा कमजोर जरूर लगे थे, लेकिन वाणी में वही प्रबल प्रवाह, शक्ति और ओजस्विता भरी हुई थी। हमें लगा था कि और कुछ सालों तक सिंह सर नि:स्संदेह आराम से रहेंगे और हमें मार्गदर्शन करते रहेंगे। उसी संगोष्ठी में देश के कोने-कोने से अनेक हिंदी अनुरागियों ने हिस्सा लिया था। कुछ शोधार्थियों ने प्रश्न भी पूछे थे। सिंह सर बड़े आत्मविश्वास, गंभीर व्युत्पत्ति और सूक्ष्मदर्शिता के साथ जवाब देते थे। हमने कोई प्रश्न नहीं पूछा था। वह दिन केवल सर को सुनना, देखना, महसूस करना था। उस समय भी सर की स्मरणशक्ति बिल्कुल अटूट थी। हम धन्य हो गए। एक व्याख्यातीत सुखानुभूति से हृदय भर उठा था। पर पता नहीं था कि वही सर के अंतिम दर्शन होंगे। सर का मधुर व्याख्यान आज भी गूँज रहा है।

04 : उपसंहार

मानव जीवन बड़ा विचित्र होता है। कहीं धूप है तो कहीं छांव है। जहाँ जन्म है, वहाँ मरण भी है। जहाँ सृष्टि है, वहाँ विनाश भी है। जहाँ उजाला है, वहाँ अंधेरा भी है। यह प्रकृति का शाश्वत कानून है। इससे कोई बच नहीं सकता। राजा हो या प्रजा, अमीर हो या गरीब - सबको संसार से विदा लेना ही है। सर ने भी जिस आलोकमय रास्ते से धरती पर कदम था, उसी रहस्यमय पथ से चले भी गए। असम तथा पूर्वोत्तर भारत में उच्च शिक्षा क्षेत्र विशेषकर हिंदी में गुरुवर नंद किशोर सिंह सर के अवदान को सदैव याद किया जाएगा। सर एक अच्छे अध्यापक या शिक्षक मात्र ही नहीं थे, बल्कि आदर्शवादी और बलिष्ठ व्यक्तित्व के भी अधिकारी थे। वे हमारे लिए एक 'मॉडल' थे। हम बातों-बातों में उनकी वाणी को, सिद्धांतों का अनुकरण करते रहेंगे। सर की पुण्यात्मा को चिरशांति मिले। हम जैसे अकिंचन विद्यार्थियों पर आपका आशीर्वाद हमेशा बना रहे। हमें लगता है कि नील आकाश के किसी कोने में सर चमकते सितारे की तरह झलक रहे हैं और मंद मुस्कान से हमें देख रहे हैं, मार्गदर्शन कर रहे हैं। नंद किशोर सिंह सर हमारे मन आकाश में भी हमेशा चमकते रहेंगे प्रतिपल। हे गुरुवर! आपको शत् शत् प्रणाम! ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. प्रसाद, जयशंकर : कामायनी, भारती भंडार, इलाहाबद।
2. शर्मा, अच्युत (संपा) : डॉ. नंद किशोर सिंह अभिनंदन ग्रंथ, हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय
3. श्रीमद्भागवतगीता : गीताप्रेस, गोरखपुर

पर्दा

✍ यशपाल

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में जो कुछ भी घटित होता है, उसका प्रतिबिंब साहित्य में दिखाई देता है। इस लिहाज से हिंदी कहानी-जगत अत्यंत समृद्ध है। महान रचनाकारों प्रेमचंद, भारतेंदु हरिश्चंद्र, महादेवी वर्मा आदि ने जब अपनी कलम चलाई तो उससे निकले पात्र मानो जी उठे। द्विभाषी राष्ट्रसेवक ने अपने हर अंक में आपके लिए देशी-विदेशी लेखकों की ऐसी एक प्रतिनिधि कहानी प्रकाशित करने का निश्चय किया है ताकि समाज और समाज के बीच एक सेतु बना रहे और रोजमर्रा की व्यस्त जिंदगी में भी आप साहित्य रस का आनंद उठा पाएँ। इस क्रम में इस बार प्रस्तुत है यशपाल की कहानी 'पर्दा'।

-संपादक

चौधरी पीरबख्श के दादा चुंगी के महकमे में दारोगा थे। आमदनी अच्छी थी। एक छोटा, पर पक्का मकान भी उन्होंने बनवा लिया। लड़कों को पूरी तालीम दी। दोनों लड़के एंट्रेंस पास कर रेलवे में और डाकखाने में बाबू हो गए। चौधरी साहब की जिंदगी में लड़कों के ब्याह और बाल-बच्चे भी हुए, लेकिन ओहदे में खास तरक्की न हुई; वही तीस और चालीस रुपए माहवार का दर्जा।

अपने जमाने की याद कर चौधरी साहब कहते- वो भी क्या वक्त थे! लोग मिडिल पास कर डिप्टी कलट्टरी करते थे और आजकल की तालीम है कि एंट्रेंस तक अंग्रेजी पढ़कर लड़के तीस-चालीस से आगे नहीं बढ़ पाते। बेटों को ऊँचे ओहदों पर देखने का अरमान लिए ही उन्होंने आँखें मूंद लीं।

इंशाअल्ला, चौधरी साहब के कुनबे में बरकत हुई। चौधरी फजल-कुरबान रेलवे में काम करते थे। अल्लाह ने उन्हें चार बेटे और तीन बेटियाँ दी थीं। चौधरी इलाहीबख्श डाकखाने में थे। उन्हें भी अल्लाह ने चार बेटे और दो लड़कियां बख्शीं।

चौधरी-खानदान अपने मकान को हवेली पुकारता था। नाम बड़ा देने पर भी जगह तंग ही रही। दारोगा साहब के जमाने में जनाना भीतर था और बाहर बैठक में वे मोढ़े पर बैठ नैचा गुड़गुड़ाया करते। जगह की तंगी की वजह से उनके बाद बैठक भी जनाने में शामिल हो गई और घर की ड्योढ़ी पर पर्दा लटक गया। बैठक न रहने पर भी घर की इज्जत का खयाल था, इसलिए पर्दा बोरी के टाट का नहीं, बढ़िया किस्म का रहता।

जाहिरा दोनों भाइयों के बाल-बच्चे एक ही मकान में रहने पर भी भीतर सब अलग-अलग था। ड्योढ़ी का पर्दा कौन भाई लाए? इस समस्या का हल इस तरह हुआ

कि दारोगा साहब के जमाने की पलंग की रंगीन दरिया एक के बाद एक ड्योढ़ी में लटकाई जाने लगीं।

तीसरी पीढ़ी के ब्याह-शादी होने लगे। आखिर चौधरी-खानदान की औलाद को हवेली छोड़ दूसरी जगहें तलाश करनी पड़ी। चौधरी इलाहीबख्श के बड़े साहबजादे एंट्रेंस पास कर डाकखाने में बीस रुपए की क्लर्की पा गए। दूसरे साहबजादे मिडिल पास कर अस्पताल में कम्पाउंडर बन गए। ज्यों-ज्यों जमाना गुजरता जाता, तालीम और नौकरी दोनों मुश्किल होती जाती। तीसरे बेटे होनहार थे। उन्होंने वजीफा पाया। जैसे-तैसे मिडिल कर स्कूल में मुदर्रिस हो देहात चले गए।

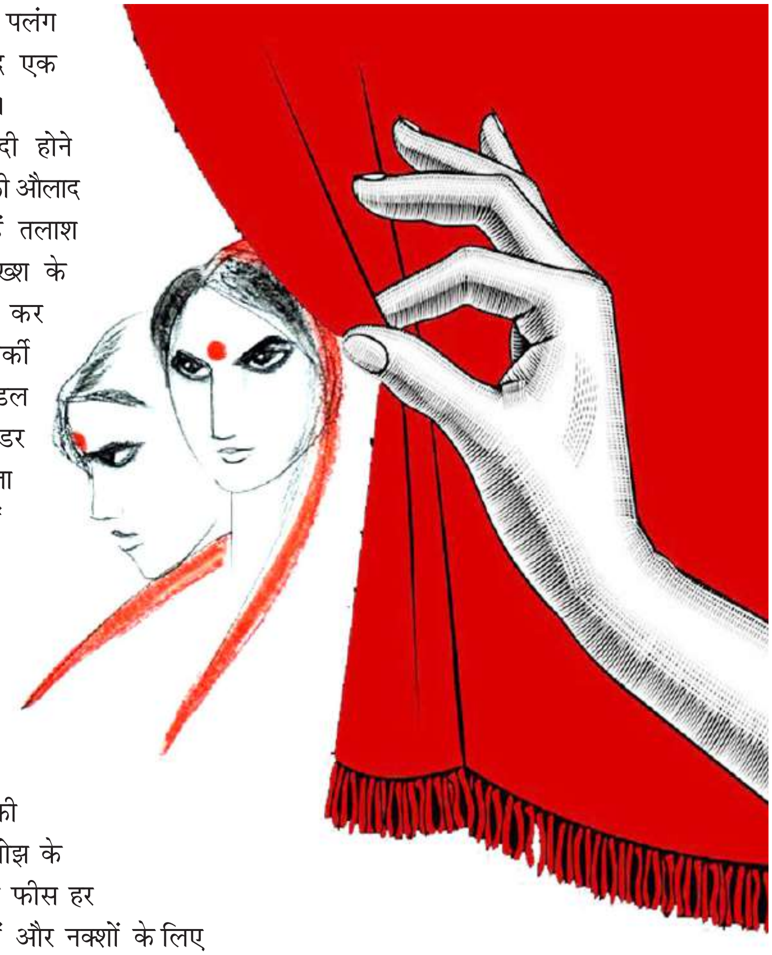

चौथे लड़के पीरबख्श प्राइमरी से आगे न बढ़ सके। आजकल की तालीम मां-बाप पर खर्च के बोझ के सिवा और है क्या? स्कूल की फीस हर महीने, और किताबों, कापियों और नक्शों के लिए रुपए-ही-रुपए!

चौधरी पीरबख्श का भी ब्याह हो गया। मौला के करम से बीवी की गोद भी जल्दी ही भरी। पीरबख्श ने रोजगार के तौर पर खानदान की इज्जत के ख्याल से एक तेल की मिल में मुंशीगिरी कर ली। तालीम जियादा नहीं तो क्या, सफेदपोश खानदान की इज्जत का पास तो था। मजदूरी और दस्तकारी उनके करने की चीजें न थीं। चौकी पर बैठते। कलम-दवात का काम था।

बारह रुपया महीना अधिक नहीं होता। चौधरी पीरबख्श को मकान सितवा की कच्ची बस्ती में लेना पड़ा। मकान का किराया दो रुपया था। आसपास गरीब और कमीने लोगों की बस्ती थी। कच्ची गली के बीचों-बीच, गली के मुँहाने पर लगे कमेटी के नल से टपकते पानी की काली धार बहती रहती, जिसके किनारे घास उग आई थी। नाली पर मच्छरों और मक्खियों के बादल उमड़ते रहते। सामने रमजानी धोबी की भट्टी थी, जिसमें से धुआँ और सज्जी मिले उबलते कपड़ों की गंध उड़ती रहती। दाईं ओर बीकानेरी मोचियों के घर थे। बाईं ओर वर्कशॉप में काम करने वाले कुली रहते!

इस सारी बस्ती में चौधरी पीरबख्श ही पढ़े-लिखे सफेदपोश थे। सिर्फ उनके ही घर की ड्योढ़ी पर पर्दा था। सब लोग उन्हें चौधरीजी, मुंशीजी कहकर सलाम करते। उनके घर की औरतों को कभी किसी ने गली में नहीं देखा। लड़कियाँ चार-पाँच बरस तक किसी काम-काज से बाहर निकलतीं और फिर घर की आबरू के ख्याल से उनका बाहर निकलना मुनासिब न था। पीरबख्श खुद ही मुस्कुराते हुए सुबह-शाम कमेटी के नल से घड़े भर लाते।

चौधरी की तनख्वाह पंद्रह बरस में बारह से अठारह हो गई। खुदा की बरकत होती है, तो रुपए-पैसे की शक्ल में नहीं, आल-औलाद की शक्ल में होती है। पंद्रह बरस में पाँच बच्चे हुए। पहले तीन लड़कियाँ और बाद में दो लड़के।

दूसरी लड़की होने को थी तो पीरबख्श की वाल्दा मदद के लिए आईं। वालिद साहब का इंतिकाल हो चुका था। दूसरा कोई भाई वाल्दा की फिक्र करने आया नहीं; वे छोटे लड़के के यहाँ ही रहने लगीं।

जहाँ बाल-बच्चे और घर-बार होता है, सौ किस्म की झंझटें होती ही हैं। कभी बच्चे को तकलीफ है, तो कभी जच्चा को। ऐसे वक्त में कर्ज की जरूरत कैसे न हो? घर-बार हो, तो कर्ज भी होगा ही।

मिल की नौकरी का कायदा पक्का होता है। हर महीने की सात तारीख को गिनकर तनख्वाह मिल जाती है। पेशगी से मालिक को चिढ़ है। कभी बहुत जरूरत पर ही मेहरबानी करते। जरूरत पड़ने पर चौधरी घर की कोई छोटी-मोटी चीज गिरवी रखकर उधार ले आते। गिरवी रखने से रुपए के बारह आने ही मिलते। ब्याज मिलाकर सोलह आने हो जाते और फिर चीज के घर लौट आने की संभावना न रहती।

मुहल्ले में चौधरी पीरबख्श की इज्जत थी। इज्जत का आधार था, घर के दरवाजे पर लटका पर्दा। भीतर जो हो, पर्दा सलामत रहता। कभी बच्चों की खींच-खांच या बेदर्द हवा के झोंकों से उसमें छेद हो जाते, तो पर्दे की आड़ से हाथ सुई-धागा ले उसकी मरम्मत कर देते।

दिनों का खेल! मकान की ड्योढ़ी के किवाड़ गलते-चलते बिल्कुल गल गए। कई दफे कसे जाने से पेच टूट गए और सुराख ढीले पड़ गए। मकान मालिक सुरजू पांडे को उसकी फिक्र न थी। चौधरी कभी जाकर कहते-सुनते तो उत्तर मिलता- कौन बड़ी रकम थमा देते हो? दो रुपल्ली किराया और वह भी छः-छः महीने का बकाया। जानते हो लकड़ी का क्या भाव है। न हो मकान छोड़ जाओ। आखिर किवाड़ गिर गए। रात में चौधरी उन्हें जैसे-तैसे चौखट से टिका देते। रात-भर दहशत रहती कि कहीं कोई चोर न आ जाए।

मुहल्ले में सफेदपोशी और इज्जत होने पर भी चोर के लिए घर में कुछ न था। शायद एक भी साबित कपड़ा या बर्तन ले जाने के लिए चोर को न मिलता; पर चोर तो चोर है। छीनने के लिए कुछ न हो, तो भी चोर का डर तो होता ही है। वह चोर जो ठहरा!

चोर से जियादा फिक्र थी आबरू की। किवाड़ न रहने पर पर्दा ही आबरू का रखवारा था। वह पर्दा भी तार-तार होते-होते एक रात आंधी में किसी भी हालत में लटकने लायक न रह गया। दूसरे दिन घर की एकमात्र पुश्तैनी चीज दरी दरवाजे पर लटक गई। मुहल्ले वालों ने देखा और चौधरी को सलाह दी- बरे चौधरी, इस जमाने में दरी यूं काहे खराब करोगे? बाजार से ला टाट का टुकड़ा न लटका दो! पीरबख्श टाट की कीमत भी आते-जाते कई दफे पूछ चुके थे। दो गज टाट आठ आने से कम में न मिल सकता था। हँसकर बोले-होने दो क्या है? हमारे यहाँ पक्की हवेली में भी ड्योढ़ी पर दरी का ही पर्दा रहता था।

कपड़े की महँगाई के इस जमाने में घर की पाँचों औरतों के शरीर से कपड़े जीर्ण होकर यूँ गिर रहे थे, जैसे पेड़

इस दृश्य को देख सकने की ताब चौधरी में न थी, परंतु द्वार पर खड़ी भीड़ ने देखा- घर की लड़कियाँ और औरतें पर्दे के दूसरी ओर घटती घटना के आतंक से आँगन के बीचों-बीच इकट्ठी हो खड़ी काँप रही थीं। सहसा पर्दा हट जाने से औरतें ऐसे सिकुड़ गईं, जैसे उनके शरीर का वस्त्र खींच लिया गया हो। वह पर्दा ही तो घर-भर की औरतों के शरीर का वस्त्र था। उनके शरीर पर बचे चीथड़े उनके एक-तिहाई अंग ढँकने में भी असमर्थ थे!

जाहिल भीड़ ने घृणा और शरम से आँखें फेर ली। उस नग्नता की झलक से खान की कठोरता भी पिघल गई। गलानि से थूक, पर्दे को आंगन में वापिस फेंक, क्रुद्ध निराशा में उसने लाहौल बिला...! कहा और असफल लौट गया।

अपनी छाल बदलते हैं; पर चौधरी साहब की आमदनी से दिन में एक दफे किसी तरह पेट भर सकने के लिए आटा के अलावा कपड़े की गुंजाइश कहाँ? खुद उन्हें नौकरी पर जाना होता। पायजामे में जब पैबंद संभालने की ताब न रही, मारकीन का एक कुर्ता-पायजामा जरूरी हो गया, पर लाचार थे।

गिरवी रखने के लिए घर में जब कुछ भी न हो, गरीब का एकमात्र सहायक है पंजाबी खान। रहने की जगह भर देखकर वह रुपया उधार दे सकता है। दस महीने पहले गोद के लड़के बर्कत के जन्म के समय पीरबख्श को रुपए की जरूरत आ पड़ी। कहीं और कोई प्रबंध न हो सकने के कारण उन्होंने पंजाबी खान बबर अली खां से चार रुपए उधार ले लिए थे।

बबर अली खां का रोजगार सितवा के उस कच्चे मुहल्ले में अच्छा-खासा चलता था। बीकानेरी मोची, वर्कशॉप के मजदूर और कभी-कभी रमजानी धोबी सभी बबर मियां से कर्ज लेते रहते। कई दफे चौधरी पीरबख्श ने बबर अली को कर्ज और सूद की किश्त न मिलने पर अपने हाथ के डंडे से ऋणी का दरवाजा पीटते देखा था। उन्हें साहूकार और ऋणी में बीच-बचौवल भी करना पड़ा था। खान को वे शैतान समझते थे, लेकिन लाचार हो जाने पर उसी की शरण लेनी पड़ी। चार आना रुपया महीने पर चार रुपया कर्ज लिया। शरीफ खानदानी, मुसलमान भाई का खयाल कर बबर अली ने एक रुपया माहवार की किश्त मान ली। आठ महीने में कर्ज अदा होना तय हुआ।

खान की किश्त न दे सकने की हालत में अपने घर के दरवाजे पर फजीहत हो जाने की बात का ख्याल कर चौधरी के रोएँ खड़े हो जाते। सात महीने फाका करके भी वे किसी तरह से किश्त देते चले गए; लेकिन जब सावन में बरसात पिछड़ गई और बाजरा भी रुपए का तीन सेर मिलने लगा, किश्त देना संभव न रहा। खान सात तारीख की शाम को ही आया। चौधरी पीरबख्श ने खान की दाढ़ी छू और अल्ला की कसम खा एक महीने की मुआफी चाही। अगले महीने एक का सदा देने का वायदा किया! खान टल गया।

भादों में हालत और भी परेशानी की हो गई। बच्चों की माँ की तबीयत रोज-रोज गिरती जा रही थी। खाया-पीया उसके पेट में न ठहरता। पथ्य के लिए उसको गेहूँ की रोटी देना जरूरी हो गया। गेहूँ मुश्किल से रुपए का सिर्फ ढाई सेर मिलता। बीमार का जी ठहरा, कभी प्याज के टुकड़े या धनिये की खुशबू के लिए ही मचल जाता। कभी पैसे की सौंफ, अजवायन, काले नमक की ही जरूरत हो, तो पैसे की कोई चीज मिलती ही नहीं। बाजार में तांबे का नाम ही नहीं रह गया! नाहक इकन्नी निकल जाती है। चौधरी को दो रुपए महँगाई-भत्ते के मिले; पर पेशगी लेते-लेते तनख्वाह के दिन केवल चार ही रुपए हिसाब में निकले।

बच्चे पिछले हफ्ते लगभग फाके से थे। चौधरी कभी गली से दो पैसे की चौराई खरीद लाते, कभी बाजरा उबाल सब लोग कटोरा-कटोरा-भर पी लेते। बड़ी कठिनता से मिले चार रुपयों में से सवा रुपया खान के हाथ में धर देने की हिम्मत चौधरी को न हुई।

मिल से घर लौटते समय वे मंडी की ओर टहल गए। दो घंटे बाद जब समझा, खान टल गया होगा और अनाज की गठरी ले वे घर पहुँचे। खान के भय से दिल डूब रहा था, लेकिन दूसरी ओर चार भूखे बच्चों, उनकी माँ, दूध न उतर सकने के कारण सूखकर काँटा हो रहे गोद के बच्चे और चलने-फिरने से लाचार अपनी जईफ माँ की भूख से बिलबिलाती सूरतें आँखों के सामने नाच जाती। धड़कते हुए हृदय से वे कहते जाते- मौला सब देखता है, खैर करेगा।

सात तारीख की शाम को असफल हो खान आठ की सुबह खूब तड़के चौधरी के मिल चले जाने से पहले ही अपना डंडा हाथ में लिए दरवाजे पर मौजूद हुआ।

रात-भर सोच-सोचकर चौधरी ने खान के लिए बयान तैयार किया। मिल के मालिक लालाजी चार रोज के लिए बाहर गए हैं। उनके दस्तखत के बिना किसी को भी तनख्वाह नहीं मिल सकी। तनख्वाह मिलते ही वह सवा रुपया हाजिर करेगा। माकूल वजह बताने पर भी खान बहुत देर तक गुर्राता रहा-अम वतन चोड़ के परदेस में पड़ा है, ऐसे रुपिया चोड़ देने के वास्ते अम यहां नहीं आया है, अमारा भी बाल-बच्चा है। चार रोज में रुपिया नई देगा, तो अम तुमारा...कर देगा।

पाँचवें दिन रुपया कहाँ से आ जाता! तनखवाह मिले अभी हफ्त भी नहीं हुआ। मालिक ने पेशगी देने से साफ इनकार कर दिया। छठे दिन किस्मत से इतवार था। मिल में छुट्टी रहने पर भी चौधरी खान के डर से सुबह ही बाहर निकल गए। जान-पहचान के कई आदमियों के यहाँ गए। इधर-उधर की बातचीत कर वे कहते- अरे भाई, हो तो बीस आने पैसे तो दो-एक रोज के लिए देना। ऐसे ही जरूरत आ पड़ी है।

उत्तर मिला- मियां, पैसे कहाँ इस जमाने में! पैसे का मोल कौड़ी नहीं रह गया। हाथ में आने से पहले ही उधार में उठ गया तमाम!

दोपहर हो गई। खान आया भी होगा, तो इस वक्त तक बैठा नहीं रहेगा- चौधरी ने सोचा, और घर की तरफ चल दिए। घर पहुँचने पर सुना खान आया था और घंटे-भर तक ड्योढ़ी पर लटके दरी के पर्दे को डंडे से ठेल-ठेलकर गाली देता रहा है! पर्दे की आड़ से बड़ी बीबी के बार-बार खुदा की कसम खा यकीन दिलाने पर कि चौधरी बाहर गए हैं, रुपया लेने गए हैं, खान गाली देकर कहता- नई, बदजात चोर बीतर में चिपा है! अम चार घंटे में पिर आता है। रुपिया लेकर जाएगा। रुपिया नई देगा, तो उसका खाल उतारकर बाजार में बेच देगा। हमारा रुपिया क्या अराम का है?

चार घंटे से पहले ही खान की पुकार सुनाई दी- चौदरी! पीरबख्श के शरीर में बिजली-सी दौड़ गई और ये बिल्कुल निस्सत्त्व हो गए, हाथ-पैर सुन और गला खुश्क।

गाली दे पर्दे को ठेलकर खान के दुबारा पुकारने पर चौधरी का शरीर निर्जीवप्राय होने पर भी निश्चेष्ट न रह सका। वे उठकर बाहर आ गए। खान आग-बबूला हो रहा था- पैसा नहीं देने का वास्ते चिपता है!...

एक-से-एक बढ़ती हुई तीन गालियाँ एक-साथ खान के मुँह से पीरबख्श के पुरखों-पीरों के नाम निकल गईं। इस भयंकर आघात से पीरबख्श का खानदानी रक्त भड़क उठने के बजाय और भी निर्जीव हो गया। खान के घुटने छू, अपनी मुसीबत बता वे मुआफी के लिए खुशामद करने लगे।

खान की तेजी बढ़ गई। उसके ऊँचे स्वर से पड़ोस के मोची और मजदूर चौधरी के दरवाजे के सामने इकट्ठे हो गए। खान क्रोध में डंडा फटकार कर कह रहा था- पैसा नहीं देना था, लिया क्यों? तनख्वाह किदर में जाता? अरामी अमारा पैसा मारेगा। अम तुमारा खाल खींच लेगा। पैसा नई है, तो घर पर पर्दा लटका के शरीफजादा कैसे बनता?... तुम अमको बीबी का गैना दो, बर्तन दो, कुछ तो भी दो, अम ऐसे नई जाएगा।

बिल्कुल बेबस और लाचारी में दोनों हाथ उठा खुदा से खान के लिए दुआ मांग पीरबख्श ने कसम खाई, एक पैसा भी घर में नहीं, बर्तन भी नहीं, कपड़ा भी नहीं; खान चाहे तो बेशक उसकी खाल उतारकर बेच ले।

खान और आग हो गया- अम तुमारा दुआ क्या करेगा? तुमारा खाल क्या करेगा? उसका तो जूता भी नई बनेगा। तुमारा खाल से तो यह टाट अच्चा। खान ने ड्योढ़ी पर लटका दरी का पर्दा झटक लिया। ड्योढ़ी से पर्दा हटने के साथ ही, जैसे चौधरी के जीवन को डोर टूट गई। वह डगमगाकर जमीन पर गिर पड़े।

इस दृश्य को देख सकने की ताब चौधरी में न थी, परंतु द्वार पर खड़ी भीड़ ने देखा- घर की लड़कियाँ और औरते पर्दे के दूसरी ओर घटती घटना के आतंक से आँगन के बीचों-बीच इकट्ठी हो खड़ी काँप रही थीं। सहसा पर्दा हट जाने से औरतें ऐसे सिकुड़ गईं, जैसे उनके शरीर का वस्त्र खींच लिया गया हो। वह पर्दा ही तो घर-भर की औरतों के शरीर का वस्त्र था। उनके शरीर पर बचे चीथड़े उनके एक-तिहाई अंग ढँकने में भी असमर्थ थे!

जाहिल भीड़ ने घृणा और शरम से आँखें फेर ली। उस नग्नता की झलक से खान की कठोरता भी पिघल गई। गलानि से थूक, पर्दे को आँगन में वापिस फेंक, क्रुद्ध निराशा में उसने लाहौल बिला...! कहा और असफल लौट गया। भय से चींखकर ओट में हो जाने के लिए भागती हुई औरतों पर दया कर भीड़ छंट गई। चौधरी बेसुध पड़े थे। जब उन्हें होश आया, ड्योढ़ी पर का पर्दा आँगन में सामने पड़ा था; परंतु उसे उठाकर फिर से लटका देने का सामर्थ्य उनमें शेष न था। शायद अब इसकी आवश्यकता भी न रही थी। पर्दा जिस भावना का अवलंब था, वह मर चुकी थी। ❑

कविता

मेस्तर की लली

✍ डॉ. प्रदीप कुमार दूबे

देखो! यह रामकली
कितनी भोली और भली
हाथ लिए झाड़ू और बल्ली
साफ करती नली-गली
छुपते-छुपाते शौचालय की ओर चली
किसी बड़े घर की नहीं मेस्तर की लली।
गति मन्द-मन्द मधुर मुस्कान लिए
अपने अकर्म कर्मों में सकल जहान लिए
हम सबों के लिए माथे पर दुर्गन्ध का मचान लिए
मरी मानवता का साजो सामान लिए
दुबकी और सहमी सी ढेर अरमान लिए
होगा महाभारत फिर उसका फरमान लिए
निरभ्र बिल्कुल मौन भाव से आँखों में तूफान लिए।
आती इठलाती है
गंदगी दूर भगाती है
उससे छुआ न जाए कोई
अपनी मनहुस छाया को भी बचाती है
सावधान मूर्ख धूर्त पाखंडियों!
होगी एक दिन नयी सुबह
गीत नया गाती है
बेखौफ आने वाली उस कयामत की
याद भर दिलाती है।
हँसती हँसाती है
रोती रुलाती है
इसलिए कि वह माँ है
सारे जहाँ की अलबेली जाँ है
हिन्दू में बाभन और मुसलिम में खाँ है।
यह नहीं होती तो दुनिया ही रोती
पत्थर बन जाता सुन्दर सा मोती
सबके मलमूत्तर को कौन भला धोती
आदिम अवस्था की प्रथम ही चरणों में
सच कहूँ सूख जाती
जानवर से आदमी बन जाने की सोती।
अब तो आकर इसको छुओ
चेत करो अब अधिक न मुओ
उसे मानकर दुर्गा काली
ज्योति पुँज सुबह की लाली
भरी खीर से सुन्दर थाली
बाग सजाने वाली माली
जैसी देवी को प्रणाम करो
क्योंकि वह माँ मेस्तरानी है। ❑

हिन्दी विभाग, राधा-शान्ता महाविद्यालय, तिलौथू, रोहतास, मो. 8292568499

अभी भी प्यार करता हूँ प्रिय

✍ पंकज मिश्रा

हर घृणा हर द्वेष तेरा शिरोधार्य करता हूँ प्रिय
कल भी तुमसे प्यार था, अब भी प्यार करता हूँ प्रिय।
मांगा नहीं था ये कभी
किंतु तुम देती गयीं,
झूठ, छल, आँसू, अमावस
मत्थे सब मढतीं गयीं।
ढकती रहीं राहें मेरी,
प्रेमांध के कालीन से,
अनुराग ने वैराग्य से
संधि की शालीन से।
तो फिर लो, मैं सब सहर्ष स्वीकार करता हूँ प्रिय,
कल भी तुमसे प्यार था, अब भी प्यार करता हूँ प्रिय।
पीर भी न बह सकी
उपहास के तटबंध से,
तुमने पग से रौंद के
संबंध सारे तोड़ डाले।
तोड़ डाले सब सुनहरे
स्वप्न आँखों में पले,
आह् ने तब मौन साधा
अंगार सा अंतर जले।
फटता हृदय फिर भी तुम्हें चित्कार करता हूँ प्रिय,
कल भी तुमसे प्यार था, अब भी प्यार करता हूँ प्रिय।
उजले हृदय का पुँज उजला
हो रहा निस्तेज सा,
डूबता जाता रवि-सा
पा तमों का धुंध सा।
शोर मंथर श्वासों का
कौन सुनता अब इन्हें,
फड़फड़ा बुझते दीये जो
कौन तकता फिर उन्हें?
थक न जाये लब कहीं, अंतिम नमस्कार करता हूँ प्रिय,
कल भी तुमसे प्यार था, अब भी प्यार करता हूँ प्रिय। ❑

शोधार्थी, डॉ. हरि सिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय सागर (म.प्र.) ई-मेल : pankumishra92@gmail.com

প্ৰবন্ধ

ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতত অসমীয়া গ্ৰাম্য সমাজৰ চিত্ৰ

ড° স্বপ্নালী দাস

সহকাৰী অধ্যাপিকা
অসমীয়া বিভাগ, কটন বিশ্ববিদ্যালয়
ই-মেইল ঃ
swapnalidasghy@gmail.com
ম'বাইল ঃ ৯৩৬৫৫৭০৬৪০

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমৰ সংগীত জগতত ধ্ৰুৱতৰাৰ দৰে জিলিকি থকা বিশ্ববৰেণ্য শিল্পী ড° ভূপেন হাজৰিকা আছিল এক জীৱন্ত কিংবদন্তী। সংগীত আছিল তেওঁৰ প্ৰাণস্পন্দন। ভূপেন হাজৰিকাৰ সংগীত যাত্ৰাৰ আৰম্ভণি হৈছিল উষানগৰী তেজপুৰতেই। মহাপুৰুষ শংকৰদেৱক উদ্দেশ্য কৰি লিখা 'কুসুম্বৰ পুত্ৰ শ্ৰীশংকৰ গুৰুৱে ধৰিছিল নামৰে তান' শীৰ্ষক গীতটিয়েই আছিল তেওঁৰ সংগীত যাত্ৰাৰ পহিলা সোপান। শৈশৱতে অংকুৰিত হোৱা এই গীতসাহিত্যৰ যাত্ৰাৰ অক্লান্ত যাত্ৰীৰূপে তেওঁ আজীৱন বাট বুলিছিল। তেওঁৰ পৰিচয় কেৱল গীতিকাৰ ৰূপেই নাছিল তেওঁ আছিল একেধাৰে সুৰকাৰ, সুকণ্ঠী গায়ক, বাদক, সংগীত পৰিচালক আৰু কথাছবি নিৰ্মাতা আদি অনেক গুণেৰে বিভূষিত। তেওঁৰ গীতৰ মাজত নিনাদিত হৈছিল মানৱতাৰ জয়গান। সমাজৰ বিভিন্ন স্তৰৰ মানুহৰ সুখ-দুখ, হা-হুতাহ, আশা-নিৰাশাৰ ছবিয়ে প্ৰাণ পাই উঠিছিল তেওঁৰ সংগীতত। কেতিয়াবা নিজ দেশৰ পৰিধি অতিক্ৰম কৰি পৃথিৱীৰ বিভিন্ন কোণৰ জীৱন্ত প্ৰতিচ্ছবিকো গীতৰ মাজত প্ৰতিভাত কৰি তুলিছিল। এজন প্ৰকৃত শিল্পীৰ চিন্তা আৰু চেতনা কেতিয়াও কোনো এখন দেশৰ সীমাৰ মাজত আৱদ্ধ নাথাকে। সমগ্ৰ বিশ্বই তেওঁৰ চেতনাত জীপাল হৈ থাকে। ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ জীৱনাদৰ্শই তাৰেই সাক্ষ্য বহন কৰে। সেয়ে তেওঁ বিশ্বশিল্পী। তথাপিও তেওঁৰ নিজৰ দেশৰ মাটিৰ প্ৰতি আছিল এক বিশেষ আকৰ্ষণ, এক বিশেষ তান। দিহিঙে দিপাঙে বাট বুলি ফুৰা যাযাবৰী শিল্পীজনে কিন্তু শান্তি বিচাৰি পাইছিল স্বদেশ আৰু স্বজাতিৰ মাজত। কেতিয়াবা অসমৰ গ্ৰাম্য জীৱনৰ নিভাঁজ আৰু অকপট ছবিবোৰে তেওঁৰ হৃদয়ৰ এচোকত গজালি মেলিছিল আৰু কেতিয়াবা সংগীতৰ মুৰ্চ্ছনাত প্ৰাণ পাই উঠিছিল। তেওঁৰ বহুখিনি গীতৰ মাজত অসমৰ গ্ৰাম্য জীৱনৰ নিখুট আৰু নিভাঁজ প্ৰতিচ্ছবি প্ৰতিফলিত হৈছে। ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ তেনে কেইবাটিও গীতৰ বিষয়ে আলোচনা বা বিশ্লেষণৰ প্ৰয়াস কৰাই হৈছে এই আলোচনাৰ উদ্দেশ্য।

বীজ শব্দ ঃ গ্ৰাম্য, সংগীত, চেতনা, শিল্পী, সমাজ

অৱতৰণিকা ঃ

সংগীত এক শ্ৰেষ্ঠ কলা। সংগীত সংসাৰ মৰুত এটুপি পানী সদৃশ। কবিতা, চিত্ৰ আৰু সুৰৰ ত্ৰিবেণী সংগমেই হ'ল সংগীত। ইয়াৰ কবিতা ভাগত থাকে কথা, ছন্দ আৰু অনুভূতি। চিত্ৰভাগত থাকে ৰূপ, ৰং আৰু ধাৰণা আৰু সুৰভাগত থাকে তাল, লয় আৰু স্বৰলহৰ। প্ৰথম দুটা ভাগ নিৰ্মাণ কৰে গীতিকাৰ বা গীতৰচোতাজনে আৰু তৃতীয় ভাগৰ দায়িত্ব লয় সুৰকাৰ আৰু গায়কে। সংগীতৰ ত্ৰিবেণী সংগম বিশ্বৰ খুব কম সংখ্যক শিল্পীৰ মাজতহে প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা যায়। ড° ভূপেন হাজৰিকা আছিল সেই সীমিত সংখ্যক শিল্পীৰ অন্যতম। তেওঁ আছিল আজন্ম শিল্পী। পাঁচ বছৰ বয়সতে গুৱাহাটী গৰৰ্ণমেণ্ট স্কুলৰ ছাত্ৰ একতা সভাত গীত গাই লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাদেৱৰ পৰা শিশু ভূপেনে লাভ কৰিছিল আশীৰ্বাদৰ চুমা। সাহিত্যৰথীৰ সেই চুমাই শিশু ভূপেনৰ গীতিমানসত সুৰাগুড়ি তোলা বুলি ড° মহেন্দ্ৰ বৰাই যথাৰ্থ মতকেই প্ৰদান কৰিছিল। সাহিত্যৰথীৰ সান্নিধ্য সুখ লাভ কৰাৰ ওপৰি তেওঁ লাভ কৰিছিল অসমীয়া জাতিৰ প্ৰবাদ পুৰুষ জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালা, বিষ্ণুপ্ৰসাদ ৰাভা আৰু ফণী শৰ্মাকে ধৰি অনেক গুণী জ্ঞানী ব্যক্তিৰ সাহচৰ্য্য। কৈশোৰ কালতে লাভ কৰা এইসকল ব্যক্তিৰ সান্নিধ্যই তেওঁক সমৃদ্ধিশালী কৰি তোলাৰ লগতে তেওঁলোকৰ জীৱনাদৰ্শ আৰু শক্তিশালী ব্যক্তিত্বই তেওঁৰ মানসপটত গভীৰভাৱে ৰেখাংকন কৰিছিল।

ড° ভূপেন হাজৰিকাই সুদীৰ্ঘ জীৱন পৰিক্ৰমাৰ বিভিন্ন সময়ত লাভ কৰা অভিজ্ঞতাৰ পুঞ্জীভূত ফচলৰে সজাই তুলিছিল তেওঁৰ কথা আৰু সুৰৰ মালঞ্চ। অৱশ্যে জীৱনৰ আগবয়সত সংগীতপ্ৰাণ শিল্পীগৰাকীয়ে গীতেই যে তেওঁৰ জীৱনৰ সৰ্বস্ব হ'ব সেই কথা ভবা নাছিল। তেওঁৰ নিজৰ জীৱনৰ ইচ্ছা-অনিচ্ছাবোৰৰ ওপৰত বিভিন্ন পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা চলাইছিল। তেওঁৰ ভাষাত— "মোৰ শিল্পী প্ৰাণে যেনিয়েই মোক বাট দেখুৱাই নিছে তেনিয়েই বাট বুলি আহিছোঁ মই। ছবি আঁকিলোঁ, নাচিলোঁ, বোলছবি পৰিচালনা কৰিলোঁ, সংগীত জগতৰ নানা দিশত নানান ধৰণৰ পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা কৰিলোঁ, আলোচনী সম্পাদনা কৰিলোঁ, গদ্যসাহিত্যৰ কামো কৰিলোঁ। ৰাইজৰ বাবে ৰাজনীতিও কৰিলোঁ। বৰ মন আছিল— গল্প, উপন্যাস, প্ৰবন্ধ কবিতাৰে এজন লব্ধ প্ৰতিষ্ঠ সাহিত্যিক হ'বলৈ। পিছে যাযাবৰী জীৱনত নিৰলে একেৰাহে বহি সাহিত্য চৰ্চা কৰিবৰ সময়েই বা ক'ত? কিন্তু নিজৰ কথাটো বাদেই মোক গোটেই জীৱন চেনেহেৰে আৱৰি ৰখা ৰাইজে দেখোন গানৰ ভূপেন হাজৰিকাটোকহে বাকীবোৰৰ পৰা সদায়েই ওপৰত ঠাই দি ৰাখিলে। মই নভবাকৈয়ে সংগীতেই হ'লগৈ মোৰ জীৱন আৰু জীৱিকা। গীতেই মোৰ জীৱনৰ বৃত্তপথ।"[১]

সংগীত সাধনাক জীৱনৰ ব্ৰত হিচাপে গ্ৰহণ কৰা বিশ্ববিশ্ৰুত শিল্পীগৰাকীয়ে হাজাৰ বিজাৰ দৰ্শক শ্ৰোতাৰ হৃদয়ৰ মণিকোঠাত নিগাজি স্থান অধিকাৰ কৰিছিল। তেওঁৰ গীতসমূহ জনপ্ৰিয়তাৰ শীৰ্ষ বিন্দুলৈ গতি কৰাৰ মূল কাৰণবোৰ ফঁহিয়াই চালে দেখা যায়, "তেখেতৰ গীতত সাহিত্যৰস, তেখেতৰ গীতসমূহত অলংকাৰৰ ৰস, সংগীতৰ ধ্বনিত ওপজা মাটিৰ গোন্ধ সুৰৰ ৰসত প্ৰবহমান ৰূপত অন্তৰ্নিহিত হৈ আছে।"

সংগীত সাধনাক জীৱনৰ ব্ৰত হিচাপে গ্ৰহণ কৰা বিশ্ববিশ্ৰুত শিল্পীগৰাকীয়ে হাজাৰ বিজাৰ দৰ্শক শ্ৰোতাৰ হৃদয়ৰ মণিকোঠাত নিগাজি স্থান অধিকাৰ কৰিছিল। তেওঁৰ গীতসমূহ জনপ্ৰিয়তাৰ শীৰ্ষ বিন্দুলৈ গতি কৰাৰ মূল কাৰণবোৰ ফঁহিয়াই চালে দেখা যায়, "তেখেতৰ গীতত সাহিত্যৰস, তেখেতৰ গীতসমূহত অলংকাৰৰ ৰস, সংগীতৰ ধ্বনিত ওপজা মাটিৰ গোন্ধ সুৰৰ ৰসত প্ৰবহমান ৰূপত অন্তৰ্নিহিত হৈ আছে।"[২] তদুপৰি "তেখেতৰ কণ্ঠ মাধুৰ্য্য আৰু সুৰ বিন্যাস, গীতত সন্নিৱিষ্ট কৰা শব্দৰ প্ৰয়োগ, সেই শব্দসমূহ অৰ্থপূৰ্ণভাৱে প্ৰকাশ কৰা উচ্চাৰণৰ প্ৰয়োগ, শ্ৰুতিমধুৰ হোৱাকৈ সংযোজন কৰা সুৰৰ প্ৰয়োগ আৰু শ্ৰোতা-দৰ্শকমণ্ডলীৰ আগত গায়কৰূপে অৱতীৰ্ণ হৈ পৰিৱেশন কৰা কলাসুলভ দেহ-ভঙ্গিমাৰ আত্মপ্ৰকাশ ইমান মনোগ্ৰাহী হৈ উঠে যে ই শ্ৰোতা-জনতাৰ মানসপটত জনপ্ৰিয়তা আৰু স্থায়িত্বৰ উত্তৰণ ঘটাত প্ৰভূত পৰিমাণে অৰিহণা যোগায়।"[৩]

তেওঁৰ গীতৰ বিষয়বস্তুৱেও গীতসমূহক এক অনন্য মাত্ৰা প্ৰদান কৰে। সমাজৰ সৰ্বস্তৰৰ মানুহৰ জীৱন গাথাই প্ৰাণ সঞ্জীৱিত কৰি তোলে তেওঁৰ গীতসমূহক। তেওঁৰ গীতে তেওঁক কেতিয়াবা বিপ্লৱী, কেতিয়াবা দুৰ্দান্ত প্ৰেমিক; কেতিয়াবা মানৱদৰদী, কেতিয়াবা প্ৰকৃতিপ্ৰেমী, কেতিয়াবা সমাজ গঢ়োতা, আকৌ কেতিয়াবা কৃষক ইত্যাদি ৰূপত সজাই তুলিছিল। এজন সমাজ সচেতন অসমীয়া হিচাহে তেওঁৰ বহু গীতত অসমৰ গ্ৰাম্য জীৱনৰ চিত্ৰই প্ৰাণ পাই উঠিছে।

গৱেষণাৰ পৰিসৰ ঃ বিশ্বশিল্পী ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতৰ সংকলনত সন্নিৱিষ্ট গীতসমূহক গৱেষণাৰ পৰিসৰত অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে। লগতে তেখেতৰ গীতৰ বিষয়ে বিভিন্ন সমালোচকৰ প্ৰবন্ধপাতিকো সামৰি লোৱা হৈছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু পদ্ধতি ঃ ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতসমূহত অসমীয়া গ্ৰাম্য জীৱনৰ বিভিন্ন চিত্ৰ কেনেদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে তাক বিচাৰ কৰাই এই গৱেষণাপত্ৰৰ উদ্দেশ্য। গৱেষণা পত্ৰখনত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ লগতে প্ৰয়োজন সাপেক্ষে বৰ্ণনামূলক অধ্যয়ন পদ্ধতিও গ্ৰহণ কৰা হ'ব।

মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ 'অসম আমাৰ ৰূপহী, গুণৰো নাই শেষ, ভাৰতৰে পূৰ্ব দিশৰ সূৰ্য উটা দেশ' বুলি মাতৃভূমিৰ প্ৰশংসাত পঞ্চমুখ হোৱা অসমী আইৰ সুযোগ্য সন্তান সংগীতসূৰ্য ড° ভূপেন হাজৰিকা আছিল এজন আজন্ম অসমীয়া। তেওঁৰ হাড়ে হিমজুৰে, শোণিতেৰে প্ৰৱাহিত হৈছিল স্বদেশ প্ৰীতিৰ ফল্গোধাৰা। এজন সমাজ সচেতন অসমীয়া হিচাপে তেওঁৰ গীতত অসমৰ সমাজ জীৱনৰ প্ৰতিচ্ছবি সততে প্ৰতিভাত হৈছিল। সমগ্ৰ বিশ্বকে সংগীতৰ মায়াজালেৰে মুহিত কৰা শিল্পীগৰাকীৰ হৃদয়ত অসম আৰু অসমীয়াৰ প্ৰতি প্ৰেম আছিল চিৰ প্ৰৱাহমান; সেয়েহে বিভিন্ন গীতৰ মাজত অসমৰ চিৰ চিনাকি ছবিখনে প্ৰায়েই ভুমুকি মাৰিছিল।

কৃষিপ্ৰধান ৰাজ্য অসমৰ গ্ৰামীন যুৱকৰ বাবে নাঙল যুঁৱলিৰ গুৰুত্ব অধিক। সুন্দৰ সুঠাম গাঁৱলীয়া ডেকাই পথাৰত সোণগুটি বুটলাৰ সপোন দেখে। আকাল আঁতৰাই ভড়াল ভৰাই গাঁৱৰ মান ৰাখিবলৈ বিচৰা ডেকা ল'ৰাৰ মনৰ ভাৱ ভূপেন হাজৰিকাই তেওঁৰ গীতৰ মাজেৰে অতি সুন্দৰকৈ প্ৰকাশ কৰিছে—

"অ' আমি তেজাল গাঁৱলীয়া
গাঁৱৰে ৰাখিম মান।
নাঙল যুঁৱলিৰে পৃথিৱী সজাও
ৰ'দত তিৰেবিৰায় জান।"

চৰকাৰী চাকৰিলৈ আশা নকৰি নিজৰ তেজ, বল, শক্তিৰে খেতি কৰি মান সন্মানেৰে পৃথিৱীত উজলি থাকিবলৈ প্ৰয়াস কৰা অসমীয়া ডেকাৰ মনঃতাত্ত্বিক বিশ্লেষণ তেওঁ বাৰুকৈয়ে দাঙি ধৰিছে।

অকল ডেকাই নহয় অসমীয়া গাভৰুসকলো সকলো কামতে পাকৈত। পকা ধানেৰে ভৰি থকা পথাৰখনত দাৱনী গাভৰুৰ হাতৰ পৰশ নপৰালৈকে শস্য চপোৱা নহয়।

"অ' আমি গাভৰু ধুনীয়া
ছেগ চাই কাটিমে ধান।"

অসমীয়া গাভৰুৱে অকল পথাৰতেই কাম নকৰে; তেওঁলোক একোগৰাকী পাকৈত শিপিনীও। অসমীয়া শিপিনীৰ ইতিহাস অতি প্ৰাচীন। জাতিৰ পিতা মহাত্মা গান্ধীয়েও "অসমীয়া শিপিনীয়ে তাঁতৰ শালত স্বৰগ ৰচে" বুলি অসমীয়া শিপিনীৰ প্ৰশংসা কৰি গৈছে। ভূপেন হজৰিকাই গীতৰ মাজত কৈছে—

অ' বান্ধৈ তাঁতৰ শালৰ শিপিনী
অ' বান্ধৈ ৰাধা নে অ' ৰুক্মিণী

লগতে অসমীয়াৰ অতি আদৰৰ মুগা শিল্পৰ কথাও গীতত উল্লেখ কৰিছে এনেদৰে—

মুগা পলু উম দি সি
নিশাটো কটায়
পুৱাই উঠি দিখৌখন
সাঁতুৰি পাৰ হয়

কৰ্মব্যস্ত অসমীয়া ডেকাৰ যৌৱনদীপ্ত মনত কেতিয়াবা কোনোবা গাভৰুলৈ প্ৰেম জাগ্ৰত হয়; তেতিয়া গাভৰুক ডেকাই মনৰ ভাব ব্যক্ত কৰে এনেদৰে—

বা বাগিচাৰ চা চাকৰি
নে নেলাগা লা লাহৰী
নে নেলাগে পলকৰ ধন
অ তইয়ে ধানে দাবি
ম মইয়ে হালে বাম

সৰল মনৰ সৰল প্ৰকাশ অতি সুন্দৰকৈ তেওঁ ব্যক্ত কৰিছে। ডেকাৰ কথাত গাভৰুও ক্ষান্ত থকা নাই। বিবাহৰ অলিক কল্পনাই গাভৰু মন পুলিকিত আৰু স্পন্দিত কৰি তুলিছে—

বেইৰে তলতে হে ঐ ৰাম
নোৱাব সিহঁতে হে ঐ ৰাম
ভাবিলে গা সিৰেসিৰায়
হোমৰ ওৰণি হে ঐ ৰাম
ভাবিলে মন ধপেধপায়

এনে গীতৰ মাজত নাৰীৰ মনঃস্তাত্বিক দিশটোৰো প্ৰকাশ ঘটাৰ লগতে অসমীয়া বিবাহৰ চিত্ৰও গীতটিত প্ৰকাশ পাইছে।

গ্ৰাম্য কৃষকৰ বাবে কৃষিৰ মাটি ডৰাই আপুৰুগীয়া সম্পদ। মাটিৰ অবিহনে বছৰ জুৰি নিৰীহ কৃষকসকল দুৰ্ভিক্ষৰ বলি হ'ব লগা হয়। সেয়ে ধৰিত্ৰীক মাতৃ জ্ঞান কৰা সৰলচিতীয়া কৃষকে কাতৰ কৰিছে এনেদৰে—

অ' মোৰ ধৰিত্ৰী আই
চৰণতে দিয়া ঠাই
খেতিয়কৰ নিস্তাৰ নাই
মাটি বিনে অসহায়
দয়া কৰা দয়াশীল আই।

গ্ৰাম্য সমাজৰ খাদ্যাভাসৰ ছবিও ভূপেন হাজৰিকাৰ বহু গীতত প্ৰকাশ পাইছে। নদীমাতৃক অসমত খাদ্যৰ তালিকাত মাছৰ কথা প্ৰথমতেই আহে। ৰৌ, কুড়ি, চিতল আদি মাছৰ লগত বিভিন্ন শাকেৰে জুতি লগাই এসাজ খাব পাৰিলে অসমীয়াৰ সৰল মন তৃপ্ত হয়—

ৰৌ কুড়ি, চেনিপুঠি
    চিতলৰে কলঠি
লগতে শাক লফা লাই
কি ক'ত বিচাৰি লৈ
    কোনে হাবাথুৰি খায় ঐ ৰাম
    কোনে হাবাথুৰি খায়।

আকৌ কৈছে এনেদৰে—

মাছ মাৰো দিচাঙত
পানী খাও কলঙত
হে মাছ মাৰো দিচাঙত
পানী খাও কলঙত
টুলুঙা নাৱতে উঠি

তদুপৰি, মৎস্যজীৱি মানুহৰ জীৱনৰ দুখ-দৈন্যতাৰ কথাও তেওঁ মৰ্মে মৰ্মে উপলব্ধি কৰিছিল। অনিশ্চয়তাৰ মাজত ধুমুহা বতাহ নেওচি মাছ মাৰিবলৈ যোৱা নিৰীহ মাছমৰীয়াৰ কাৰুণ্যতাৰ ছবি তেওঁৰ গীতত এনেদৰে প্ৰকাশ পাইছে।

পৰহি পুৱাতে
টুলুঙা নাৱতে
ৰংমন মাছলৈ গ'ল
মাছকে মাৰিবলে'
নেলাগে যাবলে
ধুমুহা আহিবৰ হ'ল

অসমৰ মানুহে ধান খেতি কৰাৰ আৰু মাছ মৰাৰ লগত ঘৰতে বিভিন্ন শাক পাচলিৰো খেতি কৰি নিজৰ প্ৰয়োজনীয় অভাৱখিনি পূৰণ কৰি লয়। ড° হাজৰিকাৰ গীতত এই বিষয়ে এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে—

এইয়া আমাৰ মাটি
পাচলিৰো দাম বাঢ়িছে
হাতত লোৱা খন্তি
নকটাবা ক্ষণটি
লাই পালেং ধনিয়াৰে
বাৰী কৰা ভৰ্তি

এনে গীতত অসমীয়া মানুহৰ স্বনিৰ্ভৰশীলতাৰ চিত্ৰও প্ৰকাশ পাইছে। অসমীয়া সংস্কৃতিত তামোল-পাণে এক বিশেষ স্থান লাভ কৰি আহিছে। বিভিন্ন সামাজিক অনুষ্ঠানত তামোল পাণ অপৰিহাৰ্য্য। তদুপৰি গ্ৰাম্য সমাজত আপোনজনক তামোল এখন আগবঢ়াই দিও মৰম প্ৰদৰ্শন কৰা হয়। সেয়ে ড° হাজৰিকাই গীতত লিখিছে এনেদৰে—

তামোল সজোৱা চেনেহ মিহলাই
আজি কিনো খাওঁ বুজা দেখো নাই
তুমি খাবা এখন আমি খাম এখন
সেই মিঠা সোৱাদতে
গুণাফুলৰ ৰিহাখনি উৰি গ'লগে

ড° ভূপেন হাজৰিকা আছিল এজন সমাজ গৱেষক। অসমীয়া সমাজৰ সুখ-দুখ, বিষাদ-আনন্দ, সুবিধা-অসুবিধা, পোৱা-নোপোৱা সকলো দিশ তেওঁৰ নখদৰ্পনত আছিল। অসমীয়া গ্ৰাম্য সমাজত নদ-নদীয়ে কেনেদৰে আহুকালৰ সৃষ্টি কৰে তাৰ প্ৰতিচ্ছবিও বহুখিনি গীতত তেওঁ দাঙি ধৰিছে। অসমৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ সমস্যা হৈছে বাণপানীৰ সমস্যা। যিসমূহ নদীয়ে খৰালি কালত ক্ষান্ত হৈ থাকে বাৰিষা কালত সেইসমূহ নদীয়েই ৰূদ্ৰ ৰূপ ধাৰণ কৰি সহজ-সৰল অসমীয়া মানুহৰ জীৱন দুৰ্বিসহ কৰি তোলে। বানপানীৰ তাণ্ডৱ ৰূপৰ প্ৰকাশ ড° হাজৰিকাৰ বহু গীতত নিৰ্মোহভাৱে ফুটি উঠিছে। যেনে—

শুকান ধৰিত্ৰীৰ অশ্ৰুভৰা
নহয় ই আকৃতি
এই বানপানী
এই পানী ত্ৰাসৰ
এই পানী বেজাৰৰ
এই পানী মৃত্যুৰ কু-সংবাদ।

বানপানীয়ে সৃষ্টি কৰা আতংকৰ ছবিখন তেওঁৰ গীতত মূৰ্ত হৈ উঠিছে। ই কেতিয়াবা মৃত্যুৰ বিভীষিকাৰো সৃষ্টি কৰিছে।

এই পানীয়ে
মানুহৰ সকলো
বুদ্ধি বৃত্তিক
উপলুঙা কৰি কৰি
লঠিয়াই থৈ যায়
সহস্ৰ গাঁৰৰে ঘাট।
এই পানী ভয়াবহ
বিৰক্তি মৃত্যু
মহা আৰ্তনাদ

চাৰিওফালেৰ পৰা ওফন্দি অহা বানে সাধাৰণ জীৱন যাপনত তীব্ৰ আঘাত সৃষ্টি কৰে। যাৰ ফলত এক জয়াল পৰিৰেশে আগুৰি ধৰে।

ই পানী নহয় আনন্দৰ
এই ভয়াবহ পানী আতঙ্কৰ
উত্তৰে পানী দক্ষিণে পানী
পূৱে পানী পশ্চিমে পানী
ভয়াল জয়াল বানপানী

ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতসমূহৰ মাজত পৰ্বতীয়া নিজৰাৰ দৰে অসমীয়া গ্ৰাম্য জীৱনে য'তেই সুৰুঙা পাইছিল ত'তেই ভুমুকি মাৰিছিল। এখন সমাজৰ প্ৰকৃত প্ৰতিচ্ছবি লুকাই থাকে গ্ৰাম্য জীৱনত। গাঁৱৰ পৰাই চহৰমুখী যাত্ৰাৰ আৰম্ভণি ঘটে। সেয়ে এটা জাতিক বুজিবলৈ হ'লে বা এখন সভ্য সমাজক জানিবলৈ হ'লে সেই জাতিৰ বা সমাজৰ গ্ৰাম্য জীৱন ধাৰণ প্ৰণালী, আচাৰ-অনুষ্ঠান, সুখ-দুখ ইত্যাদিৰ বিষয়ে জ্ঞাত হোৱা অতি প্ৰয়োজন। নিজৰ মাতৃভূমিক 'জীৱন দি' পুজিবলৈ বিচৰা বিশ্বশিল্পীগৰাকীয়ে অসমীয়া গ্ৰাম্য জীৱনক বাৰুকৈয়ে বুজি পাইছিল আৰু উপলব্ধি কৰিছিল; সেয়ে তেওঁৰ কথা আৰু সুৰৰ মাজত প্ৰাণ পাই উঠিছিল অসমৰ গ্ৰাম্য জীৱনৰ এখন নিখুট প্ৰতিচ্ছবি।

উপসংহাৰ ঃ অসমৰ সংগীত জগতৰ মুকুটবিহীন সম্ৰাট তথা বিশ্ববৰেণ্য শিল্পী ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতসমূহৰ সঠিক বিচাৰ বিশ্লেষণ কৰাটো এটা দুৰূহ কাম। বুদ্ধিদীপ্ততা আৰু তীক্ষ্ণ মেধাসম্পন্ন শিল্পীজনৰ প্ৰায়খিনি গীতেই গভীৰ অৰ্থবহ। তেওঁৰ গীতৰ শক্তিশালী ভাষা, সুৰৰ লালিত্য, ভাব-বস্তুৰ গভীৰতা ছন্দৰ ঝংকাৰ আদি গুণসমূহে শ্ৰোতাৰ মনগহনত জোকাৰণি তোলে; যাৰ ফলত তেওঁৰ গীতে মন্ত্ৰমুগ্ধ কৰে শ্ৰোতামণ্ডলিক।

তেওঁৰ গীতসমূহ অকল মনোৰঞ্জনধৰ্মীয়েই নহয়, প্ৰতিটো গীততেই আছে এক সুকীয়া ঐতিহ্য। তেওঁৰ বহুসংখ্যক গীতে আমাক কেৱল আহ্লাদিতই নকৰে আত্মজিজ্ঞাসু হ'বলৈও বাধ্য কৰায়। তেওঁৰ গীতসমূহ বিদ্বত সমাজত আলোচনা আৰু গৱেষণা হৈছে যদিও এতিয়াও বহুখিনি দিশ চৰ্চা কৰাৰ থল আছে। ❑

অন্তটীকা ঃ

১। হাজৰিকা, ভূপেন ঃ 'মোৰ গীত আৰু গীতসমগ্ৰ'ৰ নতুন সংস্কৰণ সম্পৰ্কত যৎকিঞ্চিত... নিজৰাপাৰা, গুৱাহাটী, ২৪.০৪.০৮, ২০০৮

২। হাজৰিকা, সূৰ্য ঃ 'ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত সমগ্ৰ', সম্পাদকৰ একাষাৰ, গীতাৱলী, ২৭.১০.২০০৮

৩। হাজৰিকা, সূৰ্য ঃ 'ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত সমগ্ৰ', সম্পাদকৰ একাষাৰ, গীতাৱলী, ২৭.১০.২০০৮

প্ৰসংগপুথি ঃ

হাজৰিকা, সূৰ্য (সম্পা.) ঃ ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত সমগ্ৰ 'গীতাৱলী', (সংশোধিত আৰু পৰিৱৰ্দ্ধিত সংস্কৰণ) ২০০৮, লাৱণ্য প্ৰকাশন, গুৱাহাটী- ৫

হাজৰিকা, ভূপেন ঃ মই এটি যাযাবৰ, অনুলিখিত আত্মজীৱনী (পৰিৱৰ্দ্ধিত সংস্কৰণ), লাৱণ্য প্ৰিণ্টিং প্ৰেছ, ২০১৩

প্ৰবন্ধ

বিহুগীতত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক সমল

ড° পল্লৱিকা শৰ্মা

সহকাৰী অধ্যাপিকা
অসমীয়া বিভাগ
দৰং মহাবিদ্যালয়, তেজপুৰ (অসম)
ম'বাইল ঃ ৯৮৬৪৬-০৬২৮৫

প্ৰস্তাৱনা ঃ

মানৱ জীৱনৰ ক্ৰমবিকাশৰ লগত অঙ্গাগীভাৱে জড়িত হৈ আছে কৰ্ষণকেন্দ্ৰিক বিশ্বাস। আদিম কালত মানুহে জৈৱিক ক্ষুধা নিবাৰণৰ অৰ্থে নানাধৰণৰ সংগ্ৰামত লিপ্ত হোৱাৰ কথা ইতিহাসে আমাক জানিবলৈ দিয়ে। গছৰ বল্কল পৰিধান, বনৰীয়া জীৱ-জন্তুৰ চিকাৰ, কেঁচা মঙহ ভক্ষণ, পৰ্বতৰ গুহা, গছৰ খোৰাং আদিত বাস কৰা আদিম মানৱে কৃষি-কৰ্ম কৰি বীজ উৎপাদন কৰালৈকে যথেষ্ট কষ্ট কৰিবলীয়া হৈছিল। খাদ্যৰ অন্বেষণ আৰু বাসস্থানৰ সন্ধানত স্থান পৰিৱৰ্তন কৰা মানুহে পৰৱৰ্তী সময়ত একত্ৰিত হৈ বসবাস কৰিবলৈ ল'লে, এনেকৈয়ে সমাজ সংগঠন হ'ল। সংগঠিত সমাজত বসবাস কৰা মানুহে কালক্ৰমত মানসিক উত্তৰণৰ বাবে ন ন প্ৰচেষ্টা চলাবলৈ ধৰিলে। "স্ত্ৰী-পুৰুষ নৃত্য-গীত আৰু আনুষ্ঠানিক মিলন পৃথিৱীৰ উৰ্বৰা শক্তি বঢ়াবৰ এক প্ৰাচীন ব্যৱস্থা।" এনেকৈয়ে উৰ্বৰতা বৃদ্ধিৰ উদ্দেশ্যই কৃষিকেন্দ্ৰিক উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ জন্ম। কৃষিকেন্দ্ৰিক উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰূপে পৰিচিত বিহু উদ্যাপন কৰাৰ আঁৰতো এনে এক ভাবনাই জড়িত হৈ আছে। বিহু অসমৰ বসন্তকালীন উৎসৱ। ভাৰতবৰ্ষৰ আন প্ৰান্তৰ লগতে উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলতো বসন্তকালীন উৎসৱ নানা জাতি-জনগোষ্ঠীসমূহে পালন কৰে। মৌচুমী বায়ুৰ গতি পৰিৱৰ্তনৰ সৈতে বিহু পালনৰ এক বিশেষ সম্পৰ্ক আছে। ঋতু পৰিৱৰ্তনে প্ৰকৃতিলৈ আনি দিয়া বিচিত্ৰ প্ৰভাৱৰ সৈতে সহাৱস্থান কৰিবলৈ আৰু উৰ্বৰতাকেন্দ্ৰিক লোকবিশ্বাসৰ বাবে বিহু উৎসৱৰ সূচনা হ'ল।

অসমীয়া লোকসাহিত্যৰ এক অন্যতম অংগ হৈছে বিহুগীত। অসমৰ শ্ৰমজীৱী জনগণৰ ইচ্ছা-আকাংক্ষা, হৰ্ষ-বিষাদ আদি বিচিত্ৰ ভাৱ-অনুভূতিৰ প্ৰকাশ ঘটিছে বিহুগীতৰ মাজেৰে। লোকজীৱনৰ শ্ৰম-হেঁপাহ আৰু জীৱিকাৰ মাজত অন্তৰ্নিহিত হৈ থকা আনন্দ-বেদনাৰ সজীৱ চিত্ৰ বিহুগীতৰ মাজেৰে প্ৰতিফলিত হৈ উঠিছে। বিহুগীতসমূহ ঘাইকৈ ৰঙালী বিহুৰ সময়ত নৃত্য পৰিৱেশনৰ কালত গোৱা হয়। বিহুগীত কেতিয়াৰ পৰা পৰিৱেশন কৰা হৈছিল সেই বিষয়ে সঠিক তথ্য পোৱা নাযায়। বিহুগীতক বিহুনাম, বনগীত, বনঘোষা আদি নামেৰেও জনা যায়। অসমৰ জনজীৱনৰ বিচিত্ৰ চিত্ৰ বিহুগীতৰ মাজেৰে প্ৰকাশি উঠা দেখিবলৈ পোৱা যায়।

১.০০ গৱেষণাপত্ৰ প্ৰস্তুতকৰণৰ উদ্দেশ্য আৰু পদ্ধতি ঃ

কৃষিজীৱী অসমৰ জনগণে আজৰি সময়ত আনন্দৰ মাধ্যম হিচাপে নৃত্য-গীতক অৱলম্বন কৰিছিল। কৃষিকৰ্মৰ কঠোৰ পৰিশ্ৰমৰ অন্তত সোণগুটি ৰে ভঁৰাল ওপচি পৰাৰ কালত কৃষিজীৱী জনগণে সমূহীয়াভাৱে আনন্দ-ৰহইচ কৰি নৃত্য-গীত কৰিছিল। চ'ত-ব'হাগ মাহৰ সন্ধিক্ষণত অসমৰ কৃষিজীৱীলোকে মনৰ অভিব্যক্তি প্ৰকাশৰ অৰ্থে গছৰ তলত ,নৈ পাৰত, পথাৰত নৃত্য কৰিছিল। এনেকৈয়ে অসমৰ লোকসমাজে উৰ্বৰতাকেন্দ্ৰিক লোকবিশ্বাস আৰু পৰম্পৰাৰ আলমত বিহুগীত-বিহুনৃত্য পৰিৱেশন কৰিছিল। *শাওনৰ বৰষুণ, জেঠৰ প্ৰখৰ ৰ'দত আশাভৰা কৰ্মক্লান্ত শ্ৰমৰ অন্তত বছৰটোৰ আনন্দৰ নিজৰা বাগৰি জীৱন যৌৱনৰ উৎসৱ বিহুৰ উৎপত্তি হ'ল।* (দুৱৰা ১৯) অসমৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক-ঐতিহাসিক-ভৌগোলিক- অৰ্থনৈতিক-ৰাজনৈতিক-প্ৰাকৃতিক আদি বিচিত্ৰ দিশৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে বিহুগীতৰ মাজত। যাৰ বাবে বিহুগীত কেৱল প্ৰণয়মূলক গীতেই নহয়; ই অসমৰ জনজীৱনৰ দলিল স্বৰূপ। '**বিহুগীতত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক সমল**'- শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰই বিহুগীতৰ আলোচনাৰ প্ৰসংগত এক নতুন দিশৰ উন্মোচন ঘটাব বুলি আশা প্ৰকাশ কৰিয়েই এই গৱেষণা পত্ৰখন যুগুত কৰি উলিওৱা হৈছে।

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুতকৰণৰ ক্ষেত্ৰত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে।

২.০০ বিষয়ৰ পৰিসৰ ঃ

বিহু অসমৰ বসন্তকালীন উৰ্বৰাকেন্দ্ৰিক উৎসৱ। বিহু উৎসৱ উদ্‌যাপনৰ সময়ত বিহুগীত পৰিৱেশন কৰা হয়। বিহুগীতত প্ৰাপ্ত নানাধৰণৰ ঐতিহাসিক সমলে আমাক ইতিহাসৰ বিচিত্ৰ দিশৰ স'তে পৰিচয় কৰাই দিয়ে। '**বিহুগীতত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক সমল**'- শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰৰ পৰিসৰে বিহুগীতত প্ৰতিফলিত অসমৰ ইতিহাসত সংঘটিত নানন ঘটনাৱলীক সামৰি ল'ব। বিবিধ ঐতিহাসিক সমলৰ আলমত বিহুগীতক জুকিয়াই চোৱাৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ব। অসমৰ লোকসমাজত প্ৰচলিত সমগ্ৰ বিহুগীতকে অধ্যয়নৰ আওতালৈ আনি আলোচনা কৰাতো সহজসাধ্য নহয় বাবে নকুলচন্দ্ৰ ভূঞাৰ 'ব'হাগী'ত সংগৃহীত বিহুগীতৰ আধাৰত গৱেষণা পত্ৰখন যুগুত কৰা হৈছে। ভাৰতবৰ্ষৰ স্বাধীনতা যুদ্ধৰ সৈতে সম্পৰ্কিত বিভিন্ন ঘটনাৱলীৰ বিষয়ে গৱেষণা পত্ৰখনত বিস্তৃতভাৱে আলোকপাত কৰা হৈছে।

২.০০ মূল অংশ ঃ

'**বিহুগীতত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক সমল**'- শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰৰ বিষয়বস্তুক আহোম ৰাজত্বকালত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক

সমল আৰু ব্ৰিটিছৰ যুগত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক সমল- এই দুয়োটা ভাগত বিভক্ত কৰি আলোচনা কৰিব পাৰি। তলত এই বিষয়ে আলোচনা দাঙি ধৰা হ'ল ঃ

২.০১ ঃ আহোমসকলে প্ৰায় ছশ বছৰ কাল অসমত ৰাজত্ব কৰে। "ত্ৰয়োদশ শতিকাৰ তৃতীয় দশকৰ পৰা ঊনবিংশ শতিকাৰ চতুৰ্থ দশকলৈকে নিৰৱিচ্ছিন্নভাৱে আহোমসকলৰ শাসনত থাকি অসমে অনেক জয়-পৰাজয়, ঘাত-প্ৰতিঘাত, সন্ধি-বিগ্ৰহ, মিত্ৰতা-শত্ৰুতা, বিনিময় সংগ্ৰহ আদিৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়া হৈছিল। এই যুগটো অসমীয়া সংস্কৃতিৰ বাবে এটি লেখৰ যুগ।" (গগৈ ২) চুকাফাই ১২১৫ খ্ৰীষ্টাব্দত আঠজন ডা-ডাঙৰীয়া,ন হাজাৰ মুনিহ -তিৰোতা, ল'ৰা-ছোৱালীৰে সৈতে মৌলুঙ এৰি আহিছিল। দুটা হাতী আৰু তিনিশটা ঘোঁৰা লগত লৈ অহা চ্যুকাফাই প্ৰায় তেৰ বছৰ কাল পাটকাই অঞ্চলৰ বিভিন্ন স্থানত প্ৰৱেশ কৰি ১২২৮ খ্ৰীষ্টাব্দত খামজাংগত উপস্থিত হয়হি। টাই বা থাইমূলীয় আহোমসকলে অসমক সোণৰ সফুঁৰা জ্ঞান কৰিছিল আৰু কোনো কাৰণতেই অসমত বিদেশীসকলক খোপনি পুতিবলৈ দিয়া নাছিল। ব্ৰহ্মদেশ বা মানদেশৰ পৰা অসমলৈ প্ৰব্ৰজিত হোৱা আহোমসকলৰ তেওঁলোকৰ পূৰ্বপুৰুষৰ প্ৰতি থকা অপৰিসীম শ্ৰদ্ধাৰ কথা আমি জানিব পাৰোঁ। বিহুগীতত মানদেশ আৰু পূৰ্বপুৰুষৰ কথা উল্লেখ আছে এনেদৰে—

মানদেশত আছিলে মানতৰা এযুৰি
আছিলে নৰিয়াত পৰি।
যেতিয়া শুনিলে বিহুৰে বাতৰি
আহিলে কাছুটি ধৰি।।

উদ্ধৃত গীতফাঁকিত আহোমসকলৰ পূৰ্বপুৰুষ খুনলুং আৰু খুনলাইক অথবা চ্যুকাফা আৰু তেওঁৰ জ্যেষ্ঠ ভাতৃ চুখ্ৰানফাৰ কথা 'মানতৰা এযুৰি' শব্দগুচ্ছৰে বুজাবলৈ বিচৰা হৈছে।

লোকবিশ্বাস অনুসৰি আহোমসকলক দেৱশ্ৰেষ্ঠ ইন্দ্ৰ ৰজাৰ সতি-সন্ততি বুলি গণ্য কৰা হৈছিল। "মানৱ জাতিৰ দুখ-কষ্ট আৰু অন্যায় অবিচাৰৰ প্ৰতিকাৰ কৰিবৰ বাবে আহোমসকলৰ পূৰ্বপুৰুষসকলক সোণৰ জখলাৰে স্বৰ্গৰ পৰা নামি আহিছিল। সেই কাৰণেই আহোম ৰজাসকলক স্বৰ্গদেউ বোলা হৈছিল আৰু সেইবাবেই আহোম ৰজাসকলক দিব্যপুৰুষৰূপ জ্ঞান কৰা হৈছিল আৰু তেওঁলোকৰ ব্যক্তিত্ব সদায় পৱিত্ৰ আৰু অলঙ্ঘনীয় আছিল।" (গগৈ আৰু নেওগ ৩২)

আহোম ৰজা বা স্বৰ্গদেউসকলৰ প্ৰশস্তিৰে বিহুনাম আৰম্ভ কৰা হৈছিল—

স্বৰ্গদেউ ওলালে বাটচ'ৰাৰ মুখলৈ
দোলীয়াই পাতিলে দোলা।
কাণত জিলিকিলে নৰাকৈ জাংফাই
গাতে গোমচেঙৰ চোলা।

আন এটা বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

চৰায়ে চিকুণে তেলীয়া সাৰেং এ
মাছৰে চিকুণে মালী।
স্বৰ্গদেউ চিকুণে কেকোঁৰা দোলাখন
গুৱায় গজপুৰৰ আলি।

বিহুগীত, বিহুনাম, হুচৰিগীতত আহোম ৰাজত্বৰ সোণালী অধ্যায়ৰ বিৱৰণ সন্নিৱিষ্ট হৈ থকা দেখিবলৈ পোৱা যায়। স্বৰ্গদেউ আৰু ডা-ডাঙৰীয়াসকলক সন্মানসূচকভাৱে 'দেউতা ইশ্বৰ' শব্দৰে সম্বোধন কৰাৰ কথা বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

দেউতাৰ পদুলীত গোন্ধাইছে মাধুৰী
কেতেকী মলেমলাই ঐ
গোবিন্দাই ৰাম।

আহোমসকলে শাসনভাৰ চলোৱাৰ সময়ত উজনি অসমৰ বিভিন্ন স্থানত বাহৰ পতা দেখিবলৈ পোৱা গৈছিল। গড়গাঁও আছিল আহোম ৰজাৰ ৰাজধানী। ৰাজধানী নিৰ্মাণ কৰাৰ সময়ত স্বৰ্গদেৱে প্ৰতিৰক্ষাৰ দিশটোত অধিক গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছিল। শত্ৰুৱে যাতে সহজতে আক্ৰমণ কৰিব নোৱাৰে আৰু শত্ৰুৰ আক্ৰমণৰ পূৰ্বানুমান কৰি প্ৰতিহত কৰিব পৰাৰ ব্যৱস্থা কৰিব পৰাকৈ ৰাজধানী নিৰ্মাণ কৰিছিল। আহোম ৰজাৰ দিনত নিৰ্মিত বিভিন্ন স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ নিদৰ্শনে এই কথা প্ৰতীয়মান হোৱাত সহায় কৰে। তলাতলঘৰ,কাৰেংঘৰ, ৰংঘৰ, শিলসাকোঁ আদিয়ে আহোম যুগৰ স্থপতিবিদ্যাৰ নিদৰ্শন দাঙি ধৰিছে। বিহুগীতত এই

বিষয়ে উল্লেখ আছে এনেদৰে—

ঢাপে ঢাপে কৰি নগৰখন সজালে
কিনো স্বৰ্গদেউৰ কাম
বৰ গছ কাটি খাল দোঙ খনালেঁ
ৰাখিলে গড়গাঁও নাম।

আন এটা বিহুগীতত এই বিষয়ে উল্লেখ আছে এনেদৰে—

ৰজাৰে নগৰে দেখি ভালে লাগে
কেকোঁৰা কেকুঁৰি গড়।
হেজাৰী বৰুৱাৰ হাতে আগম নিগম
কোনে পাব তাৰ থৰ।

অসমৰ ইতিহাসৰ এক উল্লেখযোগ্য ঘটনা হ'ল— মোৱামৰীয়া বিদ্ৰোহ। মোৱামৰীয়া সত্ৰৰ ভাতৃত্ব আৰু সমতাৰ আদৰ্শৰে উদ্বুদ্ধ মোৱামৰীয়াসকলে আহোম শাসন ব্যৱস্থাত থকা শ্ৰেণীবৈষম্য আঁতৰাবলৈ কৰা চেষ্টাৰ পৰিণতিত মোৱামৰীয়া বিদ্ৰোহৰ সূত্ৰপাত হয় আৰু কালক্ৰমত এই বিদ্ৰোহে গণবিদ্ৰোহৰ ৰূপ লয়। ১৭৬৯ খ্ৰীঃ নৱেম্বৰত হোৱা প্ৰথমখন মোৱামৰীয়া যুদ্ধত স্বৰ্গদেউ লক্ষ্মী সংহক বন্দী কৰি মোৱামৰীয়াসকলে শাসন ক্ষমতা নিজ হাতলৈ আনে আৰু কীৰ্তিচন্দ্ৰক পুত্ৰসহ মৃত্যুদণ্ড বিহে। বিহুগীতত এই বিষয়ে বৰ্ণিত হৈছে এনেদৰে—

গড়গাঁও কাৰেঙত হাহাঁকাৰ লাগিছে
বুঢ়াগোহাঁই কলৈবা গ'ল।
লক্ষ্মীসিংহ স্বৰ্গদেউক থলে বন্দী কৰি
খেদোতা নহ'লৈ কেও।

অসমৰ ইতিহাসত আহোমসকলৰ বল-বিক্ৰম আৰু দেশপ্ৰেমৰ কথা আজিও সোণালী আখৰেৰে লিখা আছে। দেশৰ কাৰণে প্ৰাণ আহুতি দিয়া বীৰ-বীৰাংগনাসকলৰ স্মৃতি বিজড়িত বিচিত্ৰ কাহিনী বৰ্ণিত হৈ আছে ইতিহাসৰ পাতে পাতে। জয়মতী কুঁৱৰীৰ প্ৰাণত্যাগৰ কাহিনীও বিহুগীতত অনুৰণিত হৈছে এনেদৰে—

লাফ মাৰি আনি যাম ঢাপৰ তামোল থুকি
চোঁ মাৰি আনি যাম পাণ
জয়মতী কোঁৱৰী বৰগোহাঁই জীয়ৰী
জীৱন দিয়ে গ'লে দান।

আহোম ৰজা চুলিকফাক ল'ৰাৰজা নামেৰে জনা গৈছিল। চুলিকফাই তেওঁৰ বিৰুদ্ধে ষড়যন্ত্ৰ কৰি ৰাজপাট অধিকাৰ কৰিব নোৱাৰাকৈ আহোম ৰাজপৰিয়ালৰ আটাইবোৰ কোঁৱৰকে অঙ্গখুত কৰিবলৈ অথবা মাৰি পেলাবলৈ ঠিৰাং কৰিলে। গদাপাণিক মাৰিবলৈ গোটেই ৰাজ্য চলাথ কৰিছিল যদিও গদাপাণিক বিচাৰি নাপালে। গদাপাণিক পলুৱাই ৰাখিবলৈ গৈ জয়মতীয়ে মৃত্যুবৰণ কৰিবলগীয়া হৈছিল। গদাপাণি পলাই থকাত সহায় কৰা তিনিজনী পোহাৰীৰ কথা বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

"ৰহাৰে ৰহেদৈ টিপামৰ ভাদৈ
শলগুৰিৰ আঘোণী বাই
তিনিওৰ ডিঙিত ধৰি তিনিও কান্দিছে
সমন্ধত একোটি নাই।"

আন এটা গীতত তাৰ বৰ্ণনা আছে এনেদৰে—

আই সোণমতী মহনৰ জীয়াৰী
ভদৰাম বাপেকৰ নাম
এটুপি পানী দি গদাক পলুৱালি
সেয়েহে লওঁ তোৰ নাম।

অসম বুৰঞ্জীত বৰ্ণিত আহোম যুঁজৰ বিচিত্ৰ বিৱৰণ বিহুগীতত উল্লেখ আছে। কছাৰী আৰু আহোমৰ মাজত হোৱা ১৫৩৮ শকৰ ৰণত স্বৰ্গদেউ স্বৰ্গনাৰায়ণে ৰহাৰ কাষৰীয়া ৰাজ্য অধিকৃত কৰি সোন্দৰ মৰাণ বৰগোহাঁইক তাতে থিতাপি দিয়াই যদিও তেওঁৰ সোপাঢিলা স্বভাৱৰ বাবে কছাৰীসকলে তেওঁক ৰণত পৰাস্ত কৰে আৰু মৃত্যুক আঁকোৱালি লয়। বিহুগীতত এই কথা বৰ্ণিত হৈছে এনেদৰে—

স্বৰ্গদেউৰ সাৰথি গন্দীয়া ফুকন এ
মাতে তাও কাকৰ পৰা।

আহোম ৰাজত্বকালত কেইবাজনো আহোম ৰজাই জনহিতকৰ কামেৰে প্ৰজাৰ মংগল সাধিছিল। আহোমৰ দিনতে নিৰ্মিত হৈছিল ধোদৰ আলি, অকা আলি, শিলৰ সাঁকো, বিভিন্ন পুখুৰী ইত্যাদি। বিহুগীতত ইয়াৰ উল্লেখ

আছে এনেদৰে—

ন আলি বন্ধালে ন জন কোঁৱৰে
টেক্সি আলি বন্ধালে কোনে?
ওলাই নামেডাঙৰ সাঁকো তই সৈমান ঐ
সোমাই নামেডাঙৰ সাঁকো।

লাচিত বৰফুকনৰ শৌৰ্য-বীৰ্য আৰু দেশপ্ৰেমৰ চিত্ৰ বিহুগীতৰ মাজতো প্ৰকাশিত হৈ উঠিছে—

লাচিত বৰফুকনে
দেশৰ কাৰণে
নৰীয়া পাটীৰে
মোগলক কাটিলে
কাললৈ খিয়তি থ'লে।

আহোম যুগৰ ৰজাসকলৰ সাহিত্য-সংস্কৃতি-সংগীতৰ প্ৰতি থকা ৰাপৰ বিষয়ে বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

ৰংপুৰৰ শুৱনি ৰংঘৰ বাকৰি
আকাশৰ শুৱনি তৰা
স্বৰ্গদেউ ঈশ্বৰে বিহুখন পাতিছে
ৰঙেৰে উপচে ধৰা।

২.০২ঃ বিহুগীত-বনগীত বা হুঁচৰি গীতত স্বাধীনতাৰ হকে প্ৰাণ আহুতি দিয়া বীৰ-বীৰাংগনাসকলৰ চিত্ৰ ফুটি উঠা দেখিবলৈ পাওঁ। আহোম ৰাজত্বৰ বেলি মাৰ যোৱাৰ কালতেই বদন বৰফুকনে অসমলৈ মান আনিছিল। 'মানৰ দিন'ত অসমৰ মানুহে নানান জীয়াতু ভুগিছিল। মানৰ কথনীয়, অবৰ্ণনীয় অত্যাচাৰৰ পৰা হাত সাৰিবলৈ অসমৰ জনগণই যৎপৰোনাস্তি চেষ্টা চলাইছিল। মানৰ দিনৰ বৰ্ণনা বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

দুপৰৰ বেলিটি ডাৱৰে ঢাকিলে
দিনতে গধুলি হ'ল।
বদন বৰফুকনে মান সেনা আনিলে
দেশ ৰসাতলে গ'ল।

১৮২৬ চনৰ ২৪ ফেব্ৰুৱাৰীত স্বাক্ষৰিত ইয়াণ্ডাবু চুক্তি অনুসৰি অসমৰ শাসনভাৰ ইংৰাজৰ হাতলৈ যায়। ইংৰাজৰ ছত্ৰছায়ালৈ আহি অসমৰ মানুহে প্ৰশান্তি অনুভৱ কৰে। অসমৰ শাসনভাৰ পুৰন্দৰ সিংহৰ হাতৰ পৰা ব্ৰডি চাহাবৰ হাতলৈ যায়। ব্ৰেডী চাহাবক 'বৰতি চাহাব' নামেৰেও জনা গৈছিল। বৰতি চাহাবৰ কথা বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

তহঁতৰ নিচিনা আনো চাৰিজনী
বৰতি চেহাবৰ দিনত।

ইংৰাজৰ ছত্ৰছায়াত থাকি অসমৰ মানুহে পোনতে প্ৰশান্তি অনুভৱ কৰিছিল যদিও ইংৰাজে অসম দখল কৰাৰ দুবছৰ পাছত অসমত তিনিটাকৈ ব্ৰিটিছৰ বিৰুদ্ধে বিদ্ৰোহ সংঘটিত হয়। গোমধৰ কোঁৱৰে পুনৰ ৰাজকাৰ্য চলাবলৈ মানস কৰে আৰু ব্ৰিটিছে তাৰ বিৰুদ্ধাচৰণ কৰাৰ বাবেই তেওঁ বিদ্ৰোহী হৈ উঠিছিল। গোমধৰ কোঁৱৰে কেপ্টেইন নিউতিলক চাহাবক এই বিষয়ে অৱগত কৰিছিল। কেপ্টেইন নিউতিলকক 'নবীন' আৰু কেপ্টেইন হলৰয়েডক অসমৰ মানুহ হাওলাট চাহাব বুলি মাতিছিল, যি কথা বিহুগীতত উল্লেখ আছে। গোমধৰ কোঁৱৰৰ পিছত গদাধৰ কোঁৱৰ, ধনজয়, পিয়লি ফুকন আৰু জীউৰাম দুলীয়া বৰুৱাই বিদ্ৰোহ ঘোষণা কৰে। ১৮৩০ চনৰ আগষ্ট মাহত ডেভিড স্কটৰ আদালতৰ হুকুম মতে শিৱসাগৰ পুখুৰীৰ উত্তৰ কোণত পিয়লি ফুকন আৰু জীউৰাম দুলীয়া বৰুৱাক ফাঁচি দিয়া হৈছিল। ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধাচৰণ কৰা এই বিদ্ৰোহলানিৰ বৰ্ণনা বিহুগীতত দেখিবলৈ পোৱা যায়।

ব্ৰিটিছ ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানীয়ে সমগ্ৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলকে নিজৰ অধীনলৈ নিছিল। ঔপনিৱেশিকতাবাদ প্ৰতিষ্ঠাৰ আকাংক্ষা, সামৰিক শক্তি, অৰ্থনৈতিক অৱস্থাৰ উন্নীতকৰণ, দেশীয় লোকৰ অন্তৰ্কন্দল আদিৰ বাবে অসমত ব্ৰিটিছে কম দিনতে নিজৰ আধিপত্য স্থাপন কৰিব পাৰিছিল। ব্ৰিটিছৰ আগমন আৰু আধিপত্যৰ কথা বিহুগীতত বৰ্ণিত হৈছে এনেদৰে—

দিখৌত গুমে গুমায় কোম্পানী জাহাজ ঐ
খাজঞ্চীয়ে আছিলে চাই
তোমাক নিব উলিয়াই মই কান্দিম উকিয়াই
তোমাক নিয়াৰ ফাললৈ চাই।

আন এটা বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

উজায়ে আহিলে কোম্পানীৰ জাহাজ ঐ
পৃথিৱী তলেমল দেখো।
চপাই দে চপাই দে কোম্পানী জাহাজ ঐ
মনোমতীৰ বাতৰি সোধো।

বিহুগীতত চহা কবিয়ে সুন্দৰ উপমাৰে ব্ৰিটিছৰ আগমনে অনা পৰিৱৰ্তনৰ বাতৰি দিছে এনেদৰে—

নৈ নো গুমেগুমাই কোম্পানীৰ জাহাজ ঐ
ঢেকিনো গুমেগুমায় ঠোৰা

কঁকালেনো গুমে গুমায় বুকুনো চমে চমায়
কন্যাকাল হ'বৰে পৰো।

কোম্পানীৰ কামত ব্যস্ত ডেকাই প্ৰেমিকাক সময় দিব নোৱাৰি কোম্পানীৰ চাকৰি ত্যাগ কৰিবলৈয়ো ইতঃস্ততবোধ কাৰণ নাই । ৱিহুগীতত সেইকথা উল্লেখ আছে এনেদৰে-

ভাটীলৈ ভটিয়াই যামে ঐ লাহৰী
নেথাকোঁ কোম্পানীৰ দেশত।

১৮৫৭ চনত সমগ্ৰ ভাৰততে সৃষ্টি হোৱা মহাবিদ্ৰোহৰ ভাৱনাই অসমৰ মানুহৰ চিন্তা-চেতনাকো জাগ্ৰত কৰি তুলিলে। চিপাহী বিদ্ৰোহৰ জুই অসমৰ জনজীৱনতো ব্যাপক ৰূপত বিয়পি পৰিল। মণিৰাম দেৱানে (মণিৰাম দত্ত বৰভাণ্ডাৰ বৰুৱা দেৱান) প্ৰথমে ইংৰাজ শাসনৰ পোষকতা কৰিছিল যদিও পৰৱৰ্তী সময়ত ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধাচৰণ কৰিবলৈ লয়। মণিৰাম দেৱানক ইংৰাজে পৰৱৰ্তী সময়ত মৃত্যুদণ্ডৰে দণ্ডিত কৰে। মণিৰাম দেৱানৰ মৃত্যুৰ কৰুণ বাতৰি বিহুগীতত বৰ্ণিত হৈছে এনেদৰে—

আজি কি বাৰে শুকুৰ ঐ মণিৰাম
আজি কি বাৰে শুকুৰ
মণিৰাম দেৱানক ফাঁচী লৈ তোলাতে
উঠিল বৰেঘৰত কুকুৰ।

১৮২৩ চনত ৰবাট ব্ৰুছে অসমত চাহ আৱিষ্কাৰ কৰে। চাহ খেতিৰ বাবে উৰ্বৰা অসমত ব্ৰিটিছে ১৮৩৯ চনত অসম টি কোম্পানী স্থাপন কৰে আৰু নাজিৰাত ইয়াৰ মুখ্য কাৰ্যালয় স্থাপন কৰে। মণিৰাম দেৱান চাহ কোম্পানীৰ দেৱান পদত অধিষ্ঠিত হয় আৰু বাগানৰ ভু মি দুগুণে বৃদ্ধি কৰিবলৈ সমৰ্থ হয়। মণিৰাম দেৱান কোম্পানীৰ মূল বিষয়াসকলৰ দ্বাৰা উচ্চ প্ৰশংসিত হোৱাৰ বিপৰীতে নাজিৰাত থকা বিষয়ববীয়াৰ ব্যৱহাৰত অতীষ্ঠ হৈ বাকবিতণ্ডাত লিপ্ত হয় আৰু কোম্পানীৰ পদ ইস্তাফা দিয়ে। তেওঁ ইংৰাজ চৰকাৰক প্ৰত্যাহ্বান জনাই যোৰহাট সমীপৰ চিনামৰা আৰু মৰিয়নীৰ চেংলুঙত দুখন বাগান প্ৰতিষ্ঠা কৰে। চীন দেশৰ বিশেজ্ঞ আৰু বনুৱাৰ সহযোগত চাহ পাতৰ বজাৰ খুলি চাহ বিক্ৰেতা হিচাপে সমগ্ৰ ভাৰত আৰু বিশ্বত সমাদৰ লাভ কৰে। উল্লেখ্য যে, মণিৰাম দেৱান প্ৰথম অসমীয়া তথা ভাৰতীয় চাহ খেতিয়ক। চাহ বাগিচা আৰু চাহ পাতৰ লগত জড়িত ব্যক্তি আৰু বিভিন্ন সময়ৰ বৰ্ণনা বিহুগীতত উপলব্ধ—

* তিতিকি তিতাফুল যোৰহাটৰ গোলাপ ফুল
মৰিয়নী বাগিচাৰ চিঠি।
* চাহ পাত ছিঙিলোঁ চটাইত মেলি দিলোঁ
তেতেলী পতীয়া হ'ল।
* উজায়ে আহিলে বাগিচাৰ ছেহাবটি
চেৰাপ খাই পেলালে চিচা।
* কেৰণী নহ'লোঁ মহৰী নহ'লোঁ
তোমাক কেনে কৰি পাম?

মণিৰাম দেৱানে জনপ্ৰিয় কৰা চাহখেতি তথা চাহ খেতিয়ক হিচাপে তেওঁৰ জনপ্ৰিয়তাই ইংৰাজসকলক শংকিত কৰি তুলিছিল। ইংৰাজৰ স্বেচ্ছাচাৰিতা, অভিজাত্যসূচক মনোভাৱৰ প্ৰতি বিৰুদ্ধাচৰণ কৰিবলৈ মণিৰাম দেৱানে অসমতো সশস্ত্ৰ সংগ্ৰামৰ প্ৰস্তুতি চলালে। এই সংগ্ৰাম বিফল হ'ল। কেপ্টেইন হলৰয়ডৰ লগুৱা সাগৰ দুৱৰীয়ে মণিৰাম দেৱানক উদ্দেশ্য কৰি কৈছিল ,"অস অস মণিৰাম তই আহোম কুহুম এটা নেপালি, দেচুৱালী ভাইৰ হাততহে চিঠি দিবলৈ পালি।" মণিৰাম দেৱানে ঘনকান্ত সিংহ যুৱৰাজৰ হৈ মিলচ চাহাবলৈ পত্ৰ লিখিছিল। পত্ৰ লেখনৰ এই পৰম্পৰাৰ সুফলৰূপে নিয়মীয়া ডাক-ব্যৱস্থাৰ প্ৰচলন হোৱাৰ কথাও বিহুগীতত বৰ্ণিত হৈছে এনেদৰে-

চৰকাৰী ডাকোৱাই লেৰেলা চেপেটা
কেতেকী পহীয়া ভৰি।
পিয়নে ক'লেহি চেনাইৰে বাতৰি
নেখাই থাকোঁ ভাতে পানী।

১৮৫৭ চনৰ বিদ্ৰোহ অসম তথা ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামীসকলৰ বাবে অনুপ্ৰেৰণা উৎস হৈ পৰিছিল—

সৌ যে মণিৰাম সৌ যে খুদীৰাম
আছে বিমানত ৰ'ই
উদগনি দিছে হি জননীৰ হকে
ফাঁচী কাঠত ওলমিবলৈ।

১৮৬১ চনৰ ফুলগুৰি ধেৱা, ৰঙিয়া, লাছিমা আৰু পথৰুঘাটৰ ৰণ অসমৰ কৃষক বিদ্ৰোহৰ অন্যতম স্বাক্ষৰ। পথৰুঘাটৰ ৰণ(১৮৯৪) আছিল অসমৰ উনবিংশ শতিকাৰ কৃষক বিদ্ৰোহৰ অন্তিম পৰ্যায়। অসমৰ কৃষিভিত্তিক অৰ্থনীতিক ইংৰাজসকলৰ পুঁজিপতি ভাৱনাই বাৰুকৈয়ে জুৰুলাগ্ৰস্ত কৰি তুলিছিল। কৃষকৰ ওপৰত চলোৱা অমানুষিক অত্যাচাৰ, খাজনা বৃদ্ধি, ভূমি অধিগ্ৰহণ আদিয়ে অসমৰ কৃষকক বাৰুকৈয়ে ক্ষতিগ্ৰস্ত কৰি তুলিছিল আৰু বিপ্লৱী মনোভাৱাপন্ন কৰি তুলিছিল। বিহুগীতত বৰ্ণিত

হৈছে এনেদৰে—

উজাই নাচাবি ভটিয়াই নাচাবি,
পথাৰত লাগিছে জুই,
সোণৰ মাটি মোৰ আজি নাইকিয়া
লোকক খোৱাইছা ৰুই।

ইংৰাজ শাসনৰ আৰম্ভণিৰে পৰাই এটাৰ পাছত আন এটা বিপ্লৱ সংঘটিত হৈছিল। অসমৰ পাহাৰীয়া জনজাতিসকলেও ব্ৰিটিছৰ শাসন ওফৰাই পেলোৱাৰ মানসেৰে বিদ্ৰোহাত্মক মনোভাৱ গঢ়ি তুলিছিল। জয়ন্তীয়া, নগা, গাৰো, লুচাই, মণিপুৰী আদি জনজাতিসকলে ব্ৰিটিছক অসমৰ পৰা খেদিবলৈ মন মেলিছিল আৰু চেগ বুজি বগা বঙাল বা ইংৰাজক আক্ৰমণ কৰিছিল। বিহুগীতত এই কথা বৰ্ণিত হৈছে এনেদৰে—

ইতি লিখিবৰে চিঠি সমনীয়া
ইতি লিখিবৰে চিঠি।
হলকন চাহাবক আবৰীয়ে কাটিলে
পুৰালৈ পালেহি চিঠি।

ব্ৰিটিছে অসমত সাম্ৰাজ্যবাদ স্থাপন কৰাৰ মানসেৰে এচাম লোকক কানি বৰবিহৰ গ্ৰাসলৈ ঠেলি দিছিল। বিহুগীতত এই বিষয়ে উল্লেখ আছে এনেদৰে—

শিৱসাগৰ শুকাব আফু কানি ওলাব
আফিঙৰ পাতিব বেহা।
কোম্পানীৰ বাগিচা সদাগৰী কৰিব
ডেকা ল'ৰা কৰিব বুঢ়া।

কৃষিবাদী সমাজ-ব্যৱস্থাত প্ৰভু সকলে উচ্চাসনত অধিষ্ঠিত হৈ বিলাসী জীৱন কটোৱাৰ বিপৰীতে অসমৰ নিৰক্ষৰ, সাধাৰণ জনগণে দুখ-দুৰ্দশাৰ মাজেৰে জীৱন কটাবলগীয়া হৈছিল। বিহুগীতত তাৰ বৰ্ণনা আছে এনেদৰে—

ফিৰিঙি চাহাবে বাগিচা পাতিলে
ডেকা ল'ৰা লগালে কামত।
হিন্দুৱনী ছোৱালী মেমনী কৰিলে
ডাইবৰ চাহাবৰ দিনত।

বাপতিসাহোন অতি আদৰৰ বিহুটিত সাধাৰণ ৰাইজে বিহুৰ সাজ এযোৰ যোগাৰ কৰি ল'ব নোৱাৰাৰ কথাও বিহুগীতত উল্লেখ আছে এনেদৰে—

বিহুৱতী চৰায়ে কৰে বিহু বিহু
আমাৰ বিহুৰ কাপোৰ নাই।

ভাৰতৰ স্বাধীনতা যুঁজৰ অগ্ৰণী যুঁজাৰু মহাত্মা গান্ধী,বাল গংগাধৰ তিলক, নেতাজী আদিৰ দৰে সংগ্ৰামীৰ নামো বিহুগীতত উল্লেখ আছে। বিহুগীত ঘাইকৈ প্ৰণয়মূলক। এই প্ৰণয়মূলক গীতত কেতিয়াবা ব্যংগ বা বিদ্ৰূপৰ সুৰতো ভাৰতৰ স্বাধীনতাৰ বিচিত্ৰ চিত্ৰ প্ৰতিফলিত হৈছে। বিহুগীতত এই বিষয়ে উল্লেখ আছে এনেদৰে—

প্ৰথমে ঈশ্বৰে পৃথিৱী স্ৰজিলে
লগাত স্ৰজিলে জীৱ
সেইজনা ঈশ্বৰে পীৰিতি কৰিলে
আমিনো নকৰিম কিয়।
গংগাধৰ তিলকে পীৰিতি কৰিলে
গান্ধীয়েও কৰিলে প্ৰেম
আমিনো নকৰিম কিয়?"

ব্ৰিটিছ আগ্ৰাসনে কোঙা কৰা শংকিত অসমৰ মানুহৰ মনোজগতৰ খবৰ বিহুগীতত প্ৰকাশি উঠিছে এনেদৰে—

গড়গাঁও কাৰেঙত বাঘে বাঁহ ল'লে
পলায় ত্ৰিদশৰ দেও।
ফিৰিঙি চাহাবে দেশখন লুটিলে
খোদাতা নহ'ল কেওঁ।

ব্ৰিটিছৰ আগমনে অসমৰ ৰাজনৈতিক পট পৰিৱৰ্তন কৰাই নহয় অসমৰ লোক-সাংস্কৃতিক জীৱনতো পৰিৱৰ্তনৰ চাপ পেলাই থৈ গ'ল। চ'ৰাঘৰ, বৰঘৰ, পানীচ'ৰা, তামুলী চ'ৰাৰ সলনি 'বঙলা' শব্দৰ ব্যৱহাৰ হ'বলৈ ল'লে। উদাহৰণস্বৰূপে—

*পানী আনি আনি বঙলা মচিলোঁ
শিৱসাগৰ জিলাৰে মাটি।

*শহুৰৰ বঙলা দেখিবলৈ শুৱলা
দুৱাৰত ইংৰাজী লেখা।

এনেদৰে অসমৰ জনজীৱনক বিপৰ্যস্ত কৰি তোলা ইংৰাজ শাসনৰ বিবিধ দিশৰ কথা বিহুগীতত বৰ্ণিত হৈছে।

৩.০০ সামৰণি ঃ

সময়ৰ অগ্ৰগতিৰ লগে লগে সমাজৰ সংজ্ঞা আৰু ধাৰণাও সলনি হ'বলৈ ধৰিলে। উল্লেখ্য যে, আদিম সমাজ নিৰক্ষৰ, সৰল আৰু নিম্নস্তৰৰ সমাজ আছিল; য'ত প্ৰণালীবদ্ধভাৱে ধৰ্ম আৰু বিজ্ঞান চৰ্চা হোৱা নাছিল। আদিম সমাজ ব্যৱস্থা ধৰ্ম জীৱবাদ (Animism) ওপৰত আশ্ৰিত আছিল আৰু যাদুমূলীয় বিশ্বাসে যথেষ্ট প্ৰাধান্য বিস্তাৰ কৰিছিল। পৃথিৱীক নাৰীৰূপে গণ্য কৰা আদিম সমাজ জীৱীসকলে পৃথিৱীত উৰ্বৰতা শক্তি বৃদ্ধি কৰি পৃথিৱীক

শস্যসম্ভৰা কৰি তুলিবলৈ প্ৰকৃতিৰ বুকুত কেতবোৰ যাদুমূলীয় বিশ্বাসৰ সৃষ্টি কৰিছিল। মেঘ আৰু বৰষুণৰ মিলনেৰে পৃথিৱীক শস্যসম্ভৰা কৰি তুলিবলৈ পুৰুষ আৰু নাৰীয়ে একত্ৰিত হৈ মুকলি পথাৰত মুক্তভাৱে নৃত্য কৰিবলৈ ধৰিলে। "প্ৰকৃততে আমাৰ অসমত বহুলভাৱে প্ৰচলিত বিভিন্ন বসন্ত উৎসৱ তথা কৃষি উৎসৱসমূহৰ আদিমূলো এই উৰ্বৰতা বৃদ্ধিৰ কৃষ্টি। উৰ্বৰতা বৃদ্ধিৰ বাবে যৌনতাৰ প্ৰতীকী উপচাৰ, উদ্দেশ্য প্ৰকৃতিক সন্তুষ্ট কৰা যাতে প্ৰকৃতিয়েও সৰ্বস্ব উজাৰি দিয়ে উপচি পৰা যৌৱনৰ দান। বিহুনৃত্য, বিহুগীত আদিত এই উৰ্বৰতা কৃষ্টিৰ স্বাক্ষৰ বৰ্তমানলৈকে আছে।"(গগৈ ৩৫) বিহুগীত মূলতঃ প্ৰণয়মূলক যদিও ইয়াৰ মাজৰে অসমৰ সামগ্ৰিক জীৱন প্ৰৱাহৰ চিত্ৰ ফুটি উঠা দেখিবলৈ পোৱা যায়। মহেশ্বৰ নেওগে ক'বৰ দৰে— স্বাধীন যুগৰ বুৰঞ্জীৰ সাঁচ বিহুগীত-বনগীতবিলাকত যিমান পাব লাগিছিল, আজি সিমানখিনি হয়তো নাপাওঁ। ইয়াৰ এটা কাৰণ জাতীয় বিস্মৃতি। সেই ৰামো নাই ,সেই অযোধ্যাও নাই। দ্বিতীয়তে, বুৰঞ্জীমূলক ঘটনাৰ দাগ লগা একপ্ৰকাৰ 'লিৰিকেল' লোকগীতৰ মূল্য সময়ৰ লগে লগে সলনি হ'বলৈ বাধ্য। পাহৰি যোৱা বুৰঞ্জীৰ স্মৃতি কেৱল মৌখিক গীতত ধৰি-বান্ধি ৰাখিব নোৱাৰি। সেই বুলিও দুই-এটা কৰুণ ঘটনাই জাতিৰ সোঁৰণীত এনেদৰে বৰৰ আঠাৰ দৰে কৰাল মাৰি ধৰে যে সেই ঘটনা লৈ ৰচিত গীত বিস্মৃতিয়ে সতকাই মচি পেলাব নোৱাৰে।"(নেওগ ৫৭) বিহুগীতত প্ৰাপ্ত ঐতিহাসিক সমলে এনে এক ধাৰণাকেই পৰিস্ফুট কৰি তুলিছে। ❑

প্ৰসংগ টোকা আৰু সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জীঃ

মূখ্য উৎসঃ

ভূএগাঁ, নকুল চন্দ্ৰ। *বহাগী*। গুৱাহাটীঃ লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল,১৯৯২।

গৌণ উৎসঃ

গগৈ, অমৰেন্দ্ৰ। *বিহুৰ তত্ত্ব আৰু ঐতিহ্য*। গুৱাহাটীঃ অসম বুক ট্ৰাষ্ট,২০১৮।
গগৈ, লীলা। *অসমৰ সংস্কৃতি*। ডিব্ৰুগড়ঃ বনলতা,১৯৯৪।
গেইট,এডৱাৰ্ড। *অসম বুৰঞ্জী*। গুৱাহাটীঃ লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল, ২০১৫।
দত্ত, অজিত কুমাৰ। *ঔপনিৱেশিক কালৰ অসম*। গুৱাহাটীঃ অসম বুক ডিপো,২০১২।
দত্ত, শৰৎ কুমাৰ। *অসম বুৰঞ্জী*। গুৱাহাটীঃ বুৰঞ্জীআৰু পুৰাতত্ত্ব বিভাগ , ১৯৯১।
দাস, নাৰায়ণ। পৰমানন্দ ৰাজবংশী (সম্পা.)। *অসমীয়া সংস্কৃতিৰ কণিকা*। গুৱাহাটীঃ চন্দ্ৰপ্ৰকাশ, ২০০৬।
নেওগ, মহেশ্বৰ। । *অসমীয়া গীতি সাহিত্য আৰু অন্যান্য প্ৰৱন্ধাৱলী*। গুৱাহাটীঃ চন্দ্ৰ প্ৰকাশ,২০০৮।
নেওগ, হৰিপ্ৰসাদ। লীলা গগৈ (সম্পা.)। *অসমীয়া সংস্কৃতি*। ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা,২০০৩।
বৰগোহাঞি, যতীন্দ্ৰ কুমাৰ। *অসমৰ উৎসৱ আৰু পূজা*। যোৰহাট ঃ নৱীন পুস্তকালয়,২০০৪।
বৰদলৈ, নিৰ্মলপ্ৰভা। *অসমৰ লোকসংস্কৃতি*। গুৱাহাটী ঃ বীণা লাইব্ৰেৰী,২০০৮।
বৰুৱা, বিৰিঞ্চি কুমাৰ। *অসমৰ লোকসংস্কৃতি*। গুৱাহাটী ঃ বীণা লাইব্ৰেৰী,২০০৫।
ৰাজবংশী, পৰমানন্দ। বৈকুণ্ঠ ৰাজবংশী (সম্পা.) । *অসমীয়া জাতি আৰু সংস্কৃতি*। গুৱাহাটী ঃ প্ৰাগজ্যোতিষ মহাবিদ্যালয়,২০০৩।
শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ। *লোকসংস্কৃতি*। গুৱাহাটীঃ চন্দ্ৰ প্ৰকাশ,১৯৯৭।
শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ। *অসমীয়া লোক-সংস্কৃতিৰ আভাস*। গুৱাহাটী ঃ বাণী প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড,২০০৭।

প্ৰবন্ধ

গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা আৰু পঢ়ুৱৈ সমাজ ঃ সম্ভাৱনা আৰু প্ৰত্যাহ্বান
(অসমৰ মহাবিদ্যালয়সমূহৰ ওপৰত আলোকপাত)

দীপাঙ্কৰ শইকীয়া

গ্ৰন্থাগাৰিক
লক্ষীমপুৰ বালিকা মহাবিদ্যালয়
উত্তৰ লক্ষীমপুৰ, অসম
ই-মেইল ঃ
dipankarsaikia09@gmail.com
ম'বাইল ঃ ৯১০১৯৮৯৫৬০

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

গ্ৰন্থাগাৰসমূহ তথ্য সম্বলিত এক অনুষ্ঠান। পঢ়ুৱৈ সমাজক উৎকৃষ্ট সেৱা আগবঢ়োৱা ইয়াৰ এক বিশিষ্ট ধৰ্ম। গ্ৰন্থাগাৰ হ'ল মানুহৰ জ্ঞানৰ ভঁৰাল, মনৰ ঔষধ, গৱেষকৰ অৰ্চনাৰ স্থলী আৰু সাধাৰণ মানুহৰ জ্ঞান আহৰণৰ মন্দিৰ। অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰে পঢ়ুৱৈ সমাজলৈ নতুন আৰু পুৰণি ব্যৱস্থাৰে আগবঢ়োৱা সেৱা সমূহ এই অধ্যায়টোত সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে। অসমৰ উচ্চশিক্ষা প্ৰতিষ্ঠানৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহ বহুত ঘাত-প্ৰতিঘাতৰ মাজেৰে অতিবাহিত কৰিব লগা হৈছে। গ্ৰন্থাগাৰ সমূহলৈ আহি পৰা বিভিন্ন আঁসোৱাহ সমূহ আৰু ইয়াৰ ফলত পাঠক সমাজত সৃষ্টি হোৱা অসুবিধাখিনি চালি-জাৰি চাবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে। প্ৰতিকাৰৰ কিছু আভাস দাঙি ধৰি গ্ৰন্থাগাৰৰ নতুন আৰু পুৰণি সেৱা ব্যৱস্থাৰ বিশ্লেষণ আৰু ফলাফল বিচাৰ কৰাই হ'ব আমাৰ একমাত্ৰ উদ্দেশ্য। এই পত্ৰখন তুলনাত্মক পদ্ধতি আৰু ক্ষেত্ৰ পৰ্য্যবেক্ষণৰ ভিত্তিত আলোকপাত কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ

গ্ৰন্থাগাৰ, জ্ঞানৰ সম্পদ, গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা, পঢ়ুৱৈ সমাজ, ডিজিটেল গ্ৰন্থাগাৰ।

অৱতৰণিকা ঃ শৈক্ষিক প্ৰতিষ্ঠান সমূহক যদি মানুহৰ শৰীৰ বুলি ধৰা যায়, তেতিয়া গ্ৰন্থাগাৰ সমূহক শৰীৰৰ আত্মা বুলি ক'ব পাৰি। শৈক্ষিক প্ৰতিস্থানৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰী, গৱেষক, শিক্ষক-কৰ্মচাৰী সকল গ্ৰন্থাগাৰৰ ওপৰত বহুতখিনি নিৰ্ভৰ কৰিব লগা হয়। পঢ়ুৱৈ সমাজক তেওঁলোকে আশা কৰা মতে সেৱা-সুবিধা আগবঢ়োৱাটো গ্ৰন্থাগাৰৰ মূল কৰ্তব্য। এটা কথা প্ৰায় লক্ষ্যকৰা হৈছে যে কিছুমান আনুসাংগিক কাৰণৰ বাবে গ্ৰন্থাগাৰৰ জ্ঞানৰ সম্পদ সমূহ আহৰণৰ বাবে পুঁজিৰ অভাৱ হয়। মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থাগাৰৰ মূল পুঁজি আহে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ বৰঙণিৰ পৰা। পুৰণি আৰু নতুনৰ সমাহাৰ ঘটাই বৰ্তমানৰ অধিকাংশ মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে পঢ়ুৱৈ সমাজক সেৱা আগবঢ়াই আছে। কম্পিউটাৰ আৰু অন্যান্য

যোগাযোগ ব্যৱস্থাৰে বৰ্তমান উৎকৃষ্ট তথ্য নিৰ্দিষ্ট পঢ়ুৱৈক নিৰ্দিষ্ট সময়ত পৰিপূৰক ৰূপত উত্তম ব্যৱস্থাৰে সেৱা আগবঢ়াব পৰা হৈছে। ডিজিটেল গ্ৰন্থাগাৰৰ সক্ৰিয়তাৰ সহায়ত ক্ষিপ্ৰতাৰে যথেষ্ট পৰিমাণৰ গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা পঢ়ুৱৈ সকলক দিব পৰা হৈছে। অৰ্থনীতিৰ ফালৰ পৰা ই এক মিতব্যয়ী ফলপ্ৰসু প্ৰদক্ষেপ হিচাপে বিবেচিত হৈছে।

পত্ৰখনিৰ উদ্দেশ্য ঃ

এই আলোচনা পত্ৰখনি নিম্নলিখিত বিষয় সমূহৰ ওপৰত আধাৰিত -

* অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰৰ দৃশ্য পটৰ অৱগত হোৱা।

* গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে জ্ঞানৰ সম্পদ আহৰণ কৰা ব্যৱস্থাৰ বুজ লোৱা।

* গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে পঢ়ুৱৈ সমাজলৈ আগবঢ়োৱা সেৱাৰ বিষয়ে জনাৰ হাবিয়াস।

* গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে মুখামুখি হোৱা সম্ভাৱনা আৰু অসুবিধাবোৰৰ বুজ লোৱা।

* সমস্যা সমাধানৰ কিছু পৰামৰ্শ দিয়া।

পদ্ধতি ঃ

অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহত গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা আৰু পঢ়ুৱৈ সমাজৰ এক আলোকপাত কৰিবলৈ মূলত বিশ্লেষণাত্মক আৰু তুলনামূলক পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। তাৰোপৰি প্ৰয়োজন সাপেক্ষে গ্ৰন্থাগাৰিক আৰু পঢ়ুৱৈ সমাজক কেন্দ্ৰ কৰি এক মৌখিক সাক্ষাৎকাৰ গ্ৰহণ কৰা হৈছে। এক নিৰ্দিষ্ট বিষয়বস্তু সামৰি এক প্ৰশ্নাৱলী প্ৰস্তুত কৰি নিৰ্দিষ্ট পঢ়ুৱৈ, গৱেষক আৰু গ্ৰন্থাগাৰিক সকলক বিতৰণ কৰি তেওঁলোকৰ চিন্তাধাৰা সমূহ এই পত্ৰখনত সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে।

বিশ্লেষণ ঃ

এই পত্ৰখনৰ বিষয়বস্তু গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে আগবঢ়োৱা সেৱা আৰু পঢ়ুৱৈ সমাজৰ সন্তুষ্টিৰ আশা আৰু প্ৰত্যাহবানৰ ওপৰত আধাৰিত। বিভিন্ন পুঁথিগত উৎস, মৌখিক সাক্ষাৎকাৰ, নিৰ্দিষ্ট বিষয় সন্নিবিষ্ট হোৱা প্ৰশ্নাৱলীৰ উত্তৰ সমূহৰ চিন্তাধাৰাক আকোৱালি লৈ দেখা যায় যে অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে পঢ়ুৱৈ সমাজলৈ আগবঢ়োৱা সেৱা তুলনামূলক ভাৱে বেছি এটা ভাল নহয়। বৰ্তমানৰ তথ্য আৰু যোগাযোগ ব্যৱস্থাপনাৰ যুগত দেখা গৈছে বহুতখিনি গ্ৰন্থাগাৰে সেই আগৰ 'ব্ৰাউনি কাৰ্ড' পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰি পঢ়ুৱৈ সমাজক গ্ৰন্থাগাৰৰ জ্ঞানৰ সম্পদ সমূহ বিতৰণ কৰি আছে। মুষ্টিমেয় কেইখনমান মহাবিদ্যালয়ে স্বয়ংক্ৰিয় যন্ত্ৰচালিত পদ্ধতিৰে পুঁথিগত সম্পদসমূহ বিতৰণৰ ব্যৱস্থা কৰিছে। এইখিনিত মুষ্টিমেয় মহাবিদ্যালয়সমূহে মুখামুখি হোৱা কেইটামান কাৰক হৈছে - পুঁজিৰ অভাৱ, পেছাদাৰী মানৰ সম্পদৰ অভাৱ, নিৰ্দিষ্ট পৰিমাণৰ কম্পিউটাৰৰ অভাৱ, গ্ৰন্থাগাৰিক আৰু মহাবিদ্যালয়ৰ কতৃপক্ষৰ ইচ্ছাশক্তিৰ অভাৱ।

মূলত গ্ৰন্থাগৰসমূহে বহুত ধৰণৰ সেৱা পঢ়ুৱৈ সমাজলৈ আগবঢ়াব লাগে। তাৰ ভিতৰত প্ৰধান কেইবিধমান গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা হৈছে - পুঁথিগত সম্পদ আহৰণ আৰু বিতৰণ কৰা, পুঁথিগত সম্পদৰ তালিকাভুক্ত কৰা, পাঠকক গ্ৰন্থাগাৰ সম্পদ সম্বন্ধীয় জাননী প্ৰকাশ কৰা, পুঁথিগত সম্পদৰ সংৰক্ষণৰ ব্যৱস্থা কৰা, নিৰ্দিষ্ট পঢ়ুৱৈৰ বাবে বিশেষ পুঁথিৰ ভঁৰাল সৃষ্টি কৰা, বাতৰিকাকতৰ উল্লেখ যোগ্য বাতৰিৰ পৃষ্ঠা সংৰক্ষণ কৰা, গ্ৰন্থাগাৰলৈ অহা নতুন পুঁথিৰ প্ৰদৰ্শনৰ ব্যৱস্থা কৰা, নতুন পুঁথিগত সম্পদৰ গ্ৰন্থপঞ্জী প্ৰস্তুত কৰা, শিক্ষানুষ্ঠান সমূহৰ সৰস্বত্ব সংৰক্ষিত পুঁথিসমূহ 'D-Space' ছফ্টৱেৰত সংৰক্ষণ কৰা, ইলেক্ট্ৰনিক পুঁথিগত সম্পদ সমূহ প্ৰয়োজন সাপেক্ষে পাঠকে চাব পৰাকৈ উৎকৃষ্ট মানদণ্ডৰ ছফ্টৱেৰ ক্ৰয় কৰা, গ্ৰন্থাগাৰ ব্যৱস্থাপনাৰ উৎকৃষ্ট চৰ্ফটৱেৰৰ ব্যৱস্থা কৰা, সম্পদ সমূহ পৰা পক্ষত ডিজিটাইজ কৰা, ইন্টাৰনেটৰ সুবিধা দিয়া।

এই পত্ৰখনিৰ ক্ষেত্ৰ পৰ্য্যবেক্ষণত দেখা গৈছে গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে ক্ৰয় কৰা গ্ৰন্থাগাৰ ব্যৱস্থাপনাৰ ছফটৱেৰ বোৰ প্ৰায় একে বিধৰ। তেওঁলোকে ইন্‌ফ্লিৰ নেটৰ দ্বাৰা সংৰক্ষিত ছফ্‌টৱেৰৰ ফৰ ইউনিভাৰচিটি লাইব্ৰেৰী (SOUL 1.0/2.0/3.0) ব্যৱহাৰ কৰিছে। সাময়িক পত্ৰিকাৰ অনুসন্ধান ক্ষেত্ৰ N-List প্ৰায় 70% মহাবিদ্যালয়ে ক্ৰয় কৰি পাঠকক ব্যৱহাৰ সুযোগ দিছে যদিও পাঠকসকলৰ সক্ৰিয়তা যথেষ্ট হ্ৰাস পোৱা দেখা যায়। মুষ্টিমেয় কেইটামান গ্ৰান্থাগাৰৰ বাদে বেছিভাগ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহত পঢ়ুৱৈৰ বাবে সংৰক্ষিত অধ্যয়নৰ কক্ষ সমূহত আসনৰ সংখ্যা যথেষ্ট কম। অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰত সাধাৰণতে নথিভূৰ্ক্ত পাঠকৰ সংখ্যাৰ গড় মান এহেজাৰৰ পৰা বাৰশৰ

ভিতৰত। কিন্তু পাঠকৰ অধ্যয়ন কক্ষত আসনৰ গড় মান 90 ওপৰত নহয়।প্ৰায় 70% মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহৰ পুঁথিগত সম্পদ আহৰণৰ গড় মান বাৰ হেজাৰৰ পৰা তেৰ হেজাৰৰ ভিতৰত হ'ব। বাকী 30% মহাবিদ্যালয়ত বিশ হেজাৰৰ ওপৰত গ্ৰন্থ সম্পদ মজুত আছে।

ঠিক তেনেদৰে মুদ্ৰিত সাময়িক পত্ৰিকাৰ আহৰণৰ ক্ষেত্ৰত মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে পাঠকৰ মন জয় কৰিব পৰা নাই। তেওঁলোকে স্থানীয় ভাষাত মুদ্ৰিত 4 - 5 খন সাময়িক পত্ৰিকা ক্ৰয় কৰে আৰু ইংৰাজী বা হিন্দী ভাষাত মুদ্ৰিত পত্ৰিকা 7 - 8 খন গড় মান হিচাপে ক্ৰয় কৰে। নিশ্চয় এই সামান্য পৰিমানৰ মুদ্ৰিত সাময়িক পত্ৰিকাৰে পঢ়ুৱৈ সমাজক জ্ঞানৰ খোৰাক যোগাব পৰা নাই। অৱশ্যে মুষ্টিমেয় কেইখন মান মহাবিদ্যালয়ে ইলেক্ট্ৰনিক মাধ্যমেৰে সাময়িক গৱেষণা পত্ৰিকা পঢ়ুৱৈ সমাজলৈ আগবঢ়াই আহিছে। অধ্যয়নত দেখা গৈছে গ্ৰন্থাগাৰ বোৰৰ নিৰ্দিষ্ট এটা বা দুটা মূল সম্পদ আহৰণৰ ভঁৰালৰ বাহিৰে বাকী বিধে বিধে নিৰ্দিষ্ট বিষয় সম্পদৰ কক্ষ বা ভঁৰাল নাই। গ্ৰন্থাগাৰ সমূহত নিৰ্দিষ্টকৈ প্ৰসংগ-গ্ৰন্থ, বিশ্বকোষ মজুত থকা কক্ষ, সাময়িক পত্ৰিকা মজুত থকা কক্ষ, জেৰক্স কক্ষ, গৱেষণা পত্ৰ মজুত থকা কক্ষ, ইলেক্ট্ৰনিক মাধ্যমৰ সা-সঁজুলি থকা কক্ষ, ইন্টাৰনেট সেৱাৰ কক্ষ, গ্ৰন্থাগৰ ব্যৱস্থাপনাৰ ছফট্ৱেৰ থকা কক্ষ, বাতৰি কাকত মজুত থকা কক্ষ থকাটো প্ৰয়োজনীয়।

বৰ্তমান ডিজিটেল গ্ৰন্থাগাৰে সকলো ধৰণৰ তথ্য পৰিকল্পিত ভাৱে সংগঠিত কৰি উৎকৃষ্ট ৰূপত অতি কম সময়ৰ ভিতৰত যিকোনো স্থানত, যিকোনো সময়ত শেহতীয়া তথ্য পঢ়ুৱৈ সমাজলৈ সেৱা আগবঢ়াই আছে। মুষ্টিমেয় অসমৰ কেইখনমান মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে বৰ্তমান দুটা প্ৰক্ৰিয়াৰে ডিজিটাইজ তথ্যৰ সুবিধা প্ৰদান কৰি আছে। প্ৰথমতে পঢ়ুৱৈ সমাজক ডিজিটেল ছফট্ৱেৰৰ সহায়ত পৃথিৱীৰ যিকোনো স্থানত থাকি যিকোনো সময়ত এই সুবিধা ইন্টানেটৰ জৰিয়তে ল'ব পৰাৰ ব্যৱস্থা আৰু দ্বিতীয়তে গ্ৰন্থাগৰৰ ভিতৰছোৱা বা মহাবিদ্যালয়ৰ চাৰিসীমাৰ ভিতৰত থাকি LAN (Local Area Network) সহায়েৰে তথ্য লাভৰ সুবিধা। এইখিনিতে এটা কথা উনুকিয়াব পাৰি যে ডিজিটেল গ্ৰন্থাগৰত জ্ঞানৰ সম্পদ সমূহ সৃষ্টি কৰিবলৈ মহাবিদ্যালয় সমূহে প্ৰকাশ কৰা বা মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থস্বত্বৰ আঁওতাত থকা গ্ৰন্থ সম্পদখিনি বুক স্কেনাৰৰ সহায়ত স্কেন কৰি ডিজিটাইজ ৰূপত পাব পৰাৰ ব্যৱস্থা কৰা হৈছে। বাকী মহাবিদ্যালয় সমূহে ক্ৰয় কৰি জমা ৰখা গ্ৰন্থ সম্ভাৰ সমূহ বিভিন্ন গ্ৰন্থস্বত্বৰ দ্বাৰা সুৰক্ষিত আইনৰ অধীনত থকা বাবে ডিজিটাইজ কৰিবলৈ অপাৰগ।

মহাবিদ্যালয় সমূহে ওপৰত কৰা পৰ্য্যবেক্ষনৰ ভিত্তিত অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে মুখামুখি হোৱা মুখ্য সমস্যা কেইটামান চকুত পৰা বিধৰ। বেছিভাগ মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহ মূল মহাবিদ্যালয়ৰ প্ৰশাসনিক ঘৰৰ লগত সংলগ্ন কৰা আছে। পৃথককৈ গ্ৰন্থাগাৰ ভৱন নাই। পুঁজিৰ অভাৱত গ্ৰন্থাগাৰ সমূহৰ পুঁথিগত সম্পদ আহৰণ যথেষ্ট কম পৰিমানৰ দেখা যায়। প্ৰায় জ্ঞাক্ষ মহাবিদ্যালয়ৰ অন্য মহাবিদ্যালয়ৰ লগত গ্ৰন্থাগাৰ সম্পদৰ বিনিময় প্ৰথা কৰা দেখা নাযায়। ফলত পঢ়ুৱৈ সমাজৰ এই ক্ষেত্ৰত যথেষ্ট ক্ষতি হয়।পঢ়ুৱৈ সমাজে কেনেকৈ গ্ৰন্থাগাৰ সম্পদৰ দ্বাৰা লাভ বান হ'ব পাৰি তাৰ এক নিয়মীয়া প্ৰশিক্ষণৰ দৰকাৰ। কিন্তু গতানুগতিক প্ৰশিক্ষণ বেছি ভাগ মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থাগাৰিক সকলে পঢ়ুৱৈ সমাজক দিবলৈ ইচ্ছ শক্তিৰ অভাৱ দেখা যায়। এটা কথা মন কৰিবলগীয়া যে গ্ৰন্থাগাৰ সমূহত উপযুক্ত বৃত্তিধাৰী মানৰ সম্পদৰ অভাব। তাৰোপৰি মহাবিদ্যালয়ৰ কতৃপক্ষ আৰু গ্ৰন্থাগাৰ কতৃপক্ষৰ মাজত গ্ৰন্থাগাৰ উন্নতিকৰণৰ ক্ষেত্ৰত সমিল মিলৰ অভাব দেখা যায়।

আহ্বান ঃ

বিভিন্ন ঘাত -প্ৰতিঘাতৰ মাজেৰে অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে পঢ়ুৱৈ সমাজক সেৱা আগবঢ়াই আহিছে। অধ্যয়ন আৰু পণ্ডিতসকলৰ মতামত অনুসৰি অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰৰ উন্নতিকৰণৰ উদ্দেশ্যে আহ্বান জনোৱা কাৰক সমূহ তলত উল্লেখ কৰা হ'ল-

১। গ্ৰন্থাগাৰ বাজেটত পুঁজিৰ পৰিমান বৃদ্ধি কৰা।
২। গ্ৰন্থাগাৰ বিজ্ঞানৰ পেছাদাৰী কৰ্মচাৰীৰ সংখ্যা গ্ৰন্থাগাৰত বঢ়াব লাগে।
৩। গুণগত মানবিশিষ্ট্য গ্ৰন্থাগাৰ ভবনৰ সৃষ্টি কৰিব লাগে।

৪। গ্ৰন্থাগাৰৰ ভিতৰত বিভিন্ন উপ-কক্ষ সৃষ্টি কৰি সমভাৱে সেৱা আগবঢ়াব লাগে।

৫। পঢ়ুৱৈ সমাজক গ্ৰন্থাগাৰত গ্ৰন্থসম্ভাৰ বিচাৰিবলৈ মুক্ত অনুমতি প্ৰদান কৰিব লাগে।

৬। সকলো বিষয়ৰ পুঁথিগত সম্পদৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে। লগতে শেহতীয়া প্ৰসংগ গ্ৰন্থ, বিশ্বকোষৰ পৃথক কক্ষ সৃষ্টি কৰিব লাগে। যাতে গৱেষক সকলৰ অসুবিধা নহয়।

৭। শেহতীয়া সাময়িক প্ৰত্ৰিকাৰ ব্যৱস্থা কৰা।

৮। গ্ৰন্থাগাৰৰ অধ্যয়ন কক্ষত আসনৰ সংখ্যা বঢ়াব লাগে।

৯। পুঁথি সংৰক্ষণ কৰা আচবাবত পুঁথিসমূহ শৃংখলাবদ্ধ ভাৱে সংৰক্ষণ কৰাত গুৰুত্ব দিব লাগে।

১০। পঢ়ুৱৈ সমাজক নিয়মীয়া ভাৱে প্ৰশিক্ষণৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে।

১১। গ্ৰন্থাগাৰ সম্পদ সমূহক ডিজিটাইজ ৰূপলৈ ৰূপান্তৰিত কৰি পাঠকক উৎকৃষ্ট শেহতীয়া তথ্যৰ সুবিধা প্ৰদান কৰিব লাগে।

সামৰণি ঃ

অসমত প্ৰায় পুপ্পুঞ্জ বছৰৰ আগৰ মহাপুৰুষীয়া সংস্কৃতিৰ সত্ৰসমূহত আৰম্ভ হৈছিল সাঁচিপাতৰ পুঁথি সংৰক্ষণ। সত্ৰাধিকাৰ সকলে এই সাঁচিপাতৰ পুঁথি সমূহ ভকত সকলৰ আগত পঢ়ি শুনাইছিল বা পঢ়িবলৈ দিছিল। তাৰ পৰাই গ্ৰন্থাগাৰৰ ধাৰণা আৰম্ভ হৈ বৰ্ত্তমান যুগৰ ডিজিটেল গ্ৰন্থাগাৰ লৈকে বহুত আশা-আকাংক্ষাৰ মাজেৰে গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা বৰ্ত্তি আছে।

দেখা গৈছে অসমৰ মহাবিদ্যালয় সমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে বৰ্তমান উৎকৃষ্ট গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা আগবঢ়োৱাত বিফল হৈছে। তেওঁলোকে নিম্নতম সেৱাখিনি পঢ়ুৱৈ সমাজক কেৱল মাত্ৰ পুথিগত সম্পদ নিৰ্দ্দিষ্ট সময়ৰ বাবে বিতৰণ কৰাতে ব্যস্ত থকা দেখা গৈছে। আধুনিক কালৰ উৎকৃষ্ট গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা সমূহ পঢ়ুৱৈ সমাজক যোগান ধৰিবলৈ তেওঁলোক অপাৰগ নহয় যদিও ইচ্ছাশক্তি কম থকা দেখা গৈছে। মুষ্টিমেয় গ্ৰন্থাগাৰত ইন্টাৰনেটৰ সুবিধা নাই। মহাবিদ্যালয়ৰ প্ৰশাসন আৰু গ্ৰন্থাগাৰিকৰ মাজত যোগাযোগৰ সম্পৰ্ক সুস্পষ্ট নহয়। আমাৰ শিক্ষাগত উত্তৰণত গ্ৰন্থাগাৰৰ বিশেষ ভূমিকাৰ কথা বহুতে স্বীকাৰ কৰিব নিবিচাৰে। উচ্চশিক্ষাৰ সম্প্ৰসাৰণৰ দিশত গ্ৰন্থাগাৰৰ শ্ৰেষ্ঠ ভূমিকাৰ কথা স্বীকাৰ কৰা এইটোৱেই উপযুক্ত সময়। মহাবিদ্যালয়ৰ গ্ৰন্থাগাৰ সমূহে গুণগত মান বিশিষ্ট সেৱা আগবঢ়াই মুক্ত বৌদ্ধিক যোগাযোগ ব্যৱস্থাৰ সৃষ্টি কৰি গ্ৰন্থাগাৰৰ মহত্বৰ কথা বুজাবলৈ চেষ্টা কৰিবৰ সময় আহি পৰিছে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জীঃ

1. Chitra, D.A. & Ally, S.S. (2010).Customer satisfaction on library management software product. Library progress.30 (2):281-287.
2. Burman, Joginder Singh (2003).Changing role of the libraries in contemporary society. Library herald.41 (4):194-199.
3. Buragohain, A. (2000).Various aspects of librarianship and information services.N.Delhi: Ess Ess publication.
4. Singh, Manuj Kumar (2016).Scenario of library development in North East India with special reference to Assam.In: Librarianship in 21st century, N.Delhi: Ess Ess Publication.2016, 435.
5. Kumar, Krishan (1997).Library organization. New Delhi: Vikas publishing house pvt ltd.

প্ৰবন্ধ

যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ কবিতা ঃ এক চমু আলোচনা

('কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা' আৰু 'মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ' কবিতা সংকলনৰ বিশেষ সন্দৰ্ভত)

তৰুলতা বৰুৱা

গৱেষক ছাত্ৰী
আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু
সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয় (অসম)
ম'বাইল ঃ ৯৫০৮০৩৭৩৪৭

প্ৰস্তাৱনা ঃ

গভীৰ অধ্যয়ন, বৌদ্ধিক চিন্তা চৰ্চাৰে নিজকে এক অপ্ৰতিদ্বন্দ্বীৰূপত প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ সক্ষম হোৱা যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞি আছিল অসমৰ এগৰাকী সাংবাদিক, সাহিত্যিক, অৰ্থনীতিবিদ, বুদ্ধিজীৱি আৰু সমাজকৰ্মী। প্ৰথমতে শিক্ষকতা আৰু তাৰ পিছত সাংবাদিকতা আৰম্ভ কৰি বহু উত্থান-পতনৰ মাজেৰে জীৱন অতিবাহিত কৰা বৰগোহাঞিয়ে সাহসেৰে লিখা-মেলা কৰি অসমত ন ন চিন্তাৰ উদ্ৰেক ঘটাইছিল। নীৰৱ সাধক বৰগোহাঞি এগৰাকী কবি হিচাপে সাহিত্য জগতত যথেষ্ট দখল থকা দেখা যায়। অৰ্থাৎ কুৰি শতিকাৰ সত্তৰ-আশীৰ দশকতে আত্মপ্ৰকাশ কৰা যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞি অসমৰ কবি সমাজৰ এটি পৰিচিত নাম। অজস্ৰ জনপ্ৰিয় কবিতাৰ স্ৰষ্টা যদিও তেওঁ দায়বদ্ধতাৰে সাংবাদিকতা বৃত্তিত আত্মনিয়োগ কৰাৰ বাবে কাব্য সাধনাৰ ক্ষেত্ৰত মনোযোগ দিব পৰা নাছিল। তথাপি তেওঁ ছয়খন কবিতা সংকলনেৰে অসমীয়া সাহিত্য জগতৰ ভঁৰাল চহকী কৰি থৈ গৈছে। বৰগোহাঞিয়ে তেওঁৰ প্ৰথমখন কাব্যগ্ৰন্থ 'একুৰিয়ামত বন্দী মাছ' ৰ বাবে যোৰহাট সন্মিলনৰ গাণ্ডীৱ বঁটা লাভ কৰিছিল। তেওঁৰ আন কেইখন কাব্য সংকলন হ'ল - কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা, মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ, পাবলো নেৰুডাৰ কবিতা, টুং-পি-বুৰ কবিতা, কৃষ্ণাংগ কবিৰ কবিতা আদি। তেওঁৰ প্ৰথমখন কবিতা সংকলন 'একুৰিয়ামত বন্দী মাছ' প্ৰকাশ পাইছিল ১৯৮৩ খ্ৰীঃত। তাৰ প্ৰায় পঁচিশ বছৰৰ পিছত ২০১১ চনত প্ৰকাশিত হয় কবিৰ স্বনিৰ্বাচিত কবিতা সংকলন কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা। 'একুৰিয়ামত বন্দী মাছ' কবিতা পুথিখনত প্ৰকাশিত কবিতাসমূহ চিৰন্তন, সাম্প্ৰতিক কবিতা, মাহেকীয়া কবিতা, ৰণক্ষেত্ৰত কবিতা, সাময়িক কবিতা, পান্থপাদপ, আমাৰ প্ৰতিনিধি, সমকাল, আজিৰ কবিতা, প্ৰতিপাদৰ কণ্ঠ আদি আলোচনীত প্ৰকাশ হৈছিল। ইয়াৰ উপৰিও এই সংকলনৰ আটাইবোৰ কবিতা 'কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতাতো অন্তৰ্ভুক্ত। বৰগোহাঞিৰ আন এখন কবিতাপুথি হ'ল - মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ। এইখন প্ৰকাশ হৈছিল ২০১২ চনত। তেওঁৰ

কবিতাসমূহ নিঃসন্দেহে নতুনত্বৰ বাৰ্তাবাহী, ভাবোদ্দীপক আৰু ব্যঞ্জনাগধুৰ। সংখ্যাৰ ফালৰ পৰা তাকৰ হ'লেও এই কবিতাবিলাকত যি অন্তৰ্নিহিত ভাৰ আৰু আদৰ্শ ফুটি উঠিছে, সেই ভাৱ আৰু আদৰ্শ সাম্য আৰু মুক্তিৰ সপোন দেখা প্ৰতিজন মানুহৰ বাবে আদৰ্শনীয় আৰু অনুকৰণীয়।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

এজন অৰ্থনীতিবিদ, সাংবাদিক হোৱাৰ লগতে লেখক হিচাপেও যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ এক বিশেষ স্থান আছে। জয়ন্তী যুগৰ পৰা একবিংশ শতিকালৈ মাৰ্ক্সীয় আদৰ্শৰে অনুপ্ৰাণিত ভালেমান মহাশক্তিশালী অসমীয়া কবি আছে। তাৰ ভিতৰত বৰগোহাঞিও অন্যতম। কিন্তু তেওঁৰ এই আদৰ্শৰ কবিতালানিত এটি ব্যতিক্ৰমী সুৰ অনুভূত হয়। তেওঁৰ নিৰলস কাব্যচৰ্চা আৰু উৎকৃষ্ট কেতবোৰ কাব্যিক ফচলে অসমীয়া প্ৰগতিশীল কাব্যজগতত গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান দখল কৰিছে। তেওঁৰ সৃষ্টি কবিতাৰাজিৰ বিভিন্ন দিশসমূহ উপস্থাপন কৰাই হৈছে এই অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য। তদুপৰি বৰগোহাঞিয়ে কেৱল পাঠকৰ মনোৰঞ্জনৰ বাবেই কবিতা ৰচনা কৰা নাছিল। সমাজৰ প্ৰতি গভীৰ দায়বদ্ধতাৰে আৰু সমাজ উত্তৰণৰ উদ্দেশ্যেও কবিতা সৃষ্টি কৰিছিল।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু উৎস ঃ

'যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ কবিতা' ৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে প্ৰধানকৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে। কিয়নো আলোচ্যৰ বিষয়টো নানা দৃষ্টিকোণৰ পৰা পৰ্যবেক্ষণ কৰি কোনো সিদ্ধান্তত অৱতীৰ্ণ হোৱাই হৈছে এই পদ্ধতিৰ অন্যতম দিশ। আকৌ বিষয়বস্তু উপস্থাপন শৈলীৰ ক্ষেত্ৰত বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো গ্ৰহণ কৰা হৈছে। আলোচনাৰ সমল সংগ্ৰহ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত বৰগোহাঞিৰ কবিতাপুথিক প্ৰধান উৎস হিচাপে বাচি লোৱা হৈছে। লগতে এই বিষয়বস্তুৰ লগত সংগতি থকা আন কেইখনমান গ্ৰন্থক গৌণ সমল হিচাপে লোৱা হৈছে।

প্ৰস্তাৱিত বিষয়ৰ পৰ্যালোচনা ঃ

যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ কবিতাৰ বিষয়বস্তু আছিল প্ৰধানকৈ শোষিত, পীড়িত, বঞ্চিত জনগণৰ মুক্তিৰ নিনাদ। তেওঁৰ আলোচ্য দুয়োখন কবিতাপুথিৰ কবিতাত শোষণ নিপীড়নৰ বিৰুদ্ধে সৰৱ প্ৰতিবাদ দেখা যায়। সিংহ বিক্ৰমী সাংবাদিক হৈয়ো দাৰিদ্ৰ্য পীড়িত সমাজখনৰ লগত থকা তেওঁৰ আন্তৰিক সম্পৰ্কই কবিক প্ৰতিবাদী কৰি তুলিছে আৰু শ্ৰমিক শ্ৰেণীক বিপ্লৱী আদৰ্শৰে উদ্বুদ্ধ কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে। শ্ৰমজীৱী মেহনতী জনতাৰ ওচৰত দায়বদ্ধতা, সমাজৰ অশুভ শক্তিস্বৰূপ শাসক শ্ৰেণীটোৰ বিৰুদ্ধে প্ৰচণ্ড বিদ্ৰোহ ঘোষণা আৰু জনতাৰ প্ৰতি থকা প্ৰগাঢ় প্ৰেম স্পষ্টভাৱে ধৰা দিছে তেওঁৰ কবিতাত। সমাজত প্ৰচলিত শোষণ, উৎপীড়ন, মহাজন, জমিদাৰ লোকে শ্ৰমিক শ্ৰেণীৰ ওপৰত চলোৱা শোষণ মনোভাৱ, হাড়ভগা পৰিশ্ৰম কৰিও যথোপযুক্ত পাৰিশ্ৰমিক নোপোৱা এই শোষিত পদদলিত, অৱহেলিত, নিষ্পেষিতসকলৰ দুখৰ কথা, হা-হুমুনিয়াহবোৰ কবিয়ে মৰ্মে মৰ্মে উপলব্ধি কৰিছে। সৰ্বসাধাৰণৰ প্ৰতি দৰদী বৰগোহাঞিয়ে সমাজৰ পদদলিত, অৱহেলিত মানুহখিনিক জীয়াই থকাৰ সাহস দিছে, জীৱন জীয়াবলৈ প্ৰেৰণা যোগাইছে। সহানুভূতিশীল কণ্ঠৰে তেওঁ কৈছে -

আকৌ আমি প্ৰকৃতিৰ বিজয়ৰ গীত গাম
চোমদেওৰ আগত
হাজাৰ হাজাৰ কুকুৰা কাটিম
তেজৰ ঢৌৰে উটুৱাই লৈ যাব
চকুলোৰ বান [১]

(তোমালোকে প্ৰতিজ্ঞা কৰা যে)

বৰগোহাঞি মানৱতাৰ অৰ্থাৎ মানুহৰ কবি, বাস্তৱতাৰ কবি। সাধাৰণ মানুহৰ প্ৰতি অসাধাৰণ ভালপোৱাই এইজন বিপ্লৱী কবিৰ অন্যতম বৈশিষ্ট্য। মানুহৰ মনৰ অৰ্থহীন ধ্যান-ধাৰণা অন্ত পেলাই এখন মানৱতাবাদী সুন্দৰ সমাজ গঠন কৰাৰ বাবে তেওঁ গভীৰভাৱে চিন্তা কৰিছিল।

মাটিৰ মানুহ মই
গাওঁ মই মানুহৰ জীৱনৰ গান
গাওঁ মই মানুহৰ সত্যৰ গান
গাওঁ মই মানুহৰ মুক্তিৰ গান। [২]
(তুমি আৰু মই দুই মেৰুত)

(কবিতা পুথি - মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ)

বৰগোহাঞিৰ অন্যান্য কেইটামান কবিতা যেনে - 'নমাই থোৱা ধৃষ্টতা', 'জ্যোতিৰ মন্ত্ৰ লোৱা', 'সকলোৰে

সময়ত হ'ব সব্যসাচী', 'নতুন প্ৰত্যয়', 'মোৰ খামোচত এমুঠি সপোন' আদিৰ মাজেৰে মানৱীয় দৰ্শন আৰু কবিৰ সংবেদনশীল হৃদয়ৰ বলিষ্ঠ তথা মৰ্মস্পৰ্শী আবেদন পৰিলক্ষিত হয়। সেইদৰে সীমান্তৰ সংজ্ঞা নালাগে মোক, ঘাতকৰ দিন, ডাঙৰ কৰক মন, মই শিৰনত কৰোঁ আদি দুটামান কবিতাত আনুভূতিক তীব্ৰতা প্ৰকাশ পাইছে। যিবোৰ কবিতাত কবিয়ে ৰাজহুৱা প্ৰতিনিধিৰ কণ্ঠস্বৰেৰে পাঠকৰ লগত যোগাযোগ কৰিবলৈ বিচাৰিছে তাতেই উচ্ছ্বাস আৰু আবেগে চিন্তানুভূতিৰ গাঁথনি শিথিল কৰিছে। তেওঁৰ কবিতাত এক আপোচহীন সংগ্ৰামৰ আহ্বান বিয়পি আছে। তেওঁ নিজেই 'কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা' নামৰ কবিতাপুথিখনৰ উৎসৰ্গ পত্ৰত উল্লেখ কৰিছে -

যিসকলক জুইৰ মাজলৈ নিক্ষেপ কৰা হ'ল আৰু যিসকল জ্বলি জ্বলি নিজে হ'ল লেলিহান জুইৰ শিখা বৰ্তমানৰ যি সকলৰ বাবে দুঃস্বপ্ন ভৰিষ্যত যিসকলৰ বাবে পৰিচয়হীন উত্তাল তৰংগ তথাপি মৃত্যু শীতল অতীতৰ আন্ধাৰ ফালি যিসকলে ঢাপলি মেলিছে ভৰিষ্যতলৈ যিসকল ধুমুহাৰে বুকু পাতি থিয় হৈছে দ্বন্দ্ব সংঘাত যন্ত্ৰণা আৰু মৃত্যুক পৰাভূত কৰি যিসকলে যুঁজ দিছে জীয়াই ৰাখিছে মানৱতা আৰু গণতন্ত্ৰ গঢ়িছে সমাজৰ সবল বুনিয়াদ তেওঁলোকলৈ শ্ৰদ্ধাৰে ---- [৩]

বৰগোহাঞি মূলতঃ বিদ্ৰোহী কবি। জীৱনৰ সমস্ত বেদনা, ব্যৰ্থতা, অপচয়, মমতাহীন, দূৰদৃষ্টিহীন অৱস্থাই যেন পৃথিৱী জুৰি স্তৰে স্তৰে ভৰি আছে। ক্ষয়িষ্ণু সমাজ ব্যৱস্থা, ঘূণে ধৰা শাসন আৰু অপশাসনত কবি অতিষ্ঠ হৈ পৰিছে। শোষণ-শাসনত কোঙা হৈ পৰা জনগণৰ নিঃস্ব অৱস্থা প্ৰত্যক্ষ কৰি তেওঁ কলমত শান দিবলৈ আৰম্ভ কৰিছে। সমাজৰ অৱক্ষয়ৰ ৰূপ লক্ষ্য কৰি তেওঁ কৈছে -

হায় মোৰ লুইতৰ দুৰ্ভগা পাৰ
কঙালী অসম
আটাহত গগণ ফালি
মই ক'লা সূৰ্য্যক প্ৰশ্ন কৰোঁ ঃ
এইটো শতিকা কি
কোন শতিকাৰ এই
ঘৃণনীয় হীন অন্ধকাৰ?[৪]
(লুইতৰ পাৰে পাৰে দৌৰিছে হাজাৰ মানুহ)

সূক্ষ্ম সামাজিক আৰু ৰাজনৈতিক চেতনা বৰগোহাঞিৰ কবিতাত দেখিবলৈ পোৱা যায়। শাসক, শোষক আৰু প্ৰৱঞ্চক শ্ৰেণীয়ে সাধাৰণ মানুহক বিভক্ত কৰি শ্ৰেণী স্বাৰ্থপূৰণ কৰা পৰিস্থিতিটো তেওঁৰ 'লাগ্নিক' শীৰ্ষক কবিতাটোত এনেদৰে উত্থাপিত হৈছে -

মই কবি কাৰ কোনেও আৰু
ক'তো নুসুধিবা
ইয়াত তৃষ্ণা কেৱল হা-হুতাশ অগ্নিদাহ।
কেৱল ধ্বংস। মৃত্যুৰ স্তুপ। তপ্ত দেৱাল।
মানুহৰ কথাই মানুহে নুশুনে
কাৰো কথাই কোনেও নুশুনে।[৫]

যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞি আছিল মাৰ্ক্সীয় দৰ্শনৰ অনুগামী। অৰ্থাৎ তেওঁৰ জীৱন আৰু কবিতা উভয়তে মাৰ্ক্সীয় চিন্তাধাৰাক শক্তিশালী কৰি তুলিছে। বিশ্বৰ সমগ্ৰ মেহনতী জনতাই শোষক শক্তিৰ বিৰুদ্ধে আপোচহীন সংগ্ৰাম চলাই শোষণৰ অৱসাদ ঘটোৱাই আছিল মাৰ্ক্সীয় আদৰ্শৰ প্ৰধান লক্ষ্য। সাম্যবাদী ধাৰণাটো মাৰ্ক্সীয় দৰ্শনৰ ওপৰত প্ৰতিষ্ঠিত। বৰগোহাঞি সাম্যবাদৰ প্ৰবক্তা আছিল। সুস্পষ্ট ৰীতিৰ আধাৰত ৰচিত তেওঁৰ কবিতাবোৰত যিদৰে প্ৰতিবাদৰ সুৰ বিৰাজমান, সেইদৰে সাম্যবাদী চেতনাও বিৰাজমান। শাসক, শোষকৰ প্ৰতি বিৰুদ্ধাচৰণ, শোষণ-বঞ্চনাৰ তীব্ৰ প্ৰতিবাদ কৰিও অসমীয়া জাতিৰ ভীৰুতা, কৰ্ম নিস্পৃহতা, সোৰোপা স্বভাৱৰ লগতে আত্ম সচেতনতা আদি বেয়া গুণবোৰৰ প্ৰতি আঙুলিয়াই দিবলৈও তেওঁ পাহৰি যোৱা নাই। 'একুৰিয়ামত বন্দী মাছ' কবিতাটোত কবিয়ে কৈছে -

একুৰিয়ামৰ বন্দী মাছ চকুত ভগ্ন ৰঙীণ কাঁচ
আছে কি তোমাৰ আকাশ দেখাৰ এতিয়াও সেই ভীৰ
অভিলাষ অভিলাষ?[৬]

তেওঁ জনতাৰ দুখ-দুৰ্দশা প্ৰত্যক্ষ কৰি শাসক পুঁজিপতিৰ প্ৰতি ক্ষোভ উজাৰি প্ৰচলিত সমাজ ব্যৱস্থাৰ আমূল পৰিৱৰ্তন বিচাৰিছে।

বৰগোহাঞিৰ কবিতাৰ বিষয় সদায় মানুহৰ যন্ত্ৰণা আৰু কবিৰ আশা দুখৰ অৱসান। তেওঁৰ কবিতাত অমানিশা সদায় শক্তি আৰু সৃষ্টিৰ উৎস। অমানিশাৰ পৰাই পোহৰৰ উদয় হ'ব, নতুন পথৰ সন্ধান ওলাব বুলি কবি আশাবাদী। শ্ৰমৰ মূল্য লাঘৱ কৰা শ্ৰমিকৰ অমৰ্যদা, দীনতা, গোলামী আদি সামগ্ৰিকভাৱে সৃষ্টিশীল কামৰ

পৰিপন্থী। তেওঁৰ প্ৰায়বোৰ কবিতাতে এনে জীৱনবোধক উক্তিগুপ্তহত্যাৰ ভয়াবহতাও তেওঁৰ কবিতাত মূৰ্ত হৈ উঠিছে। গুপ্তঘাতকৰ গুলীত প্ৰাণ ত্যাগ কৰা আলফাৰ প্ৰধান সচিব মিথিংগা দৈমাৰীৰ ভাতৃ কবি ডা০ ধৰণীধৰ দাস আৰু তেওঁৰ পৰিয়ালৰ মৃত্যুত ব্যথিত হৈ সহমৰ্মিতা প্ৰকাশ কৰি বৰগোহাঞিয়ে কবিতাত এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে -

ডাঙৰীয়া
কৰবাত এজন কবি
শুই আছে সপত্নীক
ৰক্তাক্ত মলিন
লুণ্ঠিতা মাতৃ
আৰু ভগ্নীৰ
সৰ্বস্বই পৰি আছে
ডাঙৰীয়া
এজন কবিৰ
প্ৰেম আৰু জীৱনৰ
সকলোৰে শুই আছে
পাগলা নদীৰ পাৰত বৰমাত।[১৫]
(কবি আৰু সাংবাদিকৰ বাবে)
(কবিতাপুথি - মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ)

সেইদৰে সাংবাদিক পৰাগ দাসেও গুপ্তহত্যাৰ বলি হ'বলগীয়া হৈছিল। বৰগোহাঞিয়ে সেই সময়ৰ সন্ত্ৰাসজৰ্জৰ পৰিৱেশৰ প্ৰতি আৱেগিক আৰু ক্ষোভিত হৈ কৈছে -

কৰবাত বাগৰি আছে
কোনোবা ডেকা সাংবাদিকৰ
কাগজ আৰু কলম
ৰাজপথত
ৰক্তাক্ত শিলবোৰত
বিয়পিছে
তাৰ তেজ আৰু মস্তিষ্ক।[১৬]
(কবি আৰু সাংবাদিকৰ বাবে)
(কবিতাপুথি - মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ)

অসম আন্দোলনৰ পিছৰ সময়ছোৱা আছিল আলফাৰ বিদ্ৰোহৰ সময়। উগ্ৰবাদী সংগঠনসমূহৰ উগ্ৰবাদী কাম কাজেও সেই সময়ৰ কবিসকলক স্পৰ্শ কৰিছিল। যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ কবিতাতো সন্ত্ৰাসজৰ্জৰ অসমৰ ছবি ফুটি উঠা দেখা যায়।

নীলা পাহাৰবোৰত
বাৰুদৰ ধোঁৱা কিয়
মোক নুসুধিবা
অজ্ঞাত কথাবোৰৰ সম্ভেদ
আচৰিতভাৱে
মোৰো এতিয়া নাই
প্ৰজ্ঞাৰ অমল জোনাক।[১৭]
(মই দেখা নাই অমল জোনাক)
(কবিতাপুথি - মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ)

কবিয়ে সন্ত্ৰাসৰ বিৰোধিতা কৰি তেওঁৰ 'নমাই থোৱা ধৃষ্টতা' কবিতাত সন্ত্ৰাসৰ বিৰুদ্ধে প্ৰতিবাদৰ ধ্বনি অংকিত কৰি কৈছে -

তোমাৰ পৰিচয় এক জীৱন্ত মৃত্যুদূত
এক উদ্যত বন্দুকৰ নলী
তোমাক ভাই বোলাৰ ধৃষ্টতাও আজি মোৰ নাই
তথাপিও কওঁঃ ভাই নমাই থোৱা
বন্দুকৰ নলী নমাই থোৱা অহংকাৰ
নমাই থোৱা গ্ৰিণেড।[১৮]

কবিতাৰ ভাষা গদ্যভাষাতকৈ সুকীয়া। সেয়ে কবিতাৰ ভাষা বিশ্লেষণ গদ্য ভাষা বিশ্লেষণৰ পৰা সম্পূৰ্ণ বেলেগ। কিয়নো ছন্দ, অলংকাৰ, প্ৰতীক, চিত্ৰকল্প আৰু কাব্যিক শব্দ চয়নে কবিতাৰ ভাষাক গদ্যভাষাৰ পৰা আঁতৰাই আনিছে। বৰগোহাঞিৰ কবিতাৰ বৈশিষ্ট্য আলোচনা কৰাৰ লগতে প্ৰতীক, চিত্ৰকল্প, ছন্দ, অলংকাৰ আদি দিশসমূহো আলোচনা কৰা হৈছে। তেওঁৰ কবিতাত ঠাই বিশেষে প্ৰতীকৰ সাৰ্থক প্ৰয়োগ লক্ষ্য কৰা যায়। 'একুৱিয়ামত বন্দী মাছ' কবিতাপুথিখনৰ নামকৰণৰ পৰা আৰম্ভ কৰি প্ৰায়বোৰ কবিতাত ব্যৱহৃত শব্দবোৰ গভীৰ প্ৰতীকী ব্যঞ্জনাৰে সুসমৃদ্ধ। একুৱিয়াম বুলি কওঁতে কৃত্ৰিম আৰু বন্দী জীৱনৰ কথা কোৱা হৈছে। মাছ শব্দটোৰে জনসমাজক প্ৰতীক হিচাপে বুজাইছে। আজিৰ সমাজত প্ৰতিজন মধ্যবিত্ত মানুহেই একো একোটা একুৱিয়ামত বন্দী মাছ।

বৰগোহাঞিৰ 'কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা' শীৰ্ষক কাব্য সংকলনখনৰ এটা উল্লেখযোগ্য কবিতা হ'ল - সোণালী পিঠিয়া মাছ। চিকাৰীৰ লগত জীয়াই থকাৰ বাবে চৰম যুঁজ দিয়া এই মাছবিধ আকৌ ভাৰতৰ গভীৰ

পানীৰ সুস্বাদু মাছ। এইবিধ মাথো সুস্বাদু হ'লেও বিৰোধী শক্তিৰ সৈতে যুঁজি যুঁজি অগ্ৰসৰ হোৱা বৈভৱপূৰ্ণ গুণেহে কবিক আকৃষ্ট কৰিছে। যুঁজি যুঁজি জীয়াই থকা অজস্ৰ শ্ৰমজীৱি জনসাধাৰণেই হ'ল কবিৰ দৃষ্টিত সোণালী পিঠিয়া মাছৰ তুল্য।

'আজি ৰাতি বৰষুণ আহিব' শীৰ্ষক কবিতাত কবিয়ে দুখৰ দিনৰ পাছত সুখৰ দিন অহাৰ কথা কল্পনা কৰিছে। তাকেই প্ৰতীকৰ সহায়েৰে এনেদৰে প্ৰকাশ কৰিছে -

আজি ৰাতি বৰষুণ আহিব
এজাক তেজাল বৰষুণ
আন্ধাৰ উটাই নিয়া
পোহৰৰ উদ্দাম ঢল নমাব।
আজি ৰাতি এজাক বৰষুণ আহিব
এজাক তেজাল বৰষুণ।[১৯]

যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ সঁচা মানুহৰ কলিজাৰ তেজেৰে চিত্ৰপট অংকন কৰা কবিতাৰ খনিকৰ। সেয়ে তেওঁৰ কবিতাৰ ফাকে ফাকে প্ৰত্যায়িত ৰূপত মূৰ্ত হৈ উঠিছে জীৱন্ত ব্যক্তি, তেওঁলোকৰ জীৱন চৰ্য্যা, সুখ-দুখ, আশা-সপোনৰ কথা। সেইদৰে সম্প্ৰতি ক্ষয়মান হৈ অহা সাধাৰণ মানুহৰ অৰ্থনৈতিক অৱস্থাৰ স্বৰূপটোৰ কাব্যময় প্ৰকাশ বৈচিত্ৰৰে বৰগোহাঞিয়ে এখন অৰ্থবহ চিত্ৰ আঁকি কবিতাত কৈছে -

উন্নত শিৰ যেন এক অনামী কৃষক
বুকু ভুকুৱাই গৰজি উঠেঃ
বানপানী মহাজন কাকতি ফৰিং
জাক জাক বনৰীয়া ম'হ
কাকোয়ে নকৰোঁ ভয়।[২০]
(লুইতৰ পাৰে পাৰে দৌৰিছে হেজাৰ মানুহ)

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ 'জনতা' কবিতাটোত যিদৰে চিৰন্তন মানৱৰ চিত্ৰ অংকিত হৈছে আৰু তাত গান্ধী, লেনিন, লিংকন, কুশল কোঁৱৰ, বেকেট, শম্বুক সকলোকে একাকাৰ কৰি পেলাইছে সেইদৰে যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ 'ঘাতকৰ দিন' কবিতাটোতো পেট্ৰিচ লুমুম্বা, নেলচন মেণ্ডেলাক একাকাৰ কৰি পেলাইছে।

আধুনিক অসমীয়া কবিতাৰ ভাষাৰ অন্যতম বৈশিষ্ট্য হ'ল - ইয়াৰ গদ্যগন্ধী ৰূপ। বৰগোহাঞিৰ দুই এটা কবিতাৰ গঠনশৈলী সম্পূৰ্ণ গদ্যময়।

যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিয়ে তেওঁৰ কবিতাৰ ভাষাক অধিক কাব্যিকতাৰ বাবে কিছুমান বহুবচনাত্মক শব্দ ব্যৱহাৰ কৰি পাঠকৰ সুখপাঠ্য কৰি তুলিছে। তেওঁৰ স্বনিৰ্বাচিত আটাইকেইখন কবিতাপুথিত বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ সৰ্বনাম শব্দ ব্যৱহাৰৰ লগতে অনুকাৰ শব্দৰ ব্যৱহাৰেও কবিৰ কল্পিত বিষয়বস্তুক স্পষ্টকৈ দাঙি ধৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

তাৰ পিছত সি বিষন্নমনে উলটি আহিল তাৰ পঁজালৈ
দিনৰ পিছত দিন শুই কটাই দিলোঁ। ৰুগ্ন দেহ,
....।[২১]
(শিল্পীৰ সুৰুযমুখী)

নাটকীয় ভাষাৰ ঠাঁচত কথোপকথনৰ মাজেৰেও আধুনিক অসমীয়া কবিতাই এক নতুন দিশৰ উন্মোচন কৰিছে। বৰগোহাঞিৰ কবিতাও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়।

তোমাৰ কি আছে
বিক্ৰীৰ বাবে
মস্তিষ্ক
নে
পণ্য
..........[২২]
(মাত্ৰ এপ্ৰিল নহয়)

যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিয়ে তেওঁৰ কবিতাৰ ভাষাক অধিক কাব্যিকতাৰ বাবে কিছুমান বহুবচনাত্মক শব্দ ব্যৱহাৰ কৰি পাঠকৰ সুখপাঠ্য কৰি তুলিছে। তেওঁৰ স্বনিৰ্বাচিত আটাইকেইখন কবিতাপুথিত বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ সৰ্বনাম শব্দ ব্যৱহাৰৰ লগতে অনুকাৰ শব্দৰ ব্যৱহাৰেও কবিৰ কল্পিত বিষয়বস্তুক স্পষ্টকৈ দাঙি ধৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। উদাহৰণ স্বৰূপে - দিদিম্ দিদিম্ দাম্‌বা দিদ্‌িম দাম্‌বা

দিদিম্ দিদিম্, ফুচফুচ ইত্যাদি। সেইদৰে তেওঁৰ কবিতাত উপমা অলংকাৰো দেখিবলৈ পোৱা যায়। যেনে - জ্বলি থকা মমবাতিৰ দৰে, 'বৰ্ণময় শিখাৰ দৰে অনিৰ্লীণ' ইত্যাদি।

ইতিমধ্যে কৰি অহা আলোচনাৰ পৰা দেখা যায় যে যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ ব্যক্তিগত অনুভূতিতকৈ মানুহৰ দুখ-যন্ত্ৰনাহে তেওঁৰ কবিতাত স্পষ্টকৈ প্ৰকাশ পাইছে। সমসাময়িক সমাজত সংঘটিত হোৱা বিভিন্ন পৰিস্থিতিৰ চিত্ৰও তেওঁৰ কবিতাত প্ৰতিফলিত হৈছে। তেওঁৰ প্ৰতিটো কবিতাৰ আঁৰত একোটাকৈ কাহিনী থকা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে অসম আন্দোলনৰ পাছৰ অগ্নিগৰ্ভ সময়ৰ ছবি বৰগোহাঞিৰ 'লুইতৰ পাৰে পাৰে দৌৰিছে হেজাৰ মানুহ', 'তোমালোকে প্ৰতিজ্ঞা কৰা যে', 'নতুন পুৰুষলৈ' আদি কবিতাত প্ৰতিফলিত হৈছে। অসম আন্দোলনৰ সময়ত তেওঁ সদৌ অসম গণ সংগ্ৰাম পৰিষদৰ লগত জড়িত হৈ পৰিছিল। অসমৰ এক অন্যতম সাহিত্য সংস্কৃতিৰ অনুষ্ঠান ' চিৰন্তন সাহিত্যৰ দিন' ৰ সৈতেও বৰগোহাঞিৰ আছিল আত্মিক সম্পৰ্ক। সেয়ে তেওঁৰ কবিতাসমূহ আছিল কবিৰ জীৱনৰ বিভিন্ন অভিজ্ঞতাৰ বাঙ্ময় প্ৰকাশ। তেওঁৰ ২০১১ চনত প্ৰকাশিত হোৱা 'কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা' ত সন্নিৱিষ্ট হৈ আছে অসম আন্দোলনৰ ভয়াবহ সময়ৰ পৰা আৰম্ভ কৰি শোষিত বনুৱাৰ জীৱন যন্ত্ৰণা তথা সংগ্ৰামী জীৱনৰ প্ৰতিফলন। ২০১২ চনত প্ৰকাশিত হোৱা বৰগোহাঞিৰ আনখন কবিতাপুথি 'মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ' ত সন্নিৱিষ্ট হৈ থকা কবিতাসমূহৰ বৈশিষ্ট্য হ'ল - প্ৰতিবাদী চেতনাবোধ, ৰাজনৈতিক চেতনা, ৰোমাণ্টিকতাৰ ক্ষুদ্ৰ আভাস, সাম্যবাদী চেতনাৰ লগতে সমকালীন সমাজৰ বিভিন্ন সমস্যা। মুঠতে সামগ্ৰিক দৃষ্টিৰে পৰ্যবেক্ষণ কৰিলে বৰগোহাঞিৰ কবিতাৰ বৈশিষ্ট্য হ'ল - কাব্যিক সংহতি আৰু কাব্যিক সৌন্দৰ্য্য বিনষ্ট নোহোৱাকৈ প্ৰতিবাদী কণ্ঠৰে উপস্থাপন কৰা।

উপসংহাৰঃ

অসম আৰু অসমীয়াৰ প্ৰতি সুগভীৰ দায়বদ্ধতাৰে জাতীয় জীৱনৰ ঐতিহ্য আৰু সমকালৰ বাস্তৱ চেতনাৰ সমন্বয় সাধন কৰি সমাজখনৰ সৰ্ব্বাঙ্গীন উত্তৰণৰ বাবে নিৰলস প্ৰচেষ্টা আগবঢ়োৱা একনিষ্ঠ সাধকজনেই হ'ল যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞি। জাতীয় চৈতন্যৰে চিৰ উদ্ভাসিত বৰগোহাঞিৰ প্ৰায়বোৰ কবিতাতেই ব্যক্ত হৈছে সমাজৰ প্ৰতি দায়বদ্ধতা আৰু সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ বলিষ্ঠ বাৰ্তা। আপোচহীন, আদৰ্শবান, স্পষ্টবাদী সাংবাদিক বৰগোহাঞিয়ে সমস্যাজৰ্জৰ অসমৰ জাতীয় সমস্যাৰ সম্পৰ্কে তেওঁৰ কবিতাবোৰত ব্যক্ত কৰিছে। তেওঁৰ সৰহ সংখ্যক কবিতাত নিনাদিত হৈছে মাৰ্ক্সীয় চেতনা। এই চেতনাৰে উদ্বুদ্ধ হৈ বৰগোহাঞিয়ে শোষিত জনগণৰ মুক্তিৰ কথা চিন্তা কৰিছে। কিয়নো মাৰ্ক্সবাদে পুঁজিপতি মহাজনৰ অত্যাচাৰ নিষ্পেষণৰ সদায় বিৰোধিতা কৰি তাৰ অৱসানৰ পক্ষে মাত মাতি আহিছে। বৰগোহাঞিৰ কবিতাত মাৰ্ক্সীয় ভাবাদৰ্শ পৰিলক্ষিত হয় যদিও ব্যক্তিগত জীৱনত তেওঁ মাৰ্ক্সীয় আদৰ্শৰ ধ্বজাবাহী নাছিল। তাৰ পৰিৱৰ্তে মাৰ্ক্সীয় আদৰ্শ তেওঁৰ কবিতাত আপোন দেশৰ মাটিৰ গোন্ধ উপলব্ধি কৰোৱাৰ প্ৰধান আহিলা হিচাপেহে বাংময় হৈ উঠিছে।

ওপৰৰ আলোচনাৰ পৰা কেইবাটাও সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰি -

১। চিন্তাৰ প্ৰগতিয়েই যদি কবিতাৰো প্ৰগতি হয় তেন্তে বৰগোহাঞিৰ কবিতা সম্পূৰ্ণভাৱে প্ৰগতিবাদী কবিতা। সাম্যবাদী, প্ৰগতিশীল চিন্তা-চৰ্চাৰে মানুহক এক উন্নতমানৰ জীৱনৰ সন্ধান দিয়াই তেওঁৰ সৃষ্টিৰাজিৰ মূল বৈশিষ্ট্য।

২। বৰগোহাঞিৰ কবিতাত ফুটি উঠা সমাজ সচেতনতা আৰু স্বদেশপ্ৰেমৰ সুৰে প্ৰমাণ কৰে যে সমাজ সচেতন ব্যক্তি হিচাপে পৰিচিত বৰগোহাঞিৰ জীৱনদৰ্শন আছিল জাতীয়তাবোধ আৰু সমাজবাদৰ এক সংমিশ্ৰণ।

৩। সৃষ্টিৰ উন্মাদনা, মাটি আৰু মানুহৰ সম্পৰ্ক, শোষণহীন, শ্ৰেণীহীন সমাজৰ কল্পনা বৰগোহাঞিৰ কবিতাৰ মূল বিষয়।

তেওঁৰ কবিতাবোৰত শ্ৰমৰ বন্দনাৰ লগতে সমাজবাদী দৃষ্টি-ভংগীৰে একোজন শ্ৰমিকৰ নান্দনিক সৌষ্ঠৱপূৰ্ণ ছবিখনো মনোৰমকৈ আঁকিছে।

মুঠতে সত্তৰৰ দশকৰ প্ৰগতিশীল কবি হিচাপে যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিৰ অসমীয়া কাব্য সাহিত্যত যথেষ্ট অৱদান আছে যদিও এইজন কবিৰ কবিতাৰ আলোচনা অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জীত যথাৰ্থভাৱে হোৱা নাই। গতিকে বৰ্তমান সমাজ বাস্তৱৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত এই কবিজনৰ ৰচনা বিচাৰ বিশ্লেষণ কৰাৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ প্ৰাসংগিকতা আছে। ❑

সূত্ৰ নিৰ্দেশ ঃ

[১] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা, পৃঃ ৩১
[২] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ, পৃঃ ৪২
[৩] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা, উৎসৰ্গা পৃঃ ৩
[৪] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ২১
[৫] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ৬২
[৬] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ, পৃঃ ২৩০
[৭] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা, পৃঃ ১৫
[৮] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ, পৃঃ ৪২
[৯] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ১৩১
[১০] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ৩৩
[১১] উল্লিখিত গ্ৰন্থ,, পৃঃ ২৯
[১২] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ২৩৯
[১৩] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ২২
[১৪] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা, পৃঃ ৪৬০
[১৫] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ, পৃঃ ১০৩
[১৬] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ১০৪
[১৭] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ৯১
[১৮] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ৭১-৭২
[১৯] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ৫৩
[২০] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা, পৃঃ ২১
[২১] উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃঃ ৭০
[২২] যতীন্দ্ৰ কুমাৰ বৰগোহাঞিঃ ঃ মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ, পৃঃ ২০

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

গ্ৰন্থ ঃ

ঘোষ, জ্যোতিময় ঃ সাহিত্যত প্ৰগতিৰ দৰ্শন-তত্ত্ব আৰু প্ৰয়োগ (দিলীপ বৰাৰ দ্বাৰা অনূদিত) (২০০৮, প্ৰথম প্ৰকাশ), ভিকি পাব্‌লিচাৰ্স, ভঙাগড়, গুৱাহাটী

চেতিয়া, তোযেশ্বৰ ঃ কবিতাত বিপ্লৱী ধাৰা, (১৯৯০ ফেব্ৰুৱাৰী, প্ৰথম প্ৰকাশ), ধাৰা সমন্বয় গ্ৰন্থালয়, নলবাৰী।

চৌধুৰী, বিজনলাল (সম্পা.) ঃ সাহিত্য বীক্ষণ অসমীয়া প্ৰগতিশীল সাহিত্যৰ ধাৰা, (২০০৬ ডিচেম্বৰ, প্ৰথম প্ৰকাশ), নতুন সাহিত্য পৰিষদ, ষ্টুডেন্টচ ষ্ট'ৰচ, গুৱাহাটী।

বৰগোহাঞিঃ, যতীন্দ্ৰ কুমাৰ ঃ কলং নিঃস্ব সুদূৰ আৰু অন্যান্য কবিতা, (২০১১ জানুৱাৰী, প্ৰথম প্ৰকাশ), সাবিত্ৰী প্ৰকাশন, হেঙেৰাবাৰী, গুৱাহাটী।
ঃ মই এই উপত্যকাৰ সৰ্বোচ্চ শিখৰত বাস কৰোঁ, (২০১২ জানুৱাৰী, প্ৰথম প্ৰকাশ), পুৱাৰ বাতৰি প্ৰকাশন।

বৰুৱা প্ৰহ্লাদ কুমাৰ ঃ আধুনিক অসমীয়া কবিতাৰ গতিবৈচিত্ৰ্য, (২০০০ জুলাই, প্ৰথম প্ৰকাশ), বনলতা বজাৰ, ডিব্ৰুগড়।

আলোচনী ঃ

বৰা, লক্ষ্মীনন্দন (সম্পা.) ঃ গৰীয়সী, ত্ৰয়োবিংশ বছৰ, পঞ্চম সংখ্যা, ফেব্ৰুৱাৰী, ২০১৬, সাহিত্য প্ৰকাশ।
ঃ গৰীয়সী, পঞ্চবিংশ বছৰ, পঞ্চম সংখ্যা, ফেব্ৰুৱাৰী, ২০১৮, সাহিত্য প্ৰকাশ।

প্ৰবন্ধ

স্বদেশী অৰ্থনীতি আৰু ইয়াৰ ব্যৱহাৰিক গুৰুত্ব

ড০ কিংশুক চক্ৰৱৰ্তী

সহকাৰী অধ্যাপক
অৰ্থনীতি বিভাগ,
বিলাসীপাৰা মহাবিদ্যালয়
জিলা ঃ ধুবুৰী (অসম)
মো ঃ ৯৯৫৪৭৭৫৩৩৬

ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰে তেখেতৰ 'কালান্তৰ' নামৰ গ্ৰন্থৰ 'সত্যেৰ আহ্বান' নামৰ প্ৰৱন্ধত লিখিছিল, "পৰাসক্ত মানুহ বুলিলে কেৱল যে আনৰ প্ৰতি জড় ভাৱে আসক্ত মানুহক বুজায় সেয়াই নহয়। চিৰদিন জুৰি যি চলি আহিছে তাৰ লগত যিয়ে নিজক জড়িত কৰি ৰাখে, প্ৰচলিত স'তৰ টানত যিয়ে হাল এৰি আত্মসমৰ্পন কৰে, তেওঁ হৈছে পৰাসক্ত।" কবিৰ কথাখিনিৰ অন্তৰ্নিহিত অৰ্থ খুবেই গভীৰ আৰু অৰ্থপূৰ্ন বিশেষকৈ আজিৰ ভাৰতীয় আৰ্থ-সামাজিক বিকাশৰ বাবে। ইয়োকোহামাৰ পৰা ভাংকুভাৰ অভিমুখী এখন জাহাজত দুই গৰাকী বিখ্যাত ভাৰতীয় ব্যক্তিত্বৰ সাক্ষ্যাত হৈছিল আৰু সেই সাক্ষ্যাতে সমাগত দিনৰ ভাৰতীয় অৰ্থনীতিৰ গতি সলনি কৰিবলৈ আৰু ঐতিহ্যৰ গৰাকী হ'বলৈ বাৰুকৈ সহায় কৰিছিল। সেই দুই গৰাকী ভাৰতীয় আছিল স্বামী বিবেকানন্দ আৰু জামশেদজী টাটা। তেওঁলোকৰ কথোপকথনৰ মূল বিষয় আছিল ভাৰতীয় অৰ্থনীতি আৰু বাণিজ্যৰ প্ৰসংগ। স্বামীজীয়ে সেই উদ্যমী ব্যক্তিজনক পৰামৰ্শ দিছিল স্বদেশত কাৰখানা গঢ়ি তুলিবলৈ। কিয়নো বিগত শতিকাৰ ঔপনিৱেশিক শাসন ব্যৱস্থাৰ অত্যাচাৰৰ পৰা স্বদেশবাসীক মুক্তি দিয়াৰ উপায় হৈছে শিক্ষা আৰু কৰ্মসংস্থান। দেশ স্বাধীন হোৱাৰ পিছত বিভিন্ন আৰ্থিক প্ৰক্ৰিয়াৰে আৰ্থ-সামাজিক সমস্যাবোৰক সমাধান কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছিল যদিও দেশৰ উন্নতিত সদায় এক স্থবিৰতাকহে দেখা গৈছিল। বিশেষকৈ আমাৰ তথাকথিত পঞ্চ-বাৰ্ষিক পৰিকল্পনাবোৰৰ অন্যতম উদ্দেশ্য আছিল 'আত্মনিৰ্ভশীলতা' অৰ্জন কৰা। মহাত্মা গান্ধীয়ে প্ৰসংগ ক্ৰমে কৈছিল যে ভাৰতীয় গাওঁবোৰ হৈছে আত্মনিৰ্ভৰশীলতাৰ একো একোটা গোট আৰু তেখেতে সদায় 'গ্ৰাম-স্বৰাজ'ৰ ওপৰত বিশেষ গুৰুত্ব দিছিল। বুৰঞ্জীবিদ সকলে প্ৰমান কৰি দেখুৱাইছে যে ঔপনিৱেশিক শাসনৰ আগতে ভাৰতবৰ্ষ এখন আত্মনিৰ্ভৰশীল অঞ্চল আছিল। ঔপনিৱেশিক শাসনে আধুনিকতাৰ নামত ইয়াত এক বজাৰমুখী অৰ্থনীতিৰ প্ৰচলনৰ লগতে দেশৰ আত্মনিৰ্ভশীলতাৰ শিপাডালক এক প্ৰকাৰে নষ্ট কৰি পেলাইছিল।

পশ্চিমীয় অৰ্থনৈতিক পণ্ডিতসকলে বহুযুগ আগৰে পৰাই ভাৰতীয় অৰ্থনীতিক কেতিয়াবা এখন উন্নয়নশীল দেশ আকৌ কেতিয়াবা অনুন্নত দেশ বুলি বিবেচনা কৰি আহিছে। প্ৰজন্ম পিছত প্ৰজন্ম আহিছে তথাপি ভাৰত এতিয়াও সেই অৱস্থাক যেন অতিক্ৰম কৰিব পৰা নাই। আৰ্থিক দৃষ্টিৰে মূল্যায়ন কৰিলে কোৱা হয় যে বিশ্বৰ কোনো দেশ স্বয়ংসম্পূৰ্ণ নহয়; দেশৰ আৰ্থ-সামাজিক বিকাশৰ গতিক ত্বৰান্বিত কৰিবলৈ হ'লে বিদেশৰ সহায় নাইবা আমদানিৰ প্ৰয়োজন আছে আৰু থাকিব। স্বাধীনতাৰ পিছত দেশৰ অৰ্থনীতি বিদেশৰ ওপৰতেই অধিক নিৰ্ভৰশীল আছিল আৰু দেশৰ আৰ্থ-সামাজিক বিকাশত চলিছিল কিছুমান পৰীক্ষা নিৰীক্ষা। যেনে সেউজ বিপ্লৱ, বেংক জাতীয়কৰণ, ডাঙৰ বান্ধ নিৰ্মান আদি। ইয়াৰ লগতে তাল মিলাই দেশখনত ঘটি গৈছিল কিছুমান ঘটনা যেনে ক্ৰমান্বয়ে বাঢ়ি অহা জনসংখ্যা, ৰাজনৈতিক জৰুৰীকাল, প্ৰতিবেশী ৰাষ্ট্ৰৰ লগত যুদ্ধ আদি যিয়ে আৰ্থিক বিকাশৰ গতিক কিছুপৰিমানে হ'লেও মন্থৰ কৰি পেলাইছিল। যাৰবাবে লাহে লাহে আৰ্থিক সমস্যা এক জটিল সন্ধিক্ষনত উপস্থিত হৈছিল আৰু অৱশেষত দেশৰ আৰ্থিক ব্যৱস্থাক সংস্কাৰ সাধন কৰিবলৈ ভাৰত চৰকাৰে গ্ৰহন কৰিছিল 'বিশ্বায়ন' নীতি। বহুতৰ মতে এই সংস্কাৰ বহু আগতেই গ্ৰহন কৰা উচিত আছিল যদিও সেই সংস্কাৰে ভাৰতৰ নিচিনা দৰিদ্ৰ ভৰপূৰ দেশত বৈপ্লৱিক পৰিৱৰ্তন সাধন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। কিন্তু এটা বিশেষফালৰ পৰা মূল্যায়ন কৰিলে 'বিশ্বায়ন' নীতি যেন তাহানিৰ ঔপনিৱেশিক শাসনৰ পুনৰাবৃত্তি আছিল। কিয়নো উদাৰীকৰণ, বেচৰকাৰীকৰণ আৰু বিশ্বায়নৰ যোগেদি দেশৰ সমগ্ৰ আৰ্থিক আৰু বাণিজ্য ব্যৱস্থাটো লাহে লাহে কিছুমান বহুজাতিক সংগঠনৰ নিয়ন্ত্ৰণাধিন হৈ পৰিছিল। তাহানিৰ 'ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানি'ৰ ঠাইত শোষন কৰিবলৈ কিছুমান গ্লোৱাল জায়েন্টৰ আগমন ঘটিছিল। অৱশ্যে ইয়াৰ এটা ধুনীয়া বজাৰুৱা নাম দিয়া হয় 'ব্ৰেণ্ড'। আজিৰ যিকোনো ভাৰতীয়ৰ জীৱন যাপন কিছুমান পাশ্চাত্য 'ব্ৰেণ্ড'ৰ ব্যৱহাৰৰ দ্বাৰা আৱদ্ধ।

সাম্প্ৰতিক ক'ৰ'না ভাইৰাছৰ আক্ৰমণৰ বাবে যেতিয়া সমগ্ৰদেশৰ আৰ্থ-সামাজিক ব্যৱস্থাটো অৱৰুদ্ধ হৈ গৈছিল আৰু মানুহৰ জীৱন নিৰ্বাহত যি অত্যাৱশ্যকীয়তাৰ প্ৰশ্ন আহিছিল তেতিয়া জানো কোনো পাশ্চাত্য 'ব্ৰেণ্ড' আহি সহায় কৰিছিল? আৰ্থিক জৰুৰীকালীন ব্যৱস্থাই যেন আঙুলিয়াই দিছিল যে সাধাৰণ মানুহৰ পাশ্চাত্য 'ব্ৰেণ্ড' মুখিতাই আছিল আৰ্থিক বিকাশৰ আটাতকৈ ডাঙৰ মূৰ্খামি আৰু ভণ্ডামিও। আমাৰ উচিত আছিল 'আঞ্চলিক' উৎপাদন আৰু পৰিসেৱাৰ গোটবোৰক অধিক শক্তিশালী কৰি তুলিবলৈ উৎসাহিত কৰা। আমি বিগত অৱৰুদ্ধতাত যি জীৱন যাপন কৰিছো তাত এনেকুৱা 'আঞ্চলিক' উৎপাদন গোটৰ ভূমিকা আছিল অপৰিসীম। বিপদ কালীন সহায় এই গোটবোৰেই আগুৱাইছিল। বিগত

কিছুমান বছৰ জুৰি গোটেই দেশৰ ভিতৰুৱা গাওঁৰ পৰা একেবাৰে মহানগৰীৰ শ্বপিংমললৈকে ভৰি পৰিছিল বিদেশৰ পৰা আমদানি হোৱা কিছুমান 'ব্ৰেণ্ড' সৰ্বস্য সামগ্ৰী আৰু পৰিসেৱা। যিসকল মানুহ ধনী নাইবা আঢ্যবন্ত তেওঁলোকে নিজৰ বিলাসীতাৰ বাবে কাৰনে অকাৰণে 'ব্ৰেণ্ড' সৰ্বস্য সামগ্ৰী আৰু পৰিসেৱা উপভোগ কৰি এক উচ্চ পৰ্য্যায়ৰ সন্তুষ্টি পাইছে। কিন্তু পৰিস্থিতি বিষম কৰি তুলিছে মধ্যবিত্ত আৰু দুখীয়া পৰিয়ালৰ বিদেশী 'ব্ৰেণ্ড' সৰ্বস্য সামগ্ৰী উপভোগ কৰাৰ মানসিকতাই। যিকোনো মধ্যবিত্ত আৰু দুখীয়া পৰিয়ালৰ আয় হৈছে সীমিত আৰু তেওঁলোকৰ অগ্ৰাধিকাৰ পোৱা ব্যয় শিতান হৈছে 'শিক্ষা', 'স্বাস্থ্য' আৰু 'পুষ্টিকৰ আহাৰ' গ্ৰহন। অথচ বাস্তৱিকতাটো হৈছে ইয়াৰ বিপৰীত ।মধ্যবিত্ত আৰু দুখীয়া মানুহে বৰ্তমান কালত আয়ৰ এটা বৃহৎ অংশক ব্যয় কৰিছে 'ব্ৰেণ্ড' সৰ্বস্য সামগ্ৰী ক্ৰয় কৰিবলৈ যাৰবাবে ক'ৰবাত যেন অপ্ৰাসংগিক হৈ পৰিছে শিক্ষা, স্বাস্থ্য আৰু পুষ্টিকৰ আহাৰ গ্ৰহনৰ প্ৰৱনতা। দুৰ্ভাগ্যৰ কথাটো হ'ল যে গ্লোৱাল ব্ৰেণ্ড উপভোগ কৰি মধ্যবিত্ত নাইবা দুখীয়া পৰিয়ালে আজিলৈকে নিজৰ আৰ্থিক দৈন্য দশাৰ পৰা মুক্তি পোৱা নাই অথচ পকেট ভৰিছে গ্লোৱাল ব্ৰেণ্ডৰ গৰাকীৰ । ইয়াৰ উদাহৰন বহু আছে। মহাবিদ্যালয়ত বিনামূলীয়াকৈ নাম ভৰ্তি কৰাৰ বাবে যেনেতেন এখন 'ইনকাম চাৰ্টিফিকেট' সংগ্ৰহ কৰি আনি নিজক দুখীয়া সজোৱাৰ প্ৰৱনতা খুবেই প্ৰৱল অথচ তেওঁলোকৰ পকেটত থাকে 'ব্ৰেণ্ডড' মোবাইল, পিন্ধনত 'ব্ৰেণ্ড ড' জিনছ, গাত সুৰভি বিলাইছে 'ব্ৰেণ্ড ড' সুগোন্ধি আৰু অহাযোৱাৰ বাবে 'ব্ৰেণ্ড ড' বাইক। অৰ্থাৎ পৰিয়ালে যি আয় কৰিছে তাৰ এটা বৃহৎ অংশ ব্যয় কৰা হৈছে এনেকুৱা বিদেশী 'ব্ৰেণ্ড' ক্ৰয় কৰিবলৈ অথচ কিতাপ এখন ক্ৰয় কৰা নাইবা হষ্টেলৰ বিল দিবলৈ নিজৰ দাৰিদ্ৰতাক যেন 'মাকেটিং' কৰা হৈছে। চিধাকৈ ক'বলৈ গ'লে এনেকুৱা গ্লোৱাল ব্ৰান্ড উপভোগ প্ৰৱনতাই মানুহৰ ব্যক্তিগত পৰ্য্যায়ত যিদৰে কোনো অৱস্থাৰ সলনি নকৰে সেইদৰে ৰাষ্ট্ৰৰ আৰ্থ-সামাজিক বিকাশত অৰিহনা নোযোগায়।

আমাৰ মাজত হয়ত এনেকুৱা হীনমন্যতা আছে যে আমি উৎপাদন কৰা সামগ্ৰীৰ নাইবা পৰিসেৱাৰ কোনো মূল্য নাই। কিন্তু ইয়াৰ গোলকীয় বাস্তৱিকতাটো হৈছে একেবাৰে বিপৰীত। আমাৰ স্থানীয় মেধা আৰু কৌশলেৰে যি সামগ্ৰী আৰু পৰিসেৱা উৎপাদন কৰা হৈছে তাৰ নিশ্চিতভাৱে এক বহল বিশ্ববজাৰ আছে। গাওঁৰ শ্ৰমনিৰ্ভৰ মানুহে নিজৰ হাতেৰে যি সামগ্ৰী উৎপাদন কৰিছে তাৰ বিপণন ব্যৱস্থাটো আধুনিক নোহোৱাৰ বাবেই আমি ক'ৰবাত যেন পিছুৱাই থাকি গৈছো। বৰ্তমান সময়ত অসমৰ বিভিন্ন প্ৰান্তত শ্ৰমজীৱি খেতিয়ক আৰু শ্ৰমিকে অক্লান্ত পৰিশ্ৰম কৰি বিভিন্ন সামগ্ৰী আৰু পৰিসেৱাৰ উৎপাদন কৰিছে যেনে বিভিন্ন কৃষিজাত সামগ্ৰী, গাখীৰ, মাছ , মঙহ, কনী, শাক-পাচলি, ফলমূল, ফুল,বিভিন্ন ধৰনৰ বস্ত্ৰ, সুগোন্ধি, সৌন্দৰ্য্য সামগ্ৰী আদি। আমাৰো আছে নিজস্ব আহাৰ কেন্দ্ৰিক পৰম্পৰা যাক হোটেল-ৰেস্টুৰেন্টত পৰিনত কৰিব পৰা যায়, আছে অতিথি আপ্যায়নৰ পৰম্পৰা, আছে দেশীয় পৰ্য্যটন, আছে শৈক্ষিক পৰম্পৰা (গীত, নৃত্য ,নাটক , কাৰুকলা) আছে দেশীয় আয়ুৰ্বেদিক চিকিৎসা আদি। যদি 'নাই' বুলি কিবা আছে সেয়া হ'ল ইয়াৰ বিপনন প্ৰক্ৰিয়া। সময়ৰ গতিশীলতাত বিশ্বৰ বাণিজ্য বিপননতাৰ প্ৰকৃতি সলনি কৰিছে। কেৱল ধন বিনিয়োগ কৰিলেই যে

আমাৰ মাজত হয়ত এনেকুৱা হীনমন্যতা আছে যে আমি উৎপাদন কৰা সামগ্ৰীৰ নাইবা পৰিসেৱাৰ কোনো মূল্য নাই। কিন্তু ইয়াৰ গোলকীয় বাস্তৱিকতাটো হৈছে একেবাৰে বিপৰীত। আমাৰ স্থানীয় মেধা আৰু কৌশলেৰে যি সামগ্ৰী আৰু পৰিসেৱা উৎপাদন কৰা হৈছে তাৰ নিশ্চিতভাৱে এক বহল বিশ্ববজাৰ আছে।

উদ্যম গঠন কৰিব পাৰি তেনেকুৱা কেতিয়াও নহয় বৰং ইয়াৰ লগত জড়িত হৈ আছে বিপনন কেন্দ্ৰিক আধুনিক চিন্তা চৰ্চা। বিভিন্ন পাত আৰু নুডলছ আদি মিহলাই প্ৰস্তুত কৰা থাইফুড আমি উদৰ পুৰাই খাওঁ অথচ ইয়াতকৈ সুস্বাদু আৰু পুষ্টিকৰ আহাৰ আমাৰ নিজস্ব বহু আছে কেৱল বিপনন কৰিব পৰা নাই বাবে তাৰ বজাৰ মূল্যায়ন নহ'ল। গতিকে ইয়াক আমি আমাৰ হীনমন্যতা নকৈ দুৰ্ভাগ্য কোৱা অধিক সমিচীন। আমি 'হেপ্পী বাৰ্থ ডে টু ইউ' গীত গাই নিজক আধুনিক যুগোপযোগী বুলি গন্য কৰো অথচ বিয়াত 'বিয়া নাম' গালেই বেকওৰ্ৱাডৰ দুৰ্গোন্ধ বিচাৰি পাওঁ। পিৎজাক আকোঁৱালি লওঁ অথচ টেকেলী পিঠাক দলিয়াই পেলাও। সময় আহিছে তথাকথিত গ্লোৱাল ব্ৰেণ্ডবোৰক 'গুডবাই' দি নিজৰ 'আঞ্চলিক' উদ্যমক গ্লোৱাল ব্ৰেণ্ডলৈ ৰূপান্তৰ কৰা। উল্লেখ কৰিব পাৰি যে আজিৰ দিনত কিছুমান গ্লোৱাল জায়েন্ট 'ব্ৰেণ্ড'ৰ অংকুৰণ আছিল একেবাৰে সৰু আকাৰত আৰু এখন সৰু অঞ্চলত। কিন্তু আধুনিক বিপনন ব্যৱস্থা, বিনিয়োগ আৰু এক সংগ্ৰামৰ জৰিয়তে সেইবোৰ 'ব্ৰেণ্ড' গোটেই বিশ্বলৈ সম্প্ৰসাৰিত হৈছে।

বজাৰ মানেই চাহিদ আৰু যোগানৰ খেল-ধেমালি। ইংৰাজীত এটা প্ৰবাদ বাক্য আছে 'চেৰাইটি বিগিন্স এট হোম'; অসমৰ আঞ্চলিক সামগ্ৰী আৰু পৰিসেৱাবোৰৰ বিপননৰ ক্ষেত্ৰত ইয়াক ব্যৱহাৰ কৰিব পাৰি। আঞ্চলিক উদ্যমৰ দ্বাৰা উৎপাদিত সামগ্ৰীবোৰক বিশ্ব বজাৰত প্ৰক্ষেপ কৰিবলৈ যোৱাৰ আগত প্ৰয়োজন আমাৰ স্থানীয় বজাৰত ইয়াৰ যোগানক সুনিশ্চিত কৰা আৰু ইয়াৰ চাহিদা কৰা। আধুনিক বজাৰত যি ঘটিছে সেয়া খুবেই মৰ্মান্তিক — আমি নিজক আধুনিক জাতত প্ৰতিষ্ঠিত কৰিবলৈ নিজৰ অঞ্চলৰ উৎপাদিত সামগ্ৰীবোৰক ধাৰাবাহিক ভাৱে উপেক্ষিত কৰিছো। আৰু আকোৱালি লৈছো কিছুমান চিকমিকীয়া ক্ষনস্থায়ী বিদেশী সামগ্ৰী। এনেকুৱা বিবেকহীন পছন্দই নিজৰ সমাজৰ পৰা দাৰিদ্ৰতা, নিবনুৱা সমস্যা নাইবা মহিলা স্বৱলীকৰনৰ দৰে বিষয়বোৰক কেতিয়াও সাৰ-পানী দিব নোৱাৰিব আৰু তেনেকুৱা ক্ষেত্ৰত 'আত্ম নিৰ্ভশীলতা' আকাশৰ জোনবাইৰ দৰেই হৈ থাকিব। সাম্প্ৰতিক ক'ৰ'না ভাইৰাছৰ আক্ৰমণৰ বাবে আমাৰ অৰ্থনীতিৰ ব্যাপক ক্ষতি হৈছে কিন্তু এই ক্ষতিয়ে এটা নতুন দিশৰ সন্ধান হয়ত দি যাব আৰু সেয়া হৈছে নিজক স্বাৱলম্বি কৰাৰ প্ৰয়াস। ইতিমধ্যে দেশৰ প্ৰধানমন্ত্ৰীয়ে আমাক আত্মনিৰ্ভৰশীল ভাৰত গঢ়ি তুলিবলৈ উৎসাহিত কৰিছে।

সৰু আৰু মজলীয়া উদ্যমবোৰৰ পুনৰুত্থানৰ বাবে কেৱল মাথোন চৰকাৰী ব্যৱস্থা যথেষ্ট নহ'ব, কিয়নো উৎপাদিত সামগ্ৰী বজাৰত অহাৰ পিছত ইয়াক চাহিদা কৰাৰ দায়িত্ব সাধাৰন ৰাইজৰ। সেইক্ষেত্ৰত আমাৰ আচৰনৰ সংশোধন কৰাটো খুবেই প্ৰয়োজনীয়। 'স্মল ইজ বিউটিফুল' এই কথাখিনিৰ মৰ্মাথক বাস্তৱত ৰূপায়ন কৰা উচিত আঞ্চলিক সৰু আৰু মজলীয়া স্থানীয় উদ্যমবোৰৰ বিকাশৰ জৰিয়তে। মহাভাৰতৰ কুৰুক্ষেত্ৰ যুদ্ধৰ আৰম্ভনীৰ আগতে এক গুৰুত্বপূৰ্ণ পৰ্ব আছিল 'অজ্ঞাতবাস' আৰু ক'ৰোনা ভাইৰাছৰ আক্ৰমণ জনিত লক ডাউনে আমাক সেই অজ্ঞাতবাসৰ অভিজ্ঞকতাক যেন স্পষ্ট কৰি বুজাই দিলে। এখন মন্দামুখী অৰ্থনীতিক আকৌ এবাৰ স্বকীয় গতিত উভতাই আনিবলৈ নিশ্চিতভাৱে এক যুদ্ধত অৱতীৰ্ন হ'ব লাগিব আৰু সেই যুদ্ধখনেই হয়ত স্বদেশক এক আত্মনিৰ্ভৰশীল ৰাষ্ট্ৰ হিচাপে প্ৰতিষ্ঠিত কৰিব। ❑

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 4000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का पालन करना चाहिए।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल हो सकते हैं।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना चाहिए।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटिकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : ....

पदनाम : ....

पूरा पता : ....

: ....

ई-मेल : .... मोबाइल : ....

RTGS का विवरण : ....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत		*संस्थागत*	
प्रति अंक	: रु. 50/-	प्रति अंक	: रु. 100/-
वार्षिक	: रु. 550/-	वार्षिक	: रु. 1,000/-
दो वर्षों के लिए	: रु. 1,000/-	दो वर्षों के लिए	: रु. 2,000/-
पाँच वर्षों के लिए	: रु. 2,500/-	पाँच वर्षों के लिए	: रु. 4,500/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-		

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary : Asom Rastrabhasha Prachar Samiti
A/c No. : 0853010182614
Name of Bank & Branch : Punjab National Bank, G.S. Road
IFS Code : PUNB0085320

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

समिति द्वारा आयोजित परिचय से प्रवीण तक परीक्षा कार्यक्रम, जुलाई–2022

तारीख व वार	समय (सुबह : 9.00 से 12.00 बजे तक)	समय (शाम : 1.00 से 4.00 बजे तक)
31.07.2022 रविवार	परिचय प्रवेशिका : पहला परचा प्रबोध : पहला परचा विशारद : पहला परचा प्रवीण : पहला परचा	प्रवेशिका : दूसरा परचा प्रबोध : दूसरा परचा विशारद : दूसरा परचा प्रवीण : चौथा परचा
06.08.2022 शनिवार	X	प्रवीण : सातवाँ परचा मौखिक/मौखिक के बदले (लिखित)
07.08.2022 रविवार	प्रथमा : पहला परचा प्रवेशिका : तीसरा परचा प्रबोध : तीसरा परचा (असमीया विशेष, असमीया साधारण, बांग्ला विशेष, बड़ो विशेष, मिजो विशेष, मणिपुरी विशेष) विशारद : तीसरा परचा प्रवीण : दूसरा परचा	प्रथमा : दूसरा परचा प्रबोध : चौथा परचा – मौखिक विशारद : चौथा परचा प्रवीण : पाँचवाँ परचा
14.08.2022 रविवार	विशारद : पाँचवाँ परचा (अनिवार्य) भारतवर्ष का इतिहास/नागरिक शास्त्र/भारतीय स्वतंत्रता का इतिहास प्रवीण : तीसरा परचा	विशारद : छठा परचा (ऐच्छिक) असमीया विशेष/असमीया साधारण/बांग्ला विशेष/बड़ो विशेष/मिजो विशेष प्रवीण : छठा परचा (अनिवार्य) असमीया विशेष/असमीया साधारण/बांग्ला विशेष/मणिपुरी विशेष/बड़ो विशेष/मिजो विशेष

POSTAL REGISTRATION NO. GHY/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 30th June, 2022 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

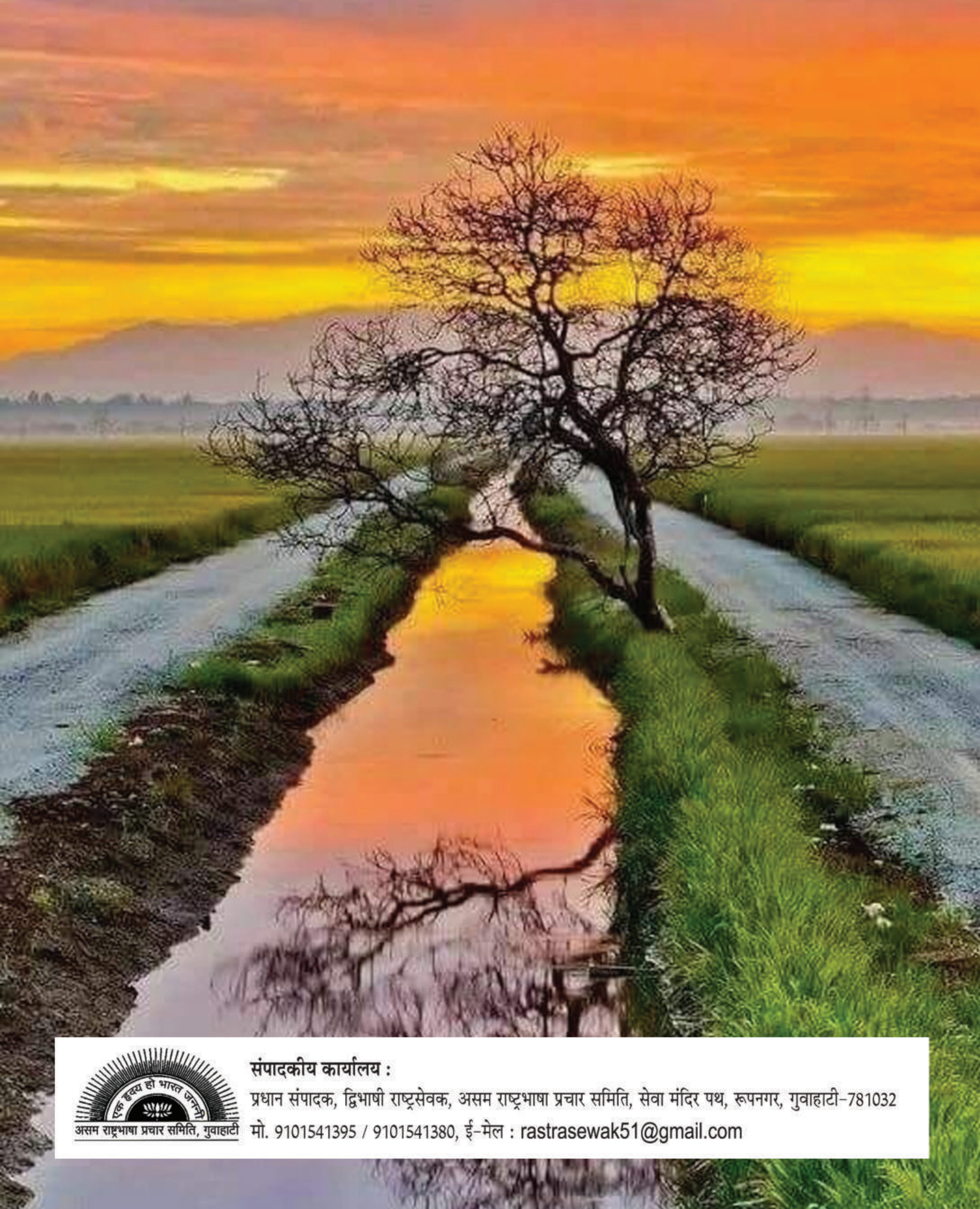

एक हृदय हो भारत जननी
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032
मो. 9101541395 / 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com